उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

अप्रैल-जून, 2015

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अमृतलाल लीलाधर भाई कोटक और अन्य **बनाम** गुजरात राज्य	79
एम. नारायण **बनाम** कर्नाटक राज्य	174
चिंटू सिंह **बनाम** बिहार राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 224)	
जनरल मोटर्स (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड **बनाम** अशोक रामनाइक लाल तोलत और एक अन्य	1
टी. वसंतकुमार **बनाम** विजयकुमारी	193
तेजराम पाटिल **बनाम** महाराष्ट्र राज्य	90
दासिन बाई **उर्फ** शांति बाई **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य	35
देवेश अग्निहोत्री **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 126)	
धीरेन्द्र कुमार **उर्फ** धीरू **बनाम** उत्तराखंड राज्य	109
नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे **बनाम** महाराष्ट्र राज्य	65
नागराजा राव **बनाम** केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो	23
पंडित **उर्फ** संजय महतो आदि **बनाम** बिहार राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 224)	
पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य	126
पुलिस निरीक्षक और अन्य **बनाम** बट्टेनपाटला वेंकट रतनम और एक अन्य	167
बदरु राम **बनाम** राजस्थान राज्य	117
भीम सिंह और एक अन्य **बनाम** उत्तराखंड राज्य	45

मुन्ना लाल जैन और एक अन्य **बनाम** विपीन कुमार शर्मा और अन्य 216

रंजीत कुमार राम **उर्फ** रंजीत कुमार दास **बनाम** बिहार राज्य 224

रघुवेन्द्र **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य 17

राकेश आनंद और एक अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 126)

राजेश वर्मा **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 126)

लक्ष्मी **बनाम** भारत संघ 158

शिवकेश गिरी **उर्फ** लाला **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 126)

हरियाणा राज्य **बनाम** आशा देवी और एक अन्य 201

संसद् के अधिनियम

लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (15) – (28)

अप्रैल-जून, 2015 [संयुक्तांक]

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
अनूप कुमार वार्ष्णेय

संपादक
डा. एम. सी. पांडेय

महत्वपूर्ण निर्णय

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 357ग] – प्रतिकर स्कीम – ऐसिड आक्रमण का पीड़ित सरकारी और प्राइवेट अस्पतालों से निःशुल्क चिकित्सीय उपचार, अनुरक्षण, दवा, भोजन, बिस्तरा और पुनर्रचित शल्य चिकित्सा प्राप्त करने का हकदार है तथा वह न्यूनतम 3,00,000/- रुपए (तीन लाख रुपए केवल) का प्रतिकर राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र सरकार से पाने का भी हकदार है ।

लक्ष्मी बनाम **भारत संघ** 158

संसद् के अधिनियम

लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (15) – (28)

पृष्ठ संख्या 1 – 244 **[2015] 2 उम. नि. प.**

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका – अप्रैल-जून, 2015 [संयुक्तांक] [पृष्ठ संख्या 1 – 244]

संपादक-मंडल

डा. संजय सिंह,
सचिव, विधायी विभाग

श्री के. बिस्वाल, संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. बी. एन. मणि,
सेवानिवृत्त अपर विधि सलाहकार,
विधि मंत्रालय

प्रो. डा. वैभव गोयल,
सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ
विधि विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

डा. ऋषिपाल सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं विधायी परामर्शी, राजभाषा खंड

श्री लालजी प्रसाद,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक, वि.सा.प्र.

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनूप कुमार वार्ष्णेय,
प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
संपादक

श्री विनोद कुमार आर्य,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री कमला कान्त, अविनाश शुक्ला, असलम खान, पुण्डरीक शर्मा और जगमाल सिंह

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 57

वार्षिक : ₹ 225

© 2015 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ पाठकों की सुविधा के लिए शृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रय के लिए उपलब्ध विधि पाठ्य पुस्तकों की सूची

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	कीमत (₹)
1.	भारत का विधिक इतिहास	श्री सुरेन्द्र मधुकर	410	30.00
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि	डा. एन. पी. परांजपे	371	40.00
3.	वाणिज्य विधि	डा. आर. एल. भट्ट	630	108.00
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (तृतीय संस्करण)	श्री शर्मन लाल अग्रवाल	357	40.00
5.	अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. सी. खरे	273	115.00
6.	मानव अधिकार	डा. शिवदत्त शर्मा	340	120.00
7.	दण्ड प्रक्रिया संहिता	न्या. महावीर सिंह	840	200.00

पुस्तकों की सूची जिन पर छूट देने की स्वीकृति प्राप्त की गई है ।

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल दर (₹)	संशोधित दर (₹)
1.	संविदा विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रामगोपाल चतुर्वेदी	552	275.00	137.00
2.	श्रम विधि (तृतीय संस्करण)	श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा	658	452.00	226.00
3.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान (तृतीय संस्करण)	डा. सी. के. पारिख अनुवादक डा. एन. के. पटौरिया	969	293.00	146.00
4.	आधुनिक पारिवारिक विधि	श्री राम शरण माथुर	767	429.00	214.00
5.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय)	संकलन संपादन – ब्रह्मदेव चौबे	209	225.00	112.00
6.	हिन्दू विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रवीन्द्र नाथ	617	425.00	212.00
7.	भारतीय दंड संहिता	डा. रवीन्द्र नाथ	696	741.00	370.00
8.	भारतीय भागीदारी अधिनियम (द्वितीय संस्करण)	श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ	272	165.00	82.00
9.	प्रशासनिक विधि (तृतीय संस्करण)	डा. कैलाश चन्द्र जोशी	635	200.00	100.00
10.	विधिक उपचार (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. के. कपूर	414	311.00	155.00
11.	विधि शास्त्र	डा. शिवदत्त शर्मा	501	580.00	377.00

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (1986 का 68)

– धारा 2(1)(द) – अनुचित व्यापार व्यवहार – दंडात्मक नुकसानी – अनुचित व्यापार व्यवहार का मात्र साबित किया जाना अनुतोष के दावे या अधिनिर्णय के लिए तब तक पर्याप्त नहीं है जब तक वास्तविक हानि का कारित होना सिद्ध नहीं किया जाता है, अतः, दंडात्मक नुकसानी का अधिनिर्णय उचित प्रक्रिया और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल है ।

जनरल मोटर्स (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड बनाम **अशोक रामनाइक लाल तोलत और एक अन्य** 1

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 31 – एक ही विचारण में कई अपराधों के लिए दोषसिद्ध होने के मामलों में दंडादेश – अभियुक्त को एक ही विचारण में भारतीय दंड संहिता और भारतीय डाकघर अधिनियम के अधीन किए गए अपराधों के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – दोनों दंडादेशों को साथ-साथ या क्रमवर्ती चलने का उल्लेख न किया जाना – दंडादेश अधिनिर्णीत करते समय प्रथम बार के न्यायालय के लिए यह वैध रूप से आबद्धकर है कि दोषसिद्धि के आदेश में स्पष्ट शब्दों में यह विनिर्दिष्ट करे कि अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश "साथ-साथ" चलेंगे या वे "क्रमवर्ती" चलेंगे ।

नागराजा राव बनाम **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** 23

– धारा 31 [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 381 और भारतीय डाकघर अधिनियम, 1898 की धारा 52] – एक ही विचारण में कई अपराधों के लिए दोषसिद्ध होने के मामलों में दंडादेश – अभियुक्त को

पृष्ठ संख्या

एक ही विचारण में दो अधिनियमों के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – दंडादेशों को "साथ-साथ" या "क्रमवर्ती" चलने का उल्लेख न किया जाना – विधि के स्थिर सिद्धांतों, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया जाना उचित है और इससे न्याय की पूर्ति हो जाएगी ।

नागराजा राव बनाम **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** 23

– धारा 197 – लोक सेवकों का अभियोजन – पूर्व मंजूरी – इस धारा का उद्देश्य लोक सेवकों की विद्वेषपूर्ण और तंग करने वाले अभियोजन से संरक्षा करना है और इसे भ्रष्ट पदधारियों की संरक्षा करने के लिए कवच के रूप में नहीं माना जा सकता है ।

पुलिस निरीक्षक और अन्य बनाम **बट्टेनपाटला वेंकट रतनम और एक अन्य** 167

– धारा 197 [सपठित दंड संहिता, 1860 की धारा 420, 463, 477 और 120ख/109] – लोक सेवकों का अभियोजन – पूर्व मंजूरी – प्रत्यर्थियों द्वारा उप-रजिस्ट्रार के रूप में कार्य करते हुए अभिलेखों को गढ़ना, छल और दुर्विनियोग किया जाना – लोक सेवकों द्वारा अपने पदीय कर्तव्य का निर्वहन करते हुए आपराधिक षड्यंत्र करना, अभिलेख गढ़ना और दुर्विनियोग करना उनके पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में किया गया कार्य नहीं माना जा सकता है, अतः पूर्व मंजूरी के अभाव में उच्च न्यायालय द्वारा कार्यवाहियों को अभिखंडित करके उचित नहीं किया गया है ।

पुलिस निरीक्षक और अन्य बनाम **बट्टेनपाटला वेंकट रतनम और एक अन्य** 167

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 3 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 32] – हत्या – मृत्युकालिक कथन – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य

पृष्ठ संख्या

से यह साबित होता है कि अभियुक्त ने मृतक पर मिट्टी का तेल छिड़का तथा माचिस की तीली से आग लगा दी तथा मृतक ने अपने मृत्युकालिक कथन में यह बताया कि अभियुक्त द्वारा उपरोक्त अपराध किया गया वहां मृत्युकालिक कथन में कोई खामी न होने और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्यों में कोई असंगतता न होने के कारण दोषसिद्ध ठहराए जाने का दायी है ।

दासिन बाई उर्फ **शान्ति बाई** बनाम **छत्तीसगढ़ राज्य** 35

– धारा 34 और 302 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – अभिलेख पर इस संबंध में साक्ष्य होना कि अभियुक्त-अपीलार्थी मृतक के निवास पर रात भर रुके थे तथा मृतक के साथ प्रातःकाल अंतिम बार देखे गए थे – अभियुक्त-अपीलार्थी तथा उसके साथी अभियुक्त के पास से मृतक की वस्तुओं की बरामदगी होना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों की दोषसिद्धि के निर्णय में हस्तक्षेप किए जाने की आवश्यकता नहीं है ।

रघुवेन्द्र बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 17

– धारा 300 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – हेतु – इंडियन आयल कारपोरेशन के विक्रय अधिकारी (मृतक) द्वारा अभियुक्त के पेट्रोल पम्प का निरीक्षण – अनियमितताएं पाए जाने पर पेट्रोल पम्प को सीलबंद किया जाना और जुर्माने का संदाय करने पर विक्रय और आपूर्ति प्रत्यावर्तित किया जाना – मृतक द्वारा घटना की तारीख को पुनः निरीक्षण के लिए पेट्रोल पम्प पर जाना – अनियमितताएं पाए जाने पर अनुज्ञप्ति रद्द होने की आशंका के कारण पेट्रोल पम्प के मालिक-अभियुक्त द्वारा अन्य अभियुक्तों की सहायता से मृतक की निर्ममतापूर्वक हत्या – अभियुक्तों के बताने पर अपराध में आलिप्त करने वाली सामग्री बरामद होना – अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्तों की सांठगांठ और अपराध

पृष्ठ संख्या

कारित करने में उनकी संलिप्तता को सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किए जाने और घटनाओं की शृंखला पूर्ण होने पर निचले न्यायालयों द्वारा की गई उनकी दोषसिद्धि और दिए गए दंडादेश में किसी प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

पवन कुमार उर्फ **मोनू मित्तल** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** 126

– धारा 302 और धारा 149 – हत्या – सामान्य उद्देश्य – अचानक प्रकोपन – मामले के दो क्षतिग्रस्त प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य और समग्र परिस्थितियों से यह स्पष्ट है कि घटना अचानक प्रकोपन से नहीं हुई और घटना के पीछे किसी आशय या हेतुक का अभाव था बल्कि उक्त हत्या सामान्य उद्देश्य के अग्रसरण में सोच-समझकर कारित की गई, अतः अभियुक्त हत्या के अपराध से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किए जाने के दायी हैं ।

बदरु राम बनाम **राजस्थान राज्य** 117

– धारा 302 – हत्या – पुरानी शत्रुता – मृतक के नाजुक अंगों पर घातक क्षतियां – पत्थर का हथियार के रूप में बलपूर्वक प्रयोग – अचानक प्रकोपन के आधार पर अपीलार्थी द्वारा हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अपराध का अभिवाक् किया जाना – शवपरीक्षण रिपोर्ट के अनुसार अपीलार्थी द्वारा मृतक पर पत्थर से बलपूर्वक वार किया गया जिससे उसका क्रूर और असाधारण रीति में कृत्य करना साबित होता है, साथ ही अपीलार्थी की मृतक के साथ चली आ रही पुरानी शत्रुता से उसका मृत्यु कारित करने का आशय भी स्पष्ट हो जाता है, ऐसी स्थिति में अपीलार्थी के दोषसिद्धि के आदेश में हस्तक्षेप करना अनुचित होगा और अपीलार्थी हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध

पृष्ठ संख्या

के अपराध का नहीं अपितु हत्या का दोषी होगा ।

धीरेन्द्र कुमार उर्फ **धीरू** बनाम **उत्तराखंड राज्य** 109

– धारा 304ख और 498क [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4] – दहेज मृत्यु – अभियुक्त-अपीलार्थियों का विवाह से पूर्व दहेज की कोई मांग न किए जाने का अभिवाक् – मृतका के भाई द्वारा इस अभिवाक् को स्वीकार किया जाना – दहेज की मांग किसी भी समय की जा सकती है अर्थात् विवाह से पूर्व, विवाह के समय और विवाह के पश्चात् और यह मांग आवश्यक रूप से विवाह के पूर्व ही की जानी आवश्यक नहीं है ।

भीम सिंह और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य** 45

– धारा 304ख और 498क [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख और 113क] – दहेज मृत्यु – अभियुक्त-अपीलार्थियों का अभिवाक् कि मृतका ने विष खाकर आत्महत्या की और उसके पश्चात् स्वयं को आग लगा ली – यदि इसे आत्महत्या का मामला मान भी लिया जाए, तो भी साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क के अधीन यह साबित करने का भार अभियुक्तों पर था कि उन्होंने मृतका को आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित नहीं किया, और अभियुक्तों द्वारा धारा 113क और धारा 113ख के अधीन उपधारणाओं का खंडन न किए जाने पर उनकी दोषसिद्धि और दंडादेश उचित हैं ।

भीम सिंह और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य** 45

– धारा 304ख और 498क [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113क और 113ख] – दहेज मृत्यु – पारिस्थितिक साक्ष्य – अभियोजन पक्ष द्वारा

पृष्ठ संख्या

प्रस्तुत की गई परिस्थितियों की शृंखला अटूट है, इसलिए अभियुक्त-अपीलार्थियों की दोषसिद्धि और दंडादेश उचित हैं ।

भीम सिंह और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य** 45

– धारा 464क, 302/34, 120ख और 201 – फिरौती के लिए व्यपहरण और हत्या – अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध करने पर कि मृतक लड़के को अंतिम बार अभियुक्त सं. 3 और अभियुक्त सं. 5 के साथ देखा गया था और अभियुक्तों द्वारा यह स्पष्टीकरण नहीं देने पर कि कैसे और कब वे मृतक बालक के सहचर्य से अलग हुए थे, उनके विरुद्ध यह एक ठोस प्रतिकूल परिस्थिति है और निचले न्यायालयों ने इन अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके ठीक किया है ।

रंजीत कुमार राम उर्फ **रंजीत कुमार दास** बनाम **बिहार राज्य** 224

– धारा 464क और 302/34 – फिरौती के लिए व्यपहरण और हत्या – सामान्य आशय – सामान्य आशय का प्रत्यक्ष साक्ष्य यदाकदा ही उपलब्ध होता है और अभियुक्तों के ऐसे सामान्य आशय का निष्कर्ष केवल साक्ष्य और मामले के साबित तथ्यों से प्रतीत होने वाली परिस्थितियों से निकाला जा सकता है और क्योंकि अभियुक्त सं. 1 फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए इत्तिलाकर्ता को व्यपहरणकर्ताओं से ऐसी कोई मांग करने से पूर्व ही उत्प्रेरित कर रहा था, इसलिए उसका मृतक लड़के का व्यपहरण करने और हत्या कारित करने का सामान्य आशय था और इसलिए उसे ठीक ही दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है ।

रंजीत कुमार राम उर्फ **रंजीत कुमार दास** बनाम **बिहार राज्य** 224

पृष्ठ संख्या

– धारा 498क और 304ख [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3, 4 और 6 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113क और 113ख] – क्रूरता – दहेज मृत्यु – अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा की गई दहेज की मांग और क्रूरता से परेशान होकर मृतका द्वारा आत्महत्या – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषमुक्त किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति को उलटा जाना – तात्विक साक्षियों के परिसाक्ष्य से युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित होने पर कि मृतका को विवाह के कुछ माह पश्चात् से निरंतर इतना तंग किया गया, उस पर हमला किया गया और उसे अभित्रस्त किया गया कि उसने असहनीय क्रूरता सहन करने में असमर्थ होने पर अपने जीवन का अंत करने का आखिरी कदम उठाया, अतः अभियोजन पक्ष आरोपों के संबंध में अपीलार्थी की दोषिता को किसी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में सफल रहा है इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा की गई उसकी दोषसिद्धि और दिया गया दंडादेश उचित है ।

एम. नारायण बनाम **कर्नाटक राज्य** 174

– धारा 498, 304ख और 306 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 113ख] – दहेज मृत्यु – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा साक्षियों के कथन से यह साबित होता है कि दहेज की मांग की गई, मृतका को मानसिक रूप से तंग किया गया, मृतका की मृत्यु विवाह के सात वर्ष के भीतर हुई अतः, न्यायालय यह उपधारित कर सकेगा कि ऐसी आत्महत्या का दुष्प्रेरण उसके पति या उसके पति के नातेदार द्वारा किया गया, इस प्रकार अभियुक्त धारा 498क, 304ख और 306 के अधीन दोषसिद्ध ठहराए जाने के दायी हैं ।

अमृतलाल लीलाधर भाई कोटक और अन्य बनाम **गुजरात राज्य** 79

पृष्ठ संख्या

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (1881 का 26)

– धारा 138 और 139 – चैक का अनादरण – उपधारणा – अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा चैक जारी किए जाने और उस पर उसके हस्ताक्षर होने को विवादग्रस्त न किए जाने पर विधिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण की उपधारणा शिकायतकर्ता के पक्ष में प्रवर्तित होती है और इसे नासाबित करने का भार अभियुक्त-प्रत्यर्थी पर था, अतः चैक वर्ष 1999 में लिए गए एक ऋण की प्रतिभूति के रूप में जारी किए जाने और ऋण का संदाय करने के उपरांत चैक वापस नहीं लौटाए जाने का उसका अभिवाक् अविश्वसनीय और साक्ष्य रहित है ।

टी. वसंतकुमार बनाम **विजयकुमारी** 193

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49)

– धारा 7, 13(1)(घ), 13(2) और 20 – अवैध परितोषण – उपधारणा – अभियुक्त द्वारा साधारण भविष्य निधि और पेंशन कागजातों के निपटान के लिए अवैध परितोषण की मांग किया जाना – शिकायतकर्ता की शिकायत के आधार पर भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो के छापामार दल द्वारा अभियुक्त को रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा जाना – शिकायतकर्ता द्वारा मुख्य परीक्षा में रिश्वत के संदाय और नोटों की बरामदगी के बारे में कथन किया जाना – प्रतिपरीक्षा में रिश्वत की मांग न करने का कथन किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को युक्तियुक्त संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति को उलटा जाना – अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ नहीं हो पर कि यदि रिश्वत की मांग नहीं की गई थी तो शिकायत क्यों की गई तथा शिकायतकर्ता द्वारा मुख्य ने परीक्षा में किए गए कथन की संपुष्टि अन्य साक्षियों के

पृष्ठ संख्या

कथनों से होने पर उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त की दोषमुक्ति के निष्कर्ष को उलटकर उसे दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके ठीक ही किया है ।

नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 65

मोटरयान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– प्रतिकर की संगणना – मोटर दुर्घटना में हुई 30 वर्ष के युवक की मृत्यु के मामले में उसके माता-पिता द्वारा व्यक्तिगत और जीवन खर्च, आश्रिता की हानि और भावी संभावना के आधार पर प्रतिकर की मांग की दशा में प्रतिकर की संगणना व्यक्तिगत और जीवन खर्च के प्रति 50% की कटौती तथा 26 से 30 वर्ष के बीच मृतक की आयु होने पर गुणक की संख्या 17 होनी चाहिए ।

मुन्ना लाल जैन और एक अन्य बनाम **विपीन कुमार शर्मा और अन्य** 216

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 21 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 357ग] – प्रतिकर स्कीम – ऐसिड आक्रमण का पीड़ित सरकारी और प्राइवेट अस्पतालों से निःशुल्क चिकित्सीय उपचार, अनुरक्षण, दवा, भोजन, बिस्तरा और पुनर्रचित शल्य चिकित्सा प्राप्त करने का हकदार है तथा वह न्यूनतम 3,00,000/- रुपए (तीन लाख रुपए केवल) का प्रतिकर राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र सरकार से पाने का भी हकदार है ।

लक्ष्मी बनाम **भारत संघ** 158

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 25 और 27 – अभियुक्तों द्वारा पुलिस को की गई संस्वीकृति – ग्राह्यता – पुलिस गश्ती दल द्वारा अभियुक्तों को अपनी कार में मृतक का शव ले जाते हुए

पृष्ठ संख्या

पकड़ा जाना – उनके संस्वीकृति कथन के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना और उनके बताने पर अन्य अभियुक्तों और अपराध में आलिप्त करने वाली विभिन्न सामग्री की बरामदगी होना – निर्दोषिता को साबित करने के लिए कोई स्पष्टीकरण न दिया जाना – अपराध में अंतर्ग्रस्तता सिद्ध होने पर दोषसिद्ध किया जाना – विधि का यह स्थिर सिद्धांत है कि अभियुक्त द्वारा पुलिस के समक्ष किए गए कथन, जो संस्वीकृति की कोटि में आते हैं धारा 25 के अधीन वर्जित हैं तथापि, धारा 27 के अधीन कुछ सीमा तक इस वर्जना को हटाया गया है और अभियुक्तों द्वारा दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप पता चले तथ्यों के बारे में स्पष्टीकरण न देने के कारण धारा 25 का आश्रय नहीं ले सकते हैं और निचले न्यायालयों द्वारा की गई उनकी दोषसिद्धि उचित है ।

पवन कुमार उर्फ **मोनू मित्तल** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** 126

– धारा 27 – संस्वीकृति कथन – संस्वीकृति कथन के आधार पर किसी तथ्य का प्रकटन न होना और केवल मृतक लड़के का शव पड़ा होने के स्थल का प्रकटन होना – ग्राह्यता – निस्संदेह, इस कथन से किसी ऐसे तथ्य का प्रकटन नहीं हुआ था, जो धारा 27 के अधीन ग्राह्य हो किंतु यदि अभियुक्तों से कोई कथन अभिलिखित नहीं किया जाता, तो मृतक लड़के का शव पड़ा होने का स्थल अज्ञात रहा होता, हालांकि, अन्वेषक अधिकारी को अभियुक्तों से अभिलिखित किए गए कथन के आधार पर उन्हें अभिकथित घटनास्थल पर न ले जाना चाहिए था और यह अन्वेषण में की एकमात्र खामी है, तो भी इस आधार पर अभियोजन के वृत्तांत पर, जोकि अन्यथा तर्कपूर्ण और विश्वसनीय है, संदेह नहीं किया जा सकता है ।

रंजीत कुमार राम उर्फ **रंजीत कुमार दास** बनाम **बिहार राज्य** 224

पृष्ठ संख्या

– धारा 32(1) – मृत्युकालिक कथन – अभियुक्त द्वारा अपनी पत्नी (मृतका) पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाया जाना – मृतका को शत-प्रतिशत दाह क्षतियां पहुंचना – पुलिस अधिकारी द्वारा अस्पताल में मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जाना – कथन अभिलिखित करने से पूर्व उसके कथन करने के लिए समर्थ होने की बाबत डाक्टर की राय अभिप्राप्त न किया जाना – कथन पर कथनकर्ता के हस्ताक्षर/अंगूठे का चिह्न न होना – कथन की विश्वसनीयता – अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कोई सामग्री न होने पर कि मृतका कथन करने के लिए ठीक मानसिक हालत में थी, ऐसे कथन को विश्वसनीय मानकर उसका अवलंब नहीं लिया जा सकता है ।

तेजराम पाटिल बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 90

– धारा 32(1) – मृत्युकालिक कथन – अभियुक्त द्वारा अपनी पत्नी (मृतका) पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाया जाना – मृतका की माता द्वारा बीच-बचाव करने पर उसे भी दाह क्षतियां पहुंचना – उसके द्वारा मृत्युकालिक कथन किया जाना – अन्य व्यक्ति (मृतका) की मृत्यु की बाबत उक्त कथन की ग्राह्यता – मृत्युकालिक कथन न केवल कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु के कारण के संबंध में और उस संव्यवहार की परिस्थितियों के संबंध में ग्राह्य है जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, अपितु यदि उक्त संव्यवहार की परिस्थितियों का अन्य व्यक्ति की मृत्यु से भी संबंध है, तो ऐसा कथन तब अग्राह्य नहीं ठहराया जा सकता है जब उसकी मृत्यु की परिस्थितियां उस अन्य व्यक्ति की मृत्यु की परिस्थितियों से अभिन्न रूप से संबद्ध हों, अतः उक्त मृत्युकालिक कथन के आधार पर की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि उचित है ।

तेजराम पाटिल बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 90

पृष्ठ संख्या

– धारा 113ख और 113क [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 304ख और 498क] – दहेज मृत्यु की उपधारणा – अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा मृतका को कम दहेज लाने के लिए ताने मारना और यातना दिया जाना – मृतका द्वारा अपने माता-पिता को दो अवसरों पर इसकी शिकायत किया जाना – विवाह के पांच माह के भीतर मृतका की मृत्यु हो जाना – उक्त घटनाएं मृतका की मृत्यु के कुछ पूर्व घटित हुई थीं और उसकी मृत्यु सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हुई थी, इसलिए धारा 113ख के अधीन दहेज मृत्यु की उपधारणा उद्‌भूत होती है ।

भीम सिंह और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य** 45

स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का 61)

– धारा 20(i) – विनिषिद्ध पदार्थ कब्जे में पाया जाना – पुलिस दल द्वारा गुप्त सूचना के आधार पर अभियुक्त-प्रत्यर्थियों के मकान पर छापा मारा जाना – एक अभियुक्त का बचकर भाग जाना – मकान की तलाशी लेने पर "गांजा" प्राप्त होना – स्वतंत्र साक्षी का तलाशी में सम्मिलित न होना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियोजन के वृत्तांत को अविश्वसनीय और संदेहास्पद मानकर अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा राज्य द्वारा फाइल की गई अपील खारिज किया जाना – निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष कल्पना और अटकलबाजी पर आधारित होने के कारण उन्हें कायम नहीं रखा जा सकता है और अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करना उचित होगा ।

हरियाणा राज्य बनाम **आशा देवी और एक अन्य** 201

———

तुलनात्मक सारणी

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

[2015] 2 उम. नि. प.

अप्रैल-जून, 2015

क्र. सं.	निर्णय का नाम व तारीख	उम. नि. प.		ए. आई. आर. (एस. सी.)		एस. सी. सी.	
1	2	3		4		5	
1.	जनरल मोटर्स (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड **बनाम** अशोक रामनाइक लाल तोलत और एक अन्य (9.10.2014)	[2015] 2	1	2015	562	(2015) 1	429
2.	रघुवेन्द्र **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य (7.1.2015)		17		704	2	259
3.	नागराजा राव **बनाम** केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो (16.1.2015)		23		-	4	302
4.	दासिन बाई **उर्फ** शांति बाई **बनाम** छत्तीसगढ़ राज्य (11.2.2015)		35		-	4	186
5.	भीम सिंह और एक अन्य **बनाम** उत्तराखंड राज्य (11.2.2105)		45		-	4	281

1	2	3	4		5	
6.	नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (13.2.2015)	[2015] 2	65	2015	–	(2015) –
7.	अमृतलाल लीलाधर भाई कोटक और अन्य **बनाम** गुजरात राज्य (26.2.2015)		79	1355	4	452
8.	तेजराम पाटिल **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (26.2.2015)		90	–		–
9.	धीरेन्द्र कुमार **उर्फ** धीरू **बनाम** उत्तराखंड राज्य (26.2.2015)		109	–		–
10.	बदरु राम **बनाम** राजस्थान राज्य (26.2.2015)		117	–		–
11.	पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य (11.3.2015)		126	–	7	148
12.	लक्ष्मी **बनाम** भारत संघ (10.4.2015)		158	–		–
13.	पुलिस निरीक्षक और अन्य **बनाम** बट्टेनपाटला वेंकट रतनम और एक अन्य (13.4.2015)		167	–		–

1	2	3		4		5		
14.	एम. नारायण **बनाम** कर्नाटक राज्य (17.4.2015)	[2015] 2	174	2015	–	(2015)	6	465
15.	टी. वसंतकुमार **बनाम** विजयकुमारी (28.4.2015)		193		–			–
16.	हरियाणा राज्य **बनाम** आशा देवी और एक अन्य (12.5.2015)		201		3189			
17.	मुन्ना लाल जैन और एक अन्य **बनाम** विपीन कुमार शर्मा और अन्य (15.5.2015)		216		–		6	347
18.	रंजीत कुमार राम **उर्फ** रंजीत कुमार दास **बनाम** बिहार राज्य (15.5.2015)		224		–			

———

[2015] 2 उम. नि. प. 1

जनरल मोटर्स (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड

बनाम

अशोक रामनाइक लाल तोलत और एक अन्य

9 अक्तूबर, 2014

न्यायमूर्ति वी. गोपाल गौड़ा और न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (1986 का 68) – धारा 2(1)(द) – अनुचित व्यापार व्यवहार – दंडात्मक नुकसानी – अनुचित व्यापार व्यवहार का मात्र साबित किया जाना अनुतोष के दावे या अधिनिर्णय के लिए तब तक पर्याप्त नहीं है जब तक वास्तविक हानि का कारित होना सिद्ध नहीं किया जाता है, अतः, दंडात्मक नुकसानी का अधिनिर्णय उचित प्रक्रिया और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल है ।

प्रत्यर्थी-परिवादी ने इंटरनेट पर दिखाए गए अपीलार्थी-कंपनी के विज्ञापन पर विश्वास करके एक एस. यू. वी. यान खरीदने के लिए अपीलार्थी के अभिकर्ता से मिला और उसके द्वारा उसे "विशेष यात्रा के लिए, एक पुस्तिका दी गई । यान की इस विवरण पुस्तिका में यह आश्वासन दिया गया था कि "प्रश्नगत एस. यू. वी. एक ऐसा एस. यू. वी. यान, जिसके आगे कोई अन्य एस. यू. वी. नहीं टिक सकता और यह आपको अतुलनीय आराम और वैभव के साथ सड़क मार्ग से, ऊबड़-खाबड़ मार्ग से या सड़क मार्ग के बिना गंतव्य तक पहुंचाएगा ।" उसे यान का दृश्य प्रस्तुतीकरण भी दिखाया गया और उसे वी. सी. डी. की एक प्रति भी दी गई । तद्नुसार, उसने 1 मई, 2014 को 14 लाख रुपए में उक्त यान क्रय किया और उसने 1,91,295/- रुपए के सहायक उपस्करों की भी फिटिंग करवाई तथा साथ ही यान को बीमाकृत और रजिस्ट्रीकृत भी करवाया । उसके पश्चात् उसे यह महसूस हुआ कि यान "ऊबड़-खाबड़, सड़क रहित मार्गों और खराब/कीचड़ भरी सड़कों" पर चलाने के लिए उपयुक्त नहीं था, इस प्रकार उसने यह पाया कि यान के मैनुअल, विवरणिका, इंटरनेट और "एक विशेष यात्रा के लिए, जिसे जीवन कहते

हैं'' शीर्षक वाली पुस्तिका में दिए गए आश्वासन के विपरीत है । उसे यह भी महसूस हुआ कि यान कोई एस. यू. वी. नहीं है, अपितु वह एक यात्री कार है, जो ''ऊबड़-खाबड़ सड़कों, सड़क रहित मार्गों और खराब/कीचड़ भरी सड़कों'' पर चलाने के लिए उपयुक्त नहीं है । इस प्रकार वह अपने लेह, लद्दाख, जम्मू-कश्मीर और नेपाल तक यान चला कर ले जाने के स्वप्न को पूरा नहीं कर सका है । उसने ''अनुचित व्यापार व्यवहार'' और सेवा में कमियों को दूर करने की ईप्सा करते हुए और साथ ही यान की कीमत 14 लाख रुपए की राशि और 1,91,295/- रुपए की सहायक उपस्करों की कीमत की राशि का, क्रय की तारीख से संदाय की तारीख तक 18% ब्याज के साथ प्रतिदाय करने और साथ ही परिवादी को हुए शारीरिक और मानसिक संताप, सदमे, परेशानी, कठिनाइयों, असुविधाओं और व्यय के लिए 50,000/- रुपए तक के या जैसा कि न्याय के हित में उचित समझा जाए, प्रतिकर की ईप्सा करते हुए जिला फोरम में दावा फाइल किया । जिला फोरम ने 14 लाख रुपए और साथ ही सहायक उपस्करों की कीमत के रूप में 1,91,295/- रुपए की राशि का, परिवाद की तारीख से संदाय की तारीख तक की अवधि के लिए 9% वार्षिक ब्याज के साथ, यान लौटाए जाने की शर्त के अधीन रहते हुए संदाय करने का निदेश दिया और साथ ही मानसिक संताप के लिए 5,000/- रुपए के प्रतिकर और मुकदमेबाजी की लागत के रूप में 2,000/- रुपए का भी संदाय करने का निदेश दिया । अपीलार्थी ने जिला फोरम के उक्त आदेश को उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग, गुजरात राज्य, अहमदाबाद के समक्ष चुनौती दी । राज्य आयोग ने यह अभिनिर्धारित किया कि यान में अभियांत्रिकी या विनिर्माण संबंधी कोई दोष नहीं था, किंतु यह विज्ञापन कि कार एक एस. यू. वी. थी एक ''अनुचित व्यापार व्यवहार'' था । तद्नुसार, जिला फोरम के आदेश के स्थान पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि परिवादी 50,000/- रुपए के प्रतिकर का हकदार है, जिसके अंतर्गत मुकदमेबाजी की लागत भी है । किन्तु साथ ही, परिवादी से भी यह अपेक्षा की गई कि वह अयोग्य दावे की लागत के लिए 5,000/- रुपए का संदाय करे । अपीलार्थी को यह निदेश दिया गया कि वह प्रश्नगत यान को किसी भी प्रकार के विज्ञापन, वेबसाइट, लिखित सामग्री आदि में एस. यू. वी. के रूप में वर्णित न करे और यह शुद्धि करे कि यान एक यात्री कार है । प्रत्यर्थी-परिवादी ने राज्य आयोग के आदेश के विरुद्ध राष्ट्रीय आयोग के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया तथा अपीलार्थी ने भी प्रति-पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया । राष्ट्रीय आयोग ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी द्वारा स्वैच्छिक रूप से राज्य आयोग के आदेश का अनुपालन

करने के आचरण को देखते हुए उसे "अनुचित व्यापार व्यवहार" कारित करने के निष्कर्ष का विरोध करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती । राष्ट्रीय आयोग ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि जिला फोरम के निदेश को उलट कर न्यायोचित नहीं किया है और जिला फोरम द्वारा दिए गए अनुतोष को प्रत्यावर्तित कर दिया । किंतु मामला यहीं पर समाप्त नहीं हुआ था, यद्यपि उपरोक्त अनुतोष से परिवादी द्वारा उसके परिवाद में किए गए दावे की पूर्ति हो गई थी, तो भी राष्ट्रीय आयोग ने लगभग 260 उपभोक्ताओं को उक्त यान का विक्रय करने में अपनाए गए "अनुचित व्यापार व्यवहार" के लिए शास्तिक क्षतिपूर्ति के विवाद्यक पर विचार किया । यह अभिनिर्धारित किया गया कि यद्यपि उपभोक्ता राष्ट्रीय आयोग के पास नहीं आए हैं और चार वर्ष की अवधि व्यतीत हो चुकी है, इसलिए अपीलार्थी को 25 लाख रुपए की शास्तिक क्षतिपूर्ति का संदाय करना चाहिए और उक्त रकम में से 5 लाख रुपए की राशि का संदाय परिवादी को किया जाए, जबकि शेष राशि को साधारण रूप से उपभोक्ताओं के फायदे के लिए केन्द्रीय सरकार की "उपभोक्ता कल्याण निधि" में जमा किया जाए । अपीलार्थी ने उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल कीं उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह न्यायालय प्रत्यर्थी द्वारा जिला फोरम, राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग द्वारा, "अनुचित व्यापार व्यवहार" किए जाने के संबंध में अभिलिखित किए गए समवर्ती निष्कर्षों के, जो अभिलेख पर रखी गई पर्याप्त सामग्री पर आधारित हैं, संबंध में कोई हस्तक्षेप नहीं करता है और उनकी अभिपुष्टि की जाती है । इस प्रकार, अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा उठाया गया केवल यह प्रश्न विचारार्थ रह जाता है कि राष्ट्रीय आयोग के समक्ष दंडात्मक नुकसानियों के लिए कोई दावा नहीं था और न ही अपीलार्थी को ऐसे किसी दावे की पूर्ति के लिए कोई अवसर प्रदान किया गया था और यह कि आदेश के इस भाग को अपास्त करने की आवश्यकता है । अब, न्यायालय राज्य आयोग द्वारा दंडात्मक नुकसानियां प्रदान करने के संबंध में लेखबद्ध किए गए निष्कर्ष के सही होने के विवाद्यक के बारे में कार्यवाही करेगा । ऐसा करने से पूर्व, न्यायालय यह देख सकता है कि प्रत्यर्थी-परिवादी ने, जो व्यक्तिगत रूप से उपस्थित है, अपने लिखित कथन में अनेक प्रश्न उठाए हैं, जिनके अंतर्गत यह प्रश्न भी है कि अपीलार्थी को उसके द्वारा विक्रीत यानों की आगमों के लिए हिसाब देने के लिए कहा जाना चाहिए । यह स्वीकार करते हुए कि, प्रश्नगत यान को अपीलार्थी को लौटाए जाने का आदेश दिया गया है, जिसके विरुद्ध प्रत्यर्थी-अपीलार्थी का कोई दावा नहीं

है । इस प्रकार, उसके द्वारा उठाए गए अभिवाक् में कोई बल नहीं है । आगे और 100 करोड़ रुपए की दंडात्मक नुकसानियों और उसे इस न्यायालय तक खींचे जाने के लिए नुकसानियों से संबंधित उसके द्वारा उठाए गए विवाद्यकों में भी विचारार्थ कोई बल नहीं है क्योंकि वे परिवादी द्वारा फाइल किए गए परिवाद में किए गए दावे से परे है । इसके अतिरिक्त, किसी भी मुकदमेबाज को केवल इस न्यायालय तक आने के लिए दंडात्मक नुकसानियों से तब तक दंडित नहीं किया जा सकता, जब तक कि मामला अति तुच्छ न पाया जाए । अधिनियम एक सामाजिक विधान है, जो ऐसे उपभोक्ताओं के लिए मंच उपलब्ध कराता है, जिन्हें मालों और सेवाओं के प्रदाताओं द्वारा झांसा दिया गया है । किसी उपभोक्ता को, "अनुचित व्यापार व्यवहार" से उद्भूत होने वाली किसी हानि या क्षति के लिए और साथ ही सेवा में किसी कमी के लिए क्षतिपूर्ति उपलब्ध कराई जाती है । पश्चात्वर्ती संशोधन के द्वारा, परिवाद के विस्तार क्षेत्र के अंतर्गत न केवल व्यष्टि उपभोक्ता आता है, अपितु ऐसे उपभोक्ता भी आते हैं, जिनकी आसानी से पहचान नहीं की जा सकती । तथापि, परिवादी को एक प्रकाशन और दावा करना होता है । अधिनियम की धारा 12 न केवल ऐसे उपभोक्ता द्वारा परिवाद की अनुमति देती है, जिसे मालों का विक्रय या प्रदाय किया गया है अपितु सभी उपभोक्ताओं के फायदे के लिए और उनकी ओर से किसी मान्यताप्राप्त उपभोक्ता संघ या एक अथवा अधिक उपभोक्ताओं को भी अनुमति प्रदान करती है, किंतु फिर भी इस संबंध में कोई मामला बनाया जाना होगा और प्रभावित पक्षकार की ऐसे विवाद्यक पर सुनवाई की जाएगी । न्यायालय को यह भान है कि उपभोक्ताओं के हितों के संरक्षण के लिए सामाजिक विधान के प्रशंसनीय उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, अत्यधिक तकनीकी पद्धति से बचते हुए अधिनियम की स्कीम का उदार और प्रयोजनात्मक निर्वचन करना होगा । उसी समय, उचित प्रक्रिया प्रत्येक विधिक कार्यवाही का आधार स्तम्भ है और किसी प्रभावित पक्षकार को यह हक है कि उसे उस दावे की सूचना दी जाए, जिसकी प्रभावित पक्षकार को पूर्ति करनी है । न्यायालय ने पहले ही परिवाद में अनुरोध किए गए अनुतोष को प्रदान कर दिया है । न तो परिवाद में अन्य उपभोक्ताओं द्वारा कोई दंडात्मक नुकसानी उठाने के बारे में कोई प्रकथन है और न ही अपीलार्थी को यह बात ज्ञात थी कि उसके द्वारा ऐसे किसी दावे की पूर्ति की जानी है । सामान्यतः, किसी चेतन अन्याय के विरुद्ध दंडात्मक नुकसानियां प्रदान की जाती हैं, जो कि वास्तव में उठाई गई हानि से संबंधित नहीं होती । ऐसे किसी दावे के लिए विशेष रूप से अभिवाक् किया जाना होगा । प्रत्यर्थी-परिवादी जिला

फोरम के आदेश से संतुष्ट था और वह राज्य आयोग में नहीं गया था । वह केवल तब राष्ट्रीय आयोग में गया था, जब राज्य आयोग ने जिला फोरम द्वारा मंजूर किए गए अनुतोष को अपास्त कर दिया था । राष्ट्रीय आयोग, अपनी पुनरीक्षण अधिकारिता के अधीन केवल राज्य आयोग के, जिला फोरम द्वारा दिए गए अनुतोष को अपास्त करने वाले आदेश के सही होने या अन्यथा के बारे में विचार करने और ऐसा कोई आदेश पारित करने से संबद्ध था, जिसे राज्य आयोग को पारित करना चाहिए था । तथापि, राष्ट्रीय आयोग ने ऐसा अनुतोष प्रदान करके, अपनी अधिकारिता की सीमा को पार किया है, जिसके लिए न तो परिवाद में अनुरोध किया गया था और न ही राज्य आयोग के समक्ष । अतः, न्यायालय का यह विचार है कि इस विस्तार तक राष्ट्रीय आयोग के आदेश को पुष्ट नहीं किया जा सकता है । न्यायालय यह स्पष्ट करता है कि न्यायालय ने निदेश के गुणागुण पर विचार नहीं किया है अपितु इस पहलू पर विचार किया है कि क्या राष्ट्रीय आयोग के समक्ष ऐसा कोई दावा न होने पर और अपीलार्थी को ऐसे किसी दावे की सूचना भी न होने पर, उक्त आदेश उचित प्रक्रिया और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल है । न्यायालय यह भी स्पष्ट करता है कि यह आदेश किसी व्यथित पक्षकार को, विधि के अनुसार किसी उपयुक्त मंच के समक्ष कोई दावा प्रस्तुत करने से निवारित नहीं करता है । (पैरा 14, 15, 17, 18 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2009] (2009) 12 एस. सी. सी. 369 = 2009 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 4000 : **लुधियाना सुधार न्यास** बनाम **शक्ति सहकारी गृह निर्माण सोसायटी लि.** ; 19

[2008] (2008) 4 एस. सी. सी. 504 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 1828 = 2008 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 2521 : **गॉडफ्रे फिलिप्स इंडिया लि.** बनाम **अजय कुमार** ; 19

[2003] (2003) 1 एस. सी. सी. 129 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 317 = 2002 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 4798 : **कोलगेट पामोलिव (इंडिया) लि.** बनाम **एम. आर. टी. पी. आयोग** । 19

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2009 की सिविल अपील सं. 8072, 8073.

राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग द्वारा तारीख 16 दिसंबर, 2008 के आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

पक्षकारों की ओर से मैसर्स दुआ एसोसिएट

प्रत्यर्थी की ओर से केवियटकर्ता स्वयं

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल ने दिया ।

न्या. गोयल – ये अपीलें 2006 की पुनरीक्षण याचिका सं. 3349 और 2008 की पुनरीक्षण याचिका सं. 2858 में राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग (संक्षेप में "राष्ट्रीय आयोग") के तारीख 16 दिसंबर, 2008 के आदेश के विरुद्ध की गई हैं ।

2. इन अपीलों में उद्भूत मुख्य प्रश्न यह है कि क्या परिवाद में की गई किसी प्रार्थना के अभाव में और वहन की गई किसी हानि के साक्ष्य के बिना दंडात्मक नुकसानियों का अधिनिर्णय अनुज्ञेय था । उक्त मुख्य प्रश्न के अतिरिक्त, अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी-परिवादी के पक्ष में आदिष्ट प्रतिदाय और मंजूर किया गया अन्य अनुतोष भी प्रश्नगत किया है ।

3. जिला फोरम, अहमदाबाद (ग्रामीण) (संक्षेप में "जिला फोरम") के समक्ष फाइल किए गए परिवाद में, प्रत्यर्थी-परिवादी की प्रार्थना निम्नवत थी :–

> "अतः परिवादी निवेदन करता है कि –
>
> (क) माननीय फोरम यह अभिनिर्धारित करने की कृपा करे कि विरोधी पक्षकारों (संयुक्ततः और पृथक्तः) ने परिवादी के प्रति अनुचित व्यापार व्यवहार किया है और उन्हें (संयुक्ततः और पृथक्तः) परिवादी के विरुद्ध उनके द्वारा किए गए अनुचित व्यापार व्यवहार को हटाने के लिए निदेश दें ;
>
> (ख) माननीय फोरम विरोधी पक्षकारों (संयुक्ततः और पृथक्तः) को यह निदेश देने की कृपा करे कि वे परिवादी के प्रति उनकी सेवाओं में खामियों और उपेक्षा को दूर करें ।
>
> (ग) माननीय फोरम विरोधी पक्षकारों (संयुक्ततः और पृथक्तः) को यह निदेश देने की कृपा करे कि वे परिवादी को संदाय की तारीख से 18% ब्याज सहित 14,00,000/- रुपए (चौदह लाख रुपए) तथा 1,91,295/- रुपए की राशि का प्रतिदाय करें और

माननीय फोरम विरोधी पक्षकारों को यह निदेश देने की कृपा करे कि वे जैसा कि प्रार्थित है परिवादी को ब्याज सहित उसके धन का प्रतिदाय करने के पश्चात् उससे तुरंत उक्त यान को वापस लें ;

(घ) माननीय फोरम विरोधी पक्षकारों (संयुक्ततः और पृथक्तः) को यह निदेश देने की कृपा करे कि वे परिवादी को हुए शारीरिक और मानसिक संताप, मानसिक धक्के, परेशानियों, पीड़ाओं, कठिनाइयों, असुविधाओं और व्यय के लिए 50,000/- रुपए (पचास हजार रुपए) तक के या जैसा कि माननीय फोरम द्वारा न्याय के हित में उचित समझा जाए, प्रतिकर का संदाय करने का निदेश दे ।

(ङ) माननीय फोरम विरोधी पक्षकारों (संयुक्ततः और पृथक्तः) को इस परिवाद की लागत के रूप में परिवादी को 25,000/- रुपए का संदाय करें ।"

4. परिवादी का मामला यह है कि उसे यान चलाने का शौक था और उसका यह स्वप्न था कि वह एक मोटर कार चलाकर लेह, लद्दाख, जम्मू-कश्मीर और नेपाल का दौरा करे । इंटरनेट पर उसने अपीलार्थी द्वारा दिया गया विज्ञापन पढ़ा, जो निम्नानुसार है :–

"सीमा विहीन विश्व का आनंद लें, एक ऐसी एस. यू. वी., जिसके सामने कोई अन्य एस. यू. वी. नहीं टिकता है । यह है नई शेवरले फॉरेस्टर । इसके अद्वितीय सभी पहियों द्वारा चालित (ए. डब्ल्यू. डी.) यान में 120 अश्वों की शक्ति है, जो वस्तुतः विश्व के चारों कोनों तक आपकी सुगम पहुंच बनाती है । यह न केवल आपको आपके गंतव्य तक ले जाएगा अपितु यह आपको अतुलनीय आराम और वैभव के साथ सड़क मार्ग से, ऊबड़-खाबड़ मार्ग से या सड़क मार्ग के बिना गंतव्य तक पहुंचाएगा ।"

5. उस विज्ञापन पर विश्वास करके वह अपीलार्थी के अभिकर्ता से मिला और उसे "विशेष यात्रा के लिए, जिसे जीवन कहा जाता है" शीर्षक वाली पुस्तक दी गई थी । उसे यह आश्वासन दिया गया था कि विक्रय के लिए प्रस्तावित यान उसके स्वप्न को पूरा करेगा । यान की विवरण पुस्तिका में भी यह आश्वासन दिया गया था कि "प्रश्नगत एस. यू. वी. एक ऐसा एस. यू. वी. था, जिसके आगे कोई अन्य एस. यू. वी. नहीं टिक सकता था और.....जो वस्तुतः विश्व के चारों कोनों तक आपकी सुगम पहुंच बनाएगी और..... यह न केवल प्रत्येक बार आपको आपके गंतव्य तक ले जाएगा । अपितु यह आपको अतुलनीय आराम

और वैभव के साथ सड़क मार्ग से, ऊबड़-खाबड़ मार्ग से या सड़क मार्ग के बिना गंतव्य तक पहुंचाएगा ।" उसे यान का दृश्य प्रस्तुतीकरण भी दिखाया गया था और उसे वी. सी. डी. की एक प्रति भी दी गई थी । तद्नुसार, उसने 1 मई, 2014 को 14 लाख रुपए में यान का क्रय किया और उसने 1,91,295/- रुपए के सहायक उपस्करों की भी फिटिंग करवाई तथा साथ ही यान को बीमाकृत और रजिस्ट्रीकृत भी करवाया ।

6. उसके पश्चात् उसे यह महसूस हुआ कि यान "ऊबड़-खाबड़ सड़क, रहित मार्गों और खराब/कीचड़ भरी सड़कों" पर चलाने के लिए उपयुक्त नहीं था, जैसा कि उपदर्शित किया गया था और उसमें दोष भी थे । तद्नुसार, उसने अपीलार्थी और उसके व्यौहारियों से संपर्क किया, जिन्होंने यान स्वामी के मैनुअल के पृष्ठ 8-6 स्तम्भ 1 और 3 में कंपनी द्वारा मुद्रित निम्नलिखित प्रभाव के अंशों को निर्दिष्ट किया :–

> "ऊबड़-खाबड़ सड़कों पर यान चालन..... किन्तु कृपया इस बात का ध्यान रखें कि ए. डब्ल्यू. डी. शेवरले एक यात्री कार है और यह न तो एक पारम्परिक ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर चलने वाला यान है और न ही यह कोई सभी प्रकार के भू-भागों पर चलने वाला यान है.....यदि आप इस यान को पानी में जैसे कि कम गहरे झरनों में चला रहे हैं तो पहले पानी की गहराई और झरने के तल की कठोरता की जांच करें और यह सुनिश्चित करें कि झरने का तल सपाट है.....पानी इतना गहरा न हो कि वह कैरिज के नीचे तक पहुंच जाए ।"

इस प्रकार उसे यह पता चला कि यान स्वामी का मैनुअल, विवरणिका, इंटरनेट और "एक विशेष यात्रा के लिए, जिसे जीवन कहते हैं" शीर्षक वाली पुस्तिका में दिए गए आश्वासन से विपरीत था । उसे यह भी महसूस हुआ कि यान कोई एस. यू. वी. नहीं था, अपितु वह एक यात्री कार है, जो "ऊबड़-खाबड़ सड़कों, सड़क रहित मार्गों और खराब/कीचड़ भरी सड़कों" पर चलाने के लिए उपयुक्त नहीं था । वह अपने लेह, लद्दाख, जम्मू-कश्मीर और नेपाल तक यान चला कर ले जाने के स्वप्न को पूरा नहीं कर सका था । इस प्रकार, अपीलार्थी की कार्रवाई "अनुचित व्यापार व्यवहार" था । उसने इस "अनुचित व्यापार व्यवहार" और सेवा में कमियों को दूर करने की अनुमति के लिए प्रार्थना की थी और साथ ही यान की कीमत की 14 लाख रुपए की राशि और 1,91,295/- रुपए की सहायक उपस्करों की कीमत की राशि का, क्रय की तारीख से संदाय की तारीख तक 18% ब्याज के साथ प्रतिदाय करने और साथ ही परिवादी को हुए शारीरिक और मानसिक संताप, धक्के, परेशानियों, कष्टों, कठिनाइयों,

असुविधाओं और व्यय के लिए 50,000/- रुपए तक के या जैसा कि न्याय के हित में उचित समझा जाए, प्रतिकर का संदाय करने की भी प्रार्थना की थी । जिला फोरम ने 14 लाख रुपए और साथ ही सहायक उपस्करों की कीमत के रूप में 1,91,295/- रुपए की राशि का, परिवाद की तारीख से संदाय की तारीख तक की अवधि के लिए 9% वार्षिक ब्याज के साथ, यान लौटाए जाने की शर्त के अधीन रहते हुए संदाय करने का निदेश दिया था और साथ ही मानसिक संताप के लिए 5,000/- रुपए के प्रतिकर और मुकदमेबाजी की लागत के रूप में 2,000/- रुपए का भी संदाय करने का निदेश दिया था ।

7. अपीलार्थी ने जिला फोरम के उक्त आदेश को उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग, गुजरात राज्य, अहमदाबाद (जिसे संक्षेप में "राज्य आयोग" कहा गया है) के समक्ष चुनौती दी । राज्य आयोग ने यह अभिनिर्धारित किया कि यान में अभियांत्रिकी या विनिर्माण संबंधी कोई दोष नहीं था, किंतु यह विज्ञापन कि कार एक एस. यू. वी. थी एक "अनुचित व्यापार व्यवहार" था । तद्नुसार, जिला फोरम के आदेश को प्रतिस्थापित करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया कि परिवादी 50,000/- रुपए के प्रतिकर का हकदार है, जिसके अंतर्गत मुकदमेबाजी की लागत भी है । किन्तु साथ ही, परिवादी से यह अपेक्षा भी की गई कि वह अयोग्य दावे की लागत के लिए 5,000/- रुपए का संदाय करे । अपीलार्थी को यह निदेश दिया गया कि वह प्रश्नगत यान को किसी भी प्रकार के विज्ञापन, वेबसाइट, लिखित सामग्री आदि में एस. यू. वी. के रूप में वर्णित न करे और यह शुद्धि करे कि यान एक यात्री कार है, जैसा कि मैनुअल में उल्लिखित है ।

8. तद्नुसार, अपीलार्थी ने एक दावा-त्याग (डिस्कलेमर) जारी करके उक्त निदेश का पालन किया ।

9. प्रत्यर्थी ने राज्य आयोग के आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण याचिका प्रस्तुत की, यद्यपि अपीलार्थी ने एक प्रति-पुनरीक्षण याचिका फाइल की ।

10. राष्ट्रीय आयोग ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी के स्वैच्छिक रूप से राज्य आयोग के आदेश का अनुपालन करने के आचरण और उसके द्वारा बिना किसी औचित्य के और देरी से प्रति-पुनरीक्षण याचिका फाइल किए जाने को ध्यान में रखते हुए उसे उसके द्वारा "अनुचित व्यापार व्यवहार" करने के निष्कर्ष के विरुद्ध मुकदमा लड़ने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती । अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का, विशेषकर अविवादित पत्राचार को निर्दिष्ट करते हुए, उक्त निष्कर्ष की गुणागुण के आधार पर भी अभिपुष्टि होती है । उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (जिसे संक्षिप्त रूप से "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 2(1)(द) के अधीन "अनुचित व्यापार

व्यवहार" की परिभाषा का प्रतिनिर्देश लेने के पश्चात् यह निर्धारित किया गया था कि :–

> "अनुचित व्यापार व्यवहार की परिभाषा और अभिलेख पर रखी गई सामग्री, विशेष रूप से प्रश्नगत यान से संबंधित प्रत्यर्थी की विवरणिका द्वारा किए गए और प्रस्तुत अभ्यावेदनों, स्वामी के मैनुअल और साथ ही यान के विनिर्माता द्वारा दिए गए स्पष्टीकरणों को ध्यान में रखते हुए, इस बात पर कोई संदेह नहीं हो सकता कि मोटर यान शेवरले फॉरेस्टर ए. डब्ल्यू. डी. मॉडल, उक्त वर्णन का यान नहीं था क्योंकि यह कोई एस. यू. वी. यान नहीं था । अतः, याची को अवश्य ही यह विश्वास दिलाने के लिए भ्रमित किया गया होगा कि विक्रय के लिए प्रस्तावित यान एक एस. यू. वी. था । प्रत्यर्थी का यह कार्य स्पष्ट रूप से धारा 2(द) में यथा परिकल्पित अनुचित व्यापार व्यवहार की रिष्टि के अंतर्गत आता है अतः, न्यायालय इस निमित्त राज्य आयोग के निष्कर्षों की पुष्टि करता है ।"

11. उपरोक्त निष्कर्षों को अभिलिखित करने के पश्चात् राज्य आयोग ने दिए जाने वाले अनुतोष पर विचार किया । यह अभिनिर्धारित किया गया कि "अनुचित व्यापार व्यवहार" के कारण के सिद्ध होने के पश्चात्, जैसाकि राज्य आयोग का भी निष्कर्ष था, जिला फोरम के निदेश को राज्य आयोग द्वारा उलट दिया जाना उचित नहीं था । तद्नुसार, राष्ट्रीय आयोग ने निम्नलिखित अनुसार किंचित उपांतरण के साथ जिला फोरम द्वारा दिए गए अनुतोष को पुनःस्थापित किया :–

> "यह पाए जाने के पश्चात् कि प्रत्यर्थी ने अनुचित व्यापार व्यवहार को अपनाया है, जिसके कारण याची ने भ्रमित होकर प्रश्नगत यान का क्रय किया था, हमारे मत में याची के लिए सर्वथा उपयुक्त अनुतोष यह होगा कि याची की यान के क्रय से पूर्व की मूल स्थिति को बहाल किया जाए, अर्थात् इस निमित्त कुछ प्रतिकर के साथ यान के मूल्य का प्रतिदाय किया जाए । इस बात को ध्यान में रखते हुए कि याची द्वारा यान का लगभग एक वर्ष की अविधि तक उपयोग किया गया है और यह लगभग 14,000 कि. मी. चल चुका है, न्यायालय यह उचित समझता है कि प्रत्यर्थी याची को 12,50,000/- रुपए (बारह लाख पचास हजार रुपए केवल) की राशि का प्रतिदाय, इस शर्त के अधीन रहते हुए करे कि याची द्वारा प्रश्नगत यान ऐसे सहायक उपस्करों के बिना, जिन्हें याची ने 1,91,295/- रुपए की लागत से लगवाया था, प्रत्यर्थी को लौटा दिया जाता है ।"

12. किंतु मामला यहीं पर समाप्त नहीं हुआ, यद्यपि उपरोक्त अनुतोष से परिवादी द्वारा अपने परिवाद में किए गए दावे की पूर्ति हो गई थी, तो भी राष्ट्रीय आयोग ने लगभग 260 उपभोक्ताओं को उक्त यान का विक्रय करने में अपनाए गए "अनुचित व्यापार व्यवहार" के लिए शास्तिक क्षतिपूर्ति के विवाद्यक पर विचार किया । यह अभिनिर्धारित किया गया कि यद्यपि उपभोक्ता राष्ट्रीय आयोग के पास नहीं आए हैं और चार वर्ष की अवधि व्यतीत हो चुकी है, इसलिए अपीलार्थी को 25 लाख रुपए की शास्तिक क्षतिपूर्ति का संदाय करे और उक्त रकम में से 5 लाख रुपए की राशि का संदाय परिवादी को किया जाए, जबकि शेष राशि को साधारण रूप से उपभोक्ताओं के फायदे के लिए केन्द्रीय सरकार की "उपभोक्ता कल्याण निधि" में जमा किया जाए । राष्ट्रीय आयोग द्वारा पारित अंतिम प्रवर्तनशील आदेश निम्नानुसार है :–

> "एतद्द्वारा प्रत्यर्थियों को यह निदेश दिया जाता है कि वे याची को इस शर्त के अधीन रहते हुए कि याची प्रश्नगत यान को सहायक उपस्करों के बिना प्रत्यर्थियों को लौटा दे, यान की कीमत के मद्दे 12,50,000/- रुपए (बारह लाख पचास हजार रुपए केवल) की राशि का संदाय करें । प्रत्यर्थियों को एतद्द्वारा इस आयोग के पास दंडात्मक नुकसानियों के रूप में 25,00,000/- रुपए (पच्चीस लाख रुपए) की राशि जमा करने के लिए कहा जाता है । उक्त निक्षेप की गई रकम में से 5,00,000/- रुपए (पांच लाख रुपए) का संदाय याची-परिवादी को किया जाएगा और शेष रकम को केन्द्रीय सरकार की "उपभोक्ता कल्याण निधि" में जमा किया जाएगा, जिसका उपयोग साधारणतया उपभोक्ताओं के फायदे और उनके हितों के संरक्षण के लिए किया जाएगा । न्यायालय परिवादी के पक्ष में 50,000/- रुपए की राशि के संदाय का आदेश देते हैं, जिससे कि तीन उपभोक्ता मंचों के समक्ष मुकदमेबाजी की उसकी लागत की पूर्ति की जा सके । रकमों के संदाय और उनका निक्षेप करने का उत्तरदायित्व प्रत्यर्थियों का संयुक्ततः और पृथक्तः होगा । न्यायालय यहां ऊपर दिए गए निदेशों का अनुपालन करने के लिए प्रत्यर्थियों को छह सप्ताह का समय देते हैं ।"

13. न्यायालय ने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल और परिवादी को व्यक्तिगत रूप से सुना है और अभिलेख का परिशीलन किया है ।

14. यह न्यायालय प्रत्यर्थी द्वारा "अनुचित व्यापार व्यवहार" किए जाने के संबंध में जिला फोरम, राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग द्वारा, अभिलिखित किए गए समवर्ती निष्कर्षों के, जो अभिलेख पर रखी गई

पर्याप्त सामग्री पर आधारित हैं, इस संबंध में कोई हस्तक्षेप नहीं करता है और उनकी अभिपुष्टि की जाती है ।

15. इस प्रकार, अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा उठाया गया केवल यह प्रश्न विचारार्थ रह जाता है कि राष्ट्रीय आयोग के समक्ष दंडात्मक नुकसानियों के लिए कोई दावा नहीं था और न ही अपीलार्थी को ऐसे किसी दावे की पूर्ति के लिए कोई अवसर प्रदान किया गया था और यह कि आदेश के इस भाग को अपास्त करने की आवश्यकता है ।

16. न्यायालय को इस कथन में बल प्रतीत होता है । इस न्यायालय के तारीख 17 जुलाई, 2009 के अंतरिम आदेश द्वारा दंडात्मक नुकसानियों को प्रदान करने वाले आक्षेपित आदेश के प्रवर्तन को स्थगित कर दिया गया था । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने प्रत्यर्थी-परिवादी के दावे के मद्दे उसके पक्ष में प्रदान की गई रकम को जमा करने का वचनबंध किया था । निम्नलिखित उपांतरणों के साथ तारीख 20, नवम्बर 2009 के आदेश द्वारा उक्त आदेश को जारी रखने की अनुज्ञा दी गई थी :–

> "(i) प्रत्यर्थी सं. 1 आज से चार सप्ताह की अवधि के भीतर अपीलार्थी को यान लौटाएगा । पश्चात्वर्ती यान के प्रदाय को अहमदाबाद में स्वीकार करने की व्यवस्था करेगा ।
>
> (ii) अपीलार्थी को यान लौटाने के पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 1, जिला फोरम के समाधानप्रद रूप में उसके द्वारा प्रतिभूति प्रस्तुत करने के अधीन रहते हुए, इस न्यायालय के तारीख 17 जुलाई, 2009 के आदेश के निबंधनानुसार जिला फोरम में अपीलार्थी द्वारा जमा की गई 12,50,000/- रुपए की रकम, मुकदमेबाजी की लागत के साथ प्राप्त करने का हकदार होगा ।
>
> (iii) अपीलार्थी यान का विक्रय करने के लिए और उसके विक्रय के आगमों को ब्याज वाले एक पृथक् खाते में रखने के लिए स्वतंत्र होगा । प्रत्यर्थी सं. 1 यान के विक्रय के लिए आवश्यक दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करके अपीलार्थी के साथ सहयोग करेगा ।"

17. अब, न्यायालय राज्य आयोग द्वारा दंडात्मक नुकसानियां प्रदान करने के संबंध में लेखबद्ध किए गए निष्कर्ष के सही होने के विवाद्यक के बारे में कार्यवाही करेगा । ऐसा करने से पूर्व, न्यायालय यह देख सकते हैं कि प्रत्यर्थी-परिवादी ने, जो व्यक्तिगत रूप से उपस्थित है, अपने लिखित कथन में अनेक प्रश्न उठाए हैं, जिनके अंतर्गत यह प्रश्न भी हैं कि अपीलार्थी को उसके द्वारा विक्रीत यानों की आगमों के लिए

हिसाब देने के लिए कहा जाना चाहिए । यह स्वीकार करते हुए कि, प्रश्नगत यान को अपीलार्थी को लौटाए जाने का आदेश दिया गया है, जिसके विरुद्ध प्रत्यर्थी-अपीलार्थी का कोई दावा नहीं है । इस प्रकार, उसके द्वारा उठाए गए अभिवाक् में कोई बल नहीं है । आगे और 100 करोड़ रुपए की दंडात्मक नुकसानियों और उसे इस न्यायालय तक खींचे जाने के लिए नुकसानियों से संबंधित उसके द्वारा उठाए गए विवाद्यकों में भी विचारार्थ कोई बल नहीं है क्योंकि वे परिवादी द्वारा फाइल किए गए परिवाद में किए गए दावे से परे है । इसके अतिरिक्त, किसी भी मुकदमेबाज को केवल इस न्यायालय तक आने के लिए दंडात्मक नुकसानियों से तब तक दंडित नहीं किया जा सकता, जब तक कि मामला अति तुच्छ न पाया जाए ।

18. अधिनियम एक सामाजिक विधान है, जो ऐसे उपभोक्ताओं के लिए मंच उपलब्ध कराता है, जिन्हें मालों और सेवाओं के प्रदाताओं द्वारा झांसा दिया गया है । किसी उपभोक्ता को, "अनुचित व्यापार व्यवहार" से उद्भूत होने वाली किसी हानि या क्षति के लिए और साथ ही सेवा में किसी कमी के लिए क्षतिपूर्ति उपलब्ध कराई जाती है । पश्चात्वर्ती संशोधन के द्वारा, परिवाद के विस्तार क्षेत्र के अंतर्गत न केवल व्यष्टि उपभोक्ता आता है, अपितु ऐसे उपभोक्ता भी आते हैं, जिनकी आसानी से पहचान नहीं की जा सकती । तथापि, परिवादी को एक प्रकाशन और दावा करना होता है । अधिनियम की धारा 12 न केवल ऐसे उपभोक्ता द्वारा परिवाद की अनुमति देती है, जिसे मालों का विक्रय या प्रदाय किया गया है अपितु सभी उपभोक्ताओं के फायदे के लिए और उनकी ओर से किसी मान्यताप्राप्त उपभोक्ता संघ या एक अथवा अधिक उपभोक्ताओं को भी अनुमति प्रदान करती है, किंतु फिर भी इस संबंध में कोई मामला बनाया जाना होगा और प्रभावित पक्षकार की ऐसे विवाद्यक पर सुनवाई की जाएगी । न्यायालय को यह भान है कि उपभोक्ताओं के हितों के संरक्षण के लिए सामाजिक विधान के प्रशंसनीय उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, अत्यधिक तकनीकी पद्धति से बचते हुए अधिनियम की स्कीम का उदार और प्रयोजनात्मक निर्वचन करना होगा । उसी समय, उचित प्रक्रिया प्रत्येक विधिक कार्यवाही का आधार स्तम्भ है और किसी प्रभावित पक्षकार को यह हक है कि उसे उस दावे की सूचना दी जाए, जिसकी प्रभावित पक्षकार को पूर्ति करनी है ।

19. न्यायालय इस प्रक्रम पर, अधिनियम की "अनुचित व्यापार व्यवहार" के विरुद्ध दावे से संबंधित स्कीम का संदर्भ ले सकते हैं । इस

उपबंध की पृष्ठभूमि और विस्तार क्षेत्र के संबंध में **लुधियाना सुधार न्यास** बनाम **शक्ति सहकारी गृह निर्माण सोसायटी लि.**[1] के मामले में कार्यवाही की गई थी :–

> "18. तारीख 18 जून, 1993 से भूतलक्षी प्रभाव से अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (द) के प्रतिस्थापन से पूर्व, 'अनुचित व्यापार व्यवहार' पद की कोई पृथक् परिभाषा नहीं थी और उक्त पद को वही अर्थ दिया गया था जो एकाधिकार तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार, अधिनियम, 1969 (संक्षेप में 'एम. आर. टी. पी. अधिनियम') में उसका था । किंतु अब उक्त संशोधन के पश्चात् इस पद की परिभाषा को विनिर्दिष्ट रूप से धारा 2(1)(द) में उपबंधित किया गया है, यद्यपि यह परिभाषा भी एम. आर. टी. पी. अधिनियम की धारा 36क में दी गई परिभाषा का शब्दशः प्रतिरूप है ।
>
> 19. 'अनुचित व्यापार व्यवहार' के मूलभूत संघटक निम्नानुसार हैं –
>
> (i) यह एक व्यापार व्यवहार होना चाहिए ;
>
> (ii) व्यापार व्यवहार का उपयोग विक्रय के संवर्धन, किन्हीं मालों के उपयोग या प्रदाय अथवा किसी सेवा के उपबंध के प्रयोजन के लिए किया गया होना चाहिए ; और
>
> (iii) ऐसे व्यापार व्यवहार में किसी अनुचित पद्धति या अनुचित या भ्रामक व्यवहार को अपनाया गया है, जिसके अंतर्गत अधिनियम की धारा 2(1)(द) के खंड (1) से खंड (6) में वर्णित व्यवहारों में से कोई व्यवहार भी है ।
>
> अतः, किन्हीं मालों के विक्रय, उपयोग या प्रदाय के या किसी सेवा के उपबंध के संवर्धन के प्रयोजन के लिए, किसी अनुचित पद्धति या अनुचित या भ्रामक व्यवहार को अपना कर किए गए किसी व्यापार व्यवहार को 'अनुचित व्यापार व्यवहार' माना जाएगा, जिसके लिए अधिनियम के उपबंधों के अधीन कार्रवाई की जाएगी, परंतु परिवादी यह स्थापित करने में समर्थ हो कि वह अधिनियम की धारा 2(1)(च) के अर्थांतर्गत उपभोक्ता है ।"

कोलगेट पामोलिव (इंडिया) लि. बनाम **एम. आर. टी. पी. आयोग**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने ऐसे पांच संघटक अधिकथित किए थे,

---

[1] (2009) 12 एस. सी. सी. 369 = 2009 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 4000.

[2] (2003) 1 एस. सी. सी. 129 = ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 317 = 2002 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 4798.

जिन्हें किसी व्यापार व्यवहार को "अनुचित व्यापार व्यवहार" कहे जाने से पूर्व सिद्ध करना होगा । न्यायालय ने निम्नलिखित रीति में संघटक अधिकथित किए थे :–

> "16. पूर्वोक्त उपबंध के परिशीलन मात्र से यह उपदर्शित होता है कि किसी अनुचित व्यापार व्यवहार का गठन करने के लिए निम्नलिखित पांच संघटकों का होना आवश्यक है –
>
> 1. कोई व्यापार व्यवहार होना चाहिए [एकाधिकार और अवरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिनियम की धारा 2(प) के अर्थांतर्गत] ।
>
> 2. ऐसे व्यापार व्यवहार का उपयोग किन्हीं मालों के विक्रय, उपयोग या प्रदाय के संवर्धन के लिए या किन्हीं सेवाओं के उपबंध के लिए किया जाना चाहिए ।
>
> 3. व्यापार व्यवहार धारा 36क के खंड (1) से खंड (5) में वर्णित एक या अधिक प्रवर्गों के विस्तार क्षेत्र के अर्थांतर्गत आना चाहिए ।
>
> 4. व्यापार व्यवहार से मालों या सेवाओं के उपभोक्ताओं को कोई हानि या क्षति होनी चाहिए ।
>
> 5. खंड (1) के अधीन व्यापार व्यवहार में, चाहे मौखिक रूप से या लिखित रूप से या दृश्य प्रस्तुतीकरण द्वारा कोई 'कथन' अंतर्वलित होना चाहिए ।"

पुनः **गॉडफ्रे फिलिप्स इंडिया लि.** बनाम **अजय कुमार**[1] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया था कि :–

> "18. जहां तक निदेश (iii) का संबंध है, यह उल्लेखनीय है कि किसी क्षतिपूर्ति के लिए कोई अनुरोध नहीं किया गया था । ऐसा कोई आरोप भी नहीं था कि परिवादी को कोई हानि हुई थी । क्षतिपूर्ति केवल अधिनियम की धारा 14(1)(घ) के निबंधनानुसार मंजूर की जा सकती है । खंड (च) किसी उपभोक्ता को, विरोधी पक्षकार की अनवधानी के कारण उसे हुई किसी हानि या क्षति के लिए क्षतिपूर्ति मंजूर करने को अनुध्यात करता है । वर्तमान मामले में, अनवधानी दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कोई आरोप नहीं है अथवा कोई सामग्री नहीं रखी गई है ।"

---

[1] (2008) 4 एस. सी. सी. 504 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 1828 = 2008 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 2521.

इस प्रकार, "अनुचित व्यापार व्यवहार" का साक्ष्य मात्र ही तब तक अनुतोष के दावे या उसे देने के लिए पर्याप्त नहीं है, जब तक हानिकरण को भी स्थापित न किया जाए, जो वर्तमान मामले में स्थापित नहीं किया गया है ।

20. न्यायालय ने पहले ही परिवाद में अनुरोध किए गए अनुतोष को प्रदान कर दिया है । न तो परिवाद में अन्य उपभोक्ताओं द्वारा कोई दंडात्मक नुकसानी उठाने के बारे में कोई प्रकथन है और न ही अपीलार्थी को यह बात ज्ञात थी कि उसके द्वारा ऐसे किसी दावे की पूर्ति की जानी है । सामान्यतः, किसी चेतन अन्याय के विरुद्ध दंडात्मक नुकसानियां प्रदान की जाती हैं, जो कि वास्तव में उठाई गई हानि से संबंधित नहीं होती । ऐसे किसी दावे के लिए विशेष रूप से अभिवाक् किया जाना होगा । प्रत्यर्थी-परिवादी जिला फोरम के आदेश से संतुष्ट था और वह राज्य आयोग में नहीं गया था । वह केवल तब राष्ट्रीय आयोग में गया था, जब राज्य आयोग ने जिला फोरम द्वारा मंजूर किए गए अनुतोष को अपास्त कर दिया था । राष्ट्रीय आयोग, अपनी पुनरीक्षण अधिकारिता के अधीन केवल राज्य आयोग के, जिला फोरम द्वारा दिए गए अनुतोष को अपास्त करने वाले आदेश के सही होने या अन्यथा के बारे में विचार करने और ऐसा कोई आदेश पारित करने से संबद्ध था, जिसे राज्य आयोग को पारित करना चाहिए था । तथापि, राष्ट्रीय आयोग ने ऐसा अनुतोष प्रदान करके, अपनी अधिकारिता की सीमा को पार किया है, जिसके लिए न तो परिवाद में अनुरोध किया गया था और न ही राज्य आयोग के समक्ष । अतः, न्यायालय का यह विचार है कि इस विस्तार तक राष्ट्रीय आयोग के आदेश को पुष्ट नहीं किया जा सकता है । न्यायालय यह स्पष्ट करता है कि न्यायालय ने निदेश के गुणागुण पर विचार नहीं किया है अपितु इस पहलू पर विचार किया है कि क्या राष्ट्रीय आयोग के समक्ष ऐसा कोई दावा न होने पर और अपीलार्थी को ऐसे किसी दावे की सूचना भी न होने पर, उक्त आदेश उचित प्रक्रिया और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल है । न्यायालय यह भी स्पष्ट करता है कि यह आदेश किसी व्यथित पक्षकार को, विधि के अनुसार किसी उपयुक्त मंच के समक्ष कोई दावा प्रस्तुत करने से निवारित नहीं करता है ।

21. तद्नुसार न्यायालय इन अपीलों को मंजूर करते हैं और राष्ट्रीय आयोग के आदेश को, दंडात्मक नुकसानियां प्रदान करने की सीमा तक अपास्त करते हैं ।

अपीलें भागतः मंजूर की गईं ।

पु./पा.

रघुवेन्द्र

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

7 जनवरी, 2015

न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर और न्यायमूर्ति एन. वी. रमण

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 34 और 302 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – अभिलेख पर इस संबंध में साक्ष्य होना कि अभियुक्त-अपीलार्थी मृतक के निवास पर रात भर रुके थे तथा मृतक के साथ प्रातःकाल अंतिम बार देखे गए थे – अभियुक्त-अपीलार्थी तथा उसके साथी अभियुक्त के पास से मृतक की वस्तुओं की बरामदगी होना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों की दोषसिद्धि के निर्णय में हस्तक्षेप किए जाने की आवश्यकता नहीं है ।

प्रस्तुत मामले में, तारीख 10 फरवरी, 1998 को इत्तिला कर्ता गुलाब अहीरवार (अभियोजन साक्षी 3) ने अपने खेतों में एक शव पाया था । उसने तुरन्त ही पुलिस को सूचित किया और उसकी सूचना के आधार पर एक प्रथम इत्तिला सूचना अभिलिखित की गई थी । शव के निकट कुछ वस्तुएं भी पड़ी हुई बरामद की गई थीं । शव की तुरन्त ही शिनाख्त नहीं हो सकी थी अपितु तत्पश्चात् एक पूर्णतया भिन्न एक मामले में अन्वेषण के दौरान पुलिस ने रघुवेन्द्र को पकड़ा था और तारीख 16 मार्च, 1998 को उससे पूछताछ के दौरान उसने मृतक की अपने चाचा की सहायता से हत्या किए जाने की संस्वीकृति की । रघुवेन्द्र द्वारा किए गए इस कथन के आधार पर गुड्डी बाई (मृतक की विधवा पत्नी अभियोजन साक्षी 13) और साधना (मृतक की पुत्री अभियोजन साक्षी 14) से शव की शिनाख्त की गई थी । 9 फरवरी, 1998 को उसके चाचा विदिशा में रघुवेन्द्र मृतक के घर गए थे और वे अगली सुबह अर्थात् 10 फरवरी, 1998 को बिलासपुर के लिए चले गए थे । इसके तुरन्त तत्पश्चात् ही भगवान सिंह का शव गुलाब अहीरवार (अभियोजन साक्षी 3) के खेतों में पाया गया था । अन्वेषण के अनुक्रम के दौरान अन्वेषक अधिकारी ने रघुवेन्द्र और उसके चाचा के बताए जाने पर भोपाल में मृतक की कतिपय वस्तुओं को भी बरामद किया था । इन सभी व्यापक तथ्यों के आधार पर रघुवेन्द्र और उसके चाचा के विरुद्ध एक आरोप

पत्र फाइल किया गया था और भगवान सिंह की हत्या करने के लिए आरोपित किया गया था और तद्द्वारा दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित किया गया था । दोनों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और इसलिए विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश खुराई, जिला सागर, मध्य प्रदेश द्वारा विचारण किया गया था । 1998 की सेशन मामला सं. 205 में तारीख 5 फरवरी, 2000 के अपने निर्णय और आदेश के द्वारा विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने रघुवेन्द्र और उसके चाचा को भगवान सिंह की हत्या कारित करने का दोषी पाया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश के निर्णय और आदेश से व्यथित होकर रघुवेन्द्र और उसके चाचा ने एक अपील फाइल की जो अपीलाधीन निर्णय और आदेश द्वारा खारिज की गई थी । मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा 2000 की दांडिक अपील सं. 754 में तारीख 23 अक्तूबर, 2008 को दिए गए निर्णय और आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने यह अपील फाइल की है । अपीलाधीन निर्णय और आदेश के द्वारा दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि की पुष्टि की गई थी । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – दो मुख्य आधार जिन पर रघुवेन्द्र और उसके चाचा की दोषसिद्धि की गई थी, वह गुड्डी बाई (अभियोजन साक्षी 13), साधना (अभियोजन साक्षी 14) इसी कथन और चिकित्सीय साक्ष्य पर आधारित थी । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने यह निष्कर्ष निकाला कि गुड्डी बाई और साधना पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं था और उनका यह मत था कि कथनों के आधार पर उनका यह मत था कि रघुवेन्द्र और उसके चाचा के बताए जाने पर मृतक से संबंधित वस्तुओं की बरामदगी और "अंतिम बार देखे जाने के वर्णन" के आधार पर उन्हें दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त पारिस्थितिक साक्ष्य था । (पैरा 8)

इस संबंध में कोई संदेह नहीं है कि रघुवेन्द्र मृतक को भलीभांति जानता था और कदाचित कुछ चोरियों में अन्तर्वलित थे । गुड्डी बाई और साधना भी रघुवेन्द्र को जानते थे । चूंकि वे उनके घर पर प्रायः आता था इसलिए रघुवेन्द्र की शिनाख्त हमारे समक्ष मुद्दा नहीं है । अभिलेख पर यह भी स्पष्ट हुआ है कि रघुवेन्द्र और उसके चाचा तारीख 9 फरवरी, 1998 को विदिशा में मृतक के निवास पर रात भर रुके थे और अगली सुबह बिलासपुर के लिए चले गए थे । तारीख 10 फरवरी, 1998 के प्रातःकाल भगवान सिंह का शव गुलाब अहीरवार

(अभियोजन साक्षी 3) के खेतों में पाया गया था । प्रथम इत्तिला सूचना रजिस्ट्रीकृत की गई थी । यह तथ्य कि मृतक रघुवेन्द्र के साथ "अंतिम बार" देखा गया था और उसका शव तत्पश्चात् तुरन्त ही इस तथ्य के साथ पाया गया था कि मृतक से संबंधित कतिपय वस्तुएं रघुवेन्द्र और उसके चाचा की अभिरक्षा से बरामद की गई थीं और उनके बताए जाने पर ही उन्हें बरामद किया गया था । यह संदेह के लिए कोई गुंजाइश नहीं है कि वे तीनों साथ-साथ यात्रा कर रहे थे । रघुवेन्द्र और उसके चाचा से बरामद की गई वस्तुओं में से एक पर्स मृतक से संबंधित था और उसके वस्त्र सहित कुछ और वैयक्तिक वस्तुएं भी थीं । ये मृतक से संबंधित शिनाख्त की गई थी और यह कदाचित उसके बिलासपुर की यात्रा करते समय उसके साथ थीं । (पैरा 12, 13 और 14)

इन तथ्यों के आधार पर इस संबंध में किसी भी प्रकार का कोई संदेह नहीं है कि भगवान सिंह की मृत्यु रघुवेन्द्र और उसके चाचा द्वारा कारित की गई थी । कोई अन्य निष्कर्ष संभव नहीं है या इतना ही सुझाया गया है । विधि का कोई सारभूत प्रश्न इस मामले में उद्भूत नहीं हुआ है और विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश और इसी भांति उच्च न्यायालय द्वारा पाए गए तथ्यों के आधार पर न्यायालय दंड संहिता, 1860 की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए रघुवेन्द्र की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता है । (पैरा 15 और 16)

दांडिक (अपीली) अधिकारिता : 2010 की दांडिक अपील सं. 2371.

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा 2000 की दांडिक अपील सं. 754 में तारीख 23 अक्तूबर, 2008 को दिए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री एस. के. सब्बरवाल

प्रत्यर्थी की ओर से श्री मिश्रा सौरभ

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर ने दिया ।

न्या. लोकुर – मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा 2000 की दांडिक अपील सं. 754 में तारीख 23 अक्तूबर, 2008 को दिए गए निर्णय और आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने यह अपील फाइल की है । अपीलाधीन निर्णय और आदेश के द्वारा दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि की पुष्टि की गई थी । हम अपील में कोई गुणता नहीं पाते हैं

और यह खारिज की जाती है ।

2. तारीख 10 फरवरी, 1998 को इत्तिलाकर्ता गुलाब अहीरवार (अभियोजन साक्षी 3) ने अपने खेतों में एक शव पाया था । उसने तुरन्त ही पुलिस को सूचित किया और उसकी सूचना के आधार पर एक प्रथम इत्तिला सूचना अभिलिखित की गई थी । शव के निकट कुछ वस्तुएं भी पड़ी हुई बरामद की गई थीं ।

3. शव की तुरन्त ही शिनाख्त नहीं हो सकी थी अपितु तत्पश्चात् एक भिन्न पूर्णतया एक मामले में अन्वेषण के दौरान पुलिस ने रघुवेन्द्र को पकड़ा था और तारीख 16 मार्च, 1998 को उससे पूछताछ के दौरान उसने मृतक की अपने चाचा की सहायता से हत्या किए जाने की संस्वीकृति की । रघुवेन्द्र द्वारा किए गए इस कथन के आधार पर गुड्डी बाई (मृतक की विधवा पत्नी अभियोजन साक्षी 13) और साधना (मृतक की पुत्री अभियोजन साक्षी 14) से शव की शिनाख्त की गई थी ।

4. अन्वेषणों से यह भी स्पष्ट होता है कि मृतक भगवान सिंह को रघुवेन्द्र और उसके चाचा जानते थे । वे प्रकट रूप से अनेक चोरियों में अन्तर्वलित थे और उनके आगमों के हिस्सेदारी के संबंध में उनके बीच कुछ विवाद था । रघुवेन्द्र और उसके चाचा प्रायः भगवान सिंह के निवास पर जाते थे और वे साथ-साथ शराब भी पीते थे ।

5. 9 फरवरी, 1998 को उसके चाचा विदिशा में रघुवेन्द्र मृतक के घर गए थे और वे अगली सुबह अर्थात् 10 फरवरी, 1998 को बिलासपुर के लिए चले गए थे । इसके तुरन्त तत्पश्चात् ही भगवान सिंह का शव गुलाब अहीरवार (अभियोजन साक्षी 3) के खेतों में पाया गया था ।

6. अन्वेषण के अनुक्रम के दौरान अन्वेषक अधिकारी ने रघुवेन्द्र और उसके चाचा के बताए जाने पर भोपाल में मृतक की कतिपय वस्तुओं को भी बरामद किया था ।

7. इन सभी व्यापक तथ्यों के आधार पर रघुवेन्द्र और उसके चाचा के विरुद्ध एक आरोप पत्र फाइल किया गया था और भगवान सिंह की हत्या करने के लिए आरोपित किया गया था और तद्द्वारा दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित किया गया था । दोनों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और इसलिए विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश खुराई, जिला सागर, मध्य प्रदेश द्वारा विचारण किया गया था । 1998 की सेशन मामला सं. 205 में तारीख 5

फरवरी, 2000 के अपने निर्णय और आदेश के द्वारा विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने रघुवेन्द्र और उसके चाचा को भगवान सिंह की हत्या कारित करने का दोषी पाया ।

8. दो मुख्य आधार जिन पर रघुवेन्द्र और उसके चाचा की दोषसिद्धि की गई थी, वह गुड्डी बाई (अभियोजन साक्षी 13), साधना (अभियोजन साक्षी 14) इसी कथन और चिकित्सीय साक्ष्य पर आधारित थी । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने यह निष्कर्ष निकाला कि गुड्डी बाई और साधना पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं था और उनका यह मत था कि कथनों के आधार पर उनका यह मत था कि रघुवेन्द्र और उसके चाचा के बताए जाने पर मृतक से संबंधित वस्तुओं की बरामदगी और "अंतिम बार देखे जाने के वर्णन" के आधार पर उन्हें दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त पारिस्थितिक साक्ष्य था ।

9. विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश के निर्णय और आदेश से व्यथित होकर रघुवेन्द्र और उसके चाचा ने एक अपील फाइल की जो अपीलाधीन निर्णय और आदेश द्वारा खारिज की गई थी ।

10. उच्च न्यायालय ने मामले के अभिलेख की परीक्षा की और यह भी पाया कि गुड्डी बाई और साधना पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं था । दोनों साक्षी रघुवेन्द्र और उसके चाचा को अच्छी तरह से जानते थे । चूंकि वे उनके घर पर प्रायः आते थे । उच्च न्यायालय ने यह भी निष्कर्ष निकाला "अंतिम बार देखे जाने का वर्णन" मामले के तथ्यों पर लागू होता था । चूंकि रघुवेन्द्र और उसके चाचा मृतक के घर पर तारीख 9 फरवरी, 1998 को आए थे, रात भर रुके थे और उसके साथ तारीख 10 फरवरी, 1998 के प्रातःकाल को बिलासपुर के लिए चले गए थे । तत्पश्चात् तुरन्त ही भगवान सिंह का शव गुलाब अहीरवार (अभियोजन साक्षी 3) के खेतों से बरामद किया गया था । यद्यपि इसकी तुरन्त ही शिनाख्त नहीं की गई थी । इन तथ्यों के साथ रघुवेन्द्र और उसके चाचा के बताए जाने पर मृतक से संबंधित कतिपय वस्तुओं की बरामदगी उच्च न्यायालय द्वारा उनकी दोषसिद्धि की अभिपुष्टि करने के लिए अवलंब लिया गया था ।

11. केवल रघुवेन्द्र ने हमारे समक्ष अपनी दोषसिद्धि को चुनौती दी है, उसके चाचा ने इस न्यायालय के समक्ष कोई अर्जी फाइल नहीं की है ।

12. इस संबंध में कोई संदेह नहीं है कि रघुवेन्द्र मृतक को भलीभांति जानता था और कदाचित कुछ चोरियों में अन्तर्वलित थे । गुड्डी बाई और

साधना भी रघुवेन्द्र को जानते थे । चूंकि वे उनके घर पर प्रायः आता था इसलिए रघुवेन्द्र की शिनाख्त हमारे समक्ष मुद्दा नहीं है ।

13. अभिलेख पर यह भी स्पष्ट हुआ है कि रघुवेन्द्र और उसके चाचा तारीख 9 फरवरी, 1998 को विदीशा में मृतक के निवास पर रात भर रुके थे और अगली सुबह बिलासपुर के लिए चले गए थे । तारीख 10 फरवरी, 1998 के प्रातःकाल भगवान सिंह का शव गुलाब अहीरवार (अभियोजन साक्षी 3) के खेतों में पाया गया था । प्रथम इत्तिला सूचना रजिस्ट्रीकृत की गई थी ।

14. यह तथ्य कि मृतक रघुवेन्द्र के साथ "अंतिम बार" देखा गया था और उसका शव तत्पश्चात् तुरन्त ही इस तथ्य के साथ पाया गया था कि मृतक से संबंधित कतिपय वस्तुएं रघुवेन्द्र और उसके चाचा की अभिरक्षा से बरामद की गई थीं और उनके बताए जाने पर ही उन्हें बरामद किया गया था । यह संदेह के लिए कोई गुंजाइश नहीं है कि वे तीनों साथ-साथ यात्रा कर रहे थे । रघुवेन्द्र और उसके चाचा से बरामद की गई वस्तुओं में से एक पर्स मृतक से संबंधित था और उसके वस्त्र सहित कुछ और वैयक्तिक वस्तुएं भी थीं । ये मृतक से संबंधित शिनाख्त की गई थीं और यह कदाचित उसके बिलासपुर की यात्रा करते समय उसके साथ थीं ।

15. इन तथ्यों के आधार पर इस संबंध में किसी भी प्रकार का कोई संदेह नहीं है कि भगवान सिंह की मृत्यु रघुवेन्द्र और उसके चाचा द्वारा कारित की गई थी । कोई अन्य निष्कर्ष संभव नहीं है या इतना ही सुझाया गया है ।

16. विधि का कोई सारभूत प्रश्न इस मामले में उद्भूत नहीं हुआ है और विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश और इसी भांति उच्च न्यायालय द्वारा पाए गए तथ्यों के आधार पर हम दंड संहिता, 1860 की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए रघुवेन्द्र की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाते हैं ।

17. तद्नुसार, अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

अनू.

[2015] 2 उम. नि. प. 23

नागराजा राव

बनाम

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो

16 जनवरी, 2015

न्यायमूर्ति फकीर मोहम्मद इब्राहिम कलीऩल्ला और
न्यायमूर्ति अभय मनोहर सपरे

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 31 – एक ही विचारण में कई अपराधों के लिए दोषसिद्ध होने के मामलों में दंडादेश – अभियुक्त को एक ही विचारण में भारतीय दंड संहिता और भारतीय डाकघर अधिनियम के अधीन किए गए अपराधों के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – दोनों दंडादेशों को साथ-साथ या क्रमवर्ती चलने का उल्लेख न किया जाना – दंडादेश अधिनिर्णीत करते समय प्रथम बार के न्यायालय के लिए यह वैध रूप से आबद्धकर है कि दोषसिद्धि के आदेश में स्पष्ट शब्दों में यह विनिर्दिष्ट करे कि अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश "साथ-साथ" चलेंगे या वे "क्रमवर्ती" चलेंगे ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 31 [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 381 और भारतीय डाकघर अधिनियम, 1898 की धारा 52] – एक ही विचारण में कई अपराधों के लिए दोषसिद्ध होने के मामलों में दंडादेश – अभियुक्त को एक ही विचारण में दो अधिनियमों के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – दंडादेशों को "साथ-साथ" या "क्रमवर्ती" चलने का उल्लेख न किया जाना – विधि के स्थिर सिद्धांतों, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में दोनों दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया जाना उचित है और इससे न्याय की पूर्ति हो जाएगी ।

अभियुक्त-अपीलार्थी सुसंगत समय पर डाक विभाग में बंगलौर पैकेट छंटाई कार्यालय में छंटाई सहायक के रूप में कार्यरत था । तारीख 5 मार्च और 6 मार्च, 1993 की मध्यवर्ती रात्रि में जब वह ड्यूटी पर था तो उसने एक रजिस्ट्रीकृत बीमाकृत पार्सल की चोरी कर ली, जिसमें एक सोने की जंजीर थी, जिसका मूल्य 70,410/- रुपए था और जिसे इसके स्वामी द्वारा रामावधी डाकघर, मुम्बई से बंगलौर स्थित परेषिती गुलाब ज्वेलरी शॉप को परिदत्त करने के लिए भेजा गया था । कर्नाटक के मुख्य महाडाकपाल

के कार्यालय में थैली सहायक अधीक्षक ने पार्सल के गुम और चोरी होने के बारे में पता चलने पर तुरंत पुलिस थाने में एक शिकायत दी । अन्वेषण करने पर पार्सल के चोरी करने में अपीलार्थी की सह-अपराधिता प्रकट हुई और इस आधार पर अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 381 और 419 सपठित भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आपराधिक मामला दर्ज किया गया । इसके पश्चात् मामला केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंपा गया । केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने अपीलार्थी के विरुद्ध पूर्वोक्त अपराध कारित करने के लिए उसके विरुद्ध अभियोजन चलाने हेतु अपर मुख्य मैट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, बंगलौर के न्यायालय में आरोप फाइल किया गया मुख्य मैट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 381 और भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । भारतीय दंड संहिता की धारा 419 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए उसे दोषमुक्त कर दिया गया । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने ऊपर यथाउल्लिखित दोनों अपराध कारित करने के लिए दंड अधिनिर्णीत करते समय यह उल्लेख नहीं किया कि क्या दोनों दंड "**साथ-साथ**" चलेंगे या "**क्रमवर्ती**" चलेंगे । दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी ने अपर नगर सिविल और सेशन न्यायाधीश तथा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के मामलों के लिए विशेष न्यायाधीश, बंगलौर के समक्ष अपील फाइल की । अपीली न्यायाधीश ने अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश की पुष्टि की और उसकी अपील खारिज कर दी । अपीलार्थी ने उक्त आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में दांडिक पुनरीक्षण याचिका फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी और परिणामस्वरूप अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखा । अपीलार्थी-अभियुक्त ने विशेष इजाजत लेकर इस आदेश के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस अपील में इस न्यायालय के विचार करने के लिए जो प्रश्न उद्भूत होता है, वह यह है कि अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता और भारतीय डाकघर अधिनियम के अधीन दिए गए दंडादेश क्या "**साथ-साथ**" चलने चाहिएं या "**क्रमवर्ती**" । अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता या/और किसी अन्य विशेष अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध का एक ही विचारण या अधिक में दोषी पाए जाने पर उसे दंड अधिनिर्णीत करते समय दंड प्रक्रिया संहिता में वर्णित "**साथ-साथ**" और "**क्रमवर्ती**" अभिव्यक्तियों का बहुत महत्व है । इसका कारण यह है कि पूर्ववर्ती अधिनिर्णीत करने से

अभियुक्त को फायदा प्राप्त होता है जबकि पश्चात्वर्ती अधिनिर्णीत करना अभियुक्त के हित के लिए हानिकर होता है । इसलिए दंडादेश अधिनिर्णीत करते समय प्रथम बार के न्यायालय के लिए यह वैध रूप से आबद्धकर है कि दोषसिद्धि के आदेश में स्पष्ट शब्दों में यह विनिर्दिष्ट करे कि अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश "**साथ-साथ**" चलेंगे या वे "**क्रमवर्ती**" चलेंगे । (पैरा 12 और 13)

न्यायालय की सुविचारित राय में, यह एक ऐसा उपयुक्त मामला है जहां हम अपीलार्थी को दिए गए दंडादेशों को इस कारण "**साथ-साथ**" चलने का निदेश दे सकते हैं कि प्रथमतः, मामला जिससे यह अपील उद्भूत हुई है वर्ष 1993 का है और 21 वर्ष की लंबी अवधि से लंबित है ; द्वितीयतः, दोनों दंडादेश, जो अपीलार्थी पर अधिरोपित किए गए हैं, वे भारतीय दंड संहिता की धारा 381 के अधीन दंडनीय चोरी के एक अपराध से उद्भूत हुए हैं ; तृतीयतः, अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के उपबंधों का अवलंब लिया जाना चाहिए क्योंकि वह डाक विभाग का कर्मचारी था ; चतुर्थतः, सोने की जंजीर बहुत पहले ही बरामद की गई थी और संबंधित व्यक्ति को सौंप दी गई थी ; पंचमतः, अपीलार्थी को आक्षेपित दोषसिद्धि के कारण पहले ही सेवा से हटा दिया गया था और अंतिमतः, अपीलार्थी लंबी अवधि से हृदय रोग से पीड़ित है, जैसा कि अपीलार्थी के तारीख 3 नवम्बर, 2014 के शपथपत्र के साथ फाइल किए गए दस्तावेजों से साबित होता है । इन सभी कारणों से, न्यायालय की सुविचारित राय में, अपीलार्थी को दिए गए दोनों दंडादेशों को "**साथ-साथ**" चलने का निदेश देने से न्याय की पूर्ति हो जाएगी । चूंकि इस न्यायालय ने दोषसिद्धि, जिसे अपीलार्थी द्वारा इस अपील में चुनौती नहीं दी गई है, को कायम रखा है इसलिए अपील न्यायालय द्वारा दोनों दंडादेशों को "**साथ-साथ**" चलने का निदेश पारित किया जा सकता है क्योंकि ऐसे निदेश दोषसिद्धि की अभिपुष्टि के पारिणामिक और आनुषंगिक प्रकृति के होते हैं । (पैरा 21 और 22)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 2 एस. सी. सी. 153 : **मनोज** उर्फ **पानू** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	19
[2009]	(2009) 5 एस. सी. सी. 238 : **पंजाब राज्य** बनाम **मदन लाल** ;	19

[2006] (2006) 12 एस. सी. सी. 37 :
चतर सिंह बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ; 19

[2001] (2001) 6 एस. सी. सी. 311 :
महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य बनाम
नजाकत अलिया मुबारक अली ; 18

[1988] (1988) 4 एस. सी. सी. 183 :
मोहम्मद अख्तर हुसैन उर्फ **इब्राहिम अहमद भाट्टी**
बनाम **सहायक सीमा-शुल्क कलक्टर (निवारण)**
अहमदाबाद और अन्य ; 17

[1975] (1975) 3 एस. सी. सी. 156 :
सावल दास बनाम **बिहार राज्य** । 22

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2015 की दांडिक अपील सं. 104.

2009 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 924 में बंगलौर स्थित कर्नाटक उच्च न्यायालय के तारीख 25 अप्रैल, 2014 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री राघवेन्द्र एस. श्रीवास्तव और अमित ए. पाई

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री टी. ए. खान, (श्रीमती) चारुल सरीन और बी. वी. बलराम दास

न्यायालय का निर्णय अभय मनोहर सपरे ने दिया ।

न्या. सपरे – इजाजत दी गई ।

2. अभियुक्त द्वारा यह अपील 2009 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 924 में बंगलौर स्थित कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 25 अप्रैल, 2014 को पारित किए गए उस निर्णय और अंतिम आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया और 1995 के आपराधिक मामला सं. 2408 में 17वें अपर मुख्य मैट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, बंगलौर द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 381 और भारतीय डाकघर अधिनियम, 1898 की धारा 52 के अधीन दंडनीय अपराधों

के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करते हुए तारीख 23 सितम्बर, 2008/1 अक्तूबर, 2008 को पारित किए गए उस आदेश को कायम रखा, जिसकी 2008 की दांडिक अपील सं. 845 में 21वें अपर नगर सिविल और सेशन न्यायाधीश तथा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के मामलों के लिए विशेष न्यायाधीश, बंगलौर द्वारा तारीख 8 अक्तूबर, 2009 को पारित किए गए आदेश द्वारा पुष्टि की गई थी ।

3. इस मामले के तथ्य अति संक्षिप्त हैं ।

4. अपीलार्थी-अभियुक्त सुसंगत समय पर (तारीख 1 मार्च, 1992 से 11 मार्च, 1993 तक) बंगलौर पैकेट छंटाई कार्यालय, मुख्य अभिलेख कार्यालय (मुख्य इकाई) बंगलौर में छंटाई सहायक के रूप में कार्यरत था । तारीख 5 मार्च और 6 मार्च, 1993 की मध्यवर्ती रात्रि में अपीलार्थी-अभियुक्त जब ड्यूटी पर था तो उसने एक रजिस्ट्रीकृत बीमाकृत पार्सल की चोरी कर ली, जिसका प्राप्ति सं. 0127, तारीख 3 मार्च, 1993 था और जिसमें 173.650 ग्राम वजन की सोने की जंजीर (वी आकार की) थी, जिसका मूल्य 70,410/- रुपए था और जिसे इसके स्वामी द्वारा रामावधी डाकघर, मुम्बई से के. एच. बी. रोड डाकघर, बंगलौर स्थित परेषिती गुलाब ज्वेलरी शॉप को परिदत्त करने के लिए भेजा गया था । इस प्रकार पार्सल संबंधित पक्षकार को परिदत्त नहीं हो सका यद्यपि यह बंगलौर के डाकघर में पहुंचा था ।

5. कर्नाटक के मुख्य महाडाकपाल के कार्यालय में थैली सहायक अधीक्षक, श्री एम. एन. नरसिम्हा मूर्ति (अभि. सा. 1) ने पार्सल के गुम और चोरी होने के बारे में पता चलने पर तुरंत हाई ग्राउंड्स पुलिस थाने में एक शिकायत (प्रदर्श पी-1) दी । तद्नुसार, शिकायत के आधार पर अन्वेषण किया गया, जिसमें पार्सल के चोरी करने में अपीलार्थी की सह-अपराधिता प्रकट हुई और इस आधार पर अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 381 और 419 सपठित भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए 1993 का आपराधिक मामला सं. 115 दर्ज किया गया । इसके पश्चात् मामला केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंपा गया । केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने मामला आरसी सं. 14(एस)/93-बीएलआर दर्ज किया, जिसके आधार पर अपीलार्थी के विरुद्ध पूर्वोक्त अपराध कारित करने के लिए उसके विरुद्ध अभियोजन चलाने हेतु 17वें अपर मुख्य मैट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, बंगलौर के न्यायालय में आरोप फाइल किया गया ।

6. अपीलार्थी ने दोषी होने से इनकार किया और विचारण किए जाने का दावा किया । मुख्य मैट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट ने 1995 के आपराधिक मामला सं. 2408 में तारीख 23 सितम्बर, 2008/1 अक्तूबर, 2008 को पारित किए गए अपने आदेश द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 381 और भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और भारतीय दंड संहिता की धारा 381 के अधीन छह माह का साधारण कारावास भोगने और 2000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने की रकम का संदाय करने में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का और साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया । इसी प्रकार, अपीलार्थी को भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए भी छह माह का साधारण कारावास भोगने और 2000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने की रकम का संदाय करने में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का और साधारण कारावास भोगने के लिए दंडादेश दिया गया । जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 419 के अधीन दंडनीय अपराध का संबंध है, अपीलार्थी को इस आरोप से दोषमुक्त कर दिया गया ।

7. यह उल्लेखनीय है कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने ऊपर यथा उल्लिखित दोनों अपराध कारित करने के लिए दंड अधिनिर्णीत करते समय यह उल्लेख नहीं किया कि क्या दोनों दंड "**साथ-साथ**" चलेंगे या "**क्रमवर्ती**" चलेंगे । दूसरे शब्दों में, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट का आदेश, जहां तक इसका संबंध दंड अधिनिर्णीत करने से है, इस विवाद्यक पर मौन है ।

8. दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी ने 21वें अपर नगर सिविल और सेशन न्यायाधीश तथा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के मामलों के लिए विशेष न्यायाधीश, बंगलौर के समक्ष 2008 की दांडिक अपील सं. 845 फाइल की । अपीली न्यायाधीश ने तारीख 8 अक्तूबर, 2009 के अपने आदेश द्वारा अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश की पुष्टि की और उसकी अपील खारिज कर दी । अपीलार्थी ने उक्त आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में 2009 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 924 फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी और परिणामस्वरूप अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखा । अपीलार्थी-अभियुक्त ने विशेष इजाजत लेकर इस आदेश के विरुद्ध यह अपील फाइल की है ।

9. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने आक्षेपित आदेश की

वैधता और शुद्धता को चुनौती देते हुए केवल एक मुद्दे पर याचना की । तथापि, विद्वान् काउंसेल ने दोषसिद्धि की शुद्धता को इसके गुणागुण के आधार पर प्रश्नगत नहीं किया और अपनी चुनौती केवल अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेशों तक सीमित रखी । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, निचले न्यायालयों ने अपीलार्थी को अधिनिर्णीत दंडादेशों, अर्थात् एक भारतीय दंड संहिता की धारा 381 के अधीन और दूसरा भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के अधीन अधिनिर्णीत, को "**साथ-साथ**" चलने का निदेश न देकर गलती की है । विद्वान् काउंसेल की यह दलील है कि चूंकि दोनों अपराधों का विचारण, जिनके परिणामस्वरूप अपीलार्थी की दो अलग-अलग अधिनियमों (भारतीय दंड संहिता और भारतीय डाकघर अधिनियम) के अधीन दोषसिद्धि की गई, एक ही विचारण में किया गया था और वे एक ही कृत्य अर्थात् – "चोरी" से उद्भूत हुए थे, इसलिए यह एक ऐसा उपयुक्त मामला था, जहां निचले न्यायालयों को दोनों दंडादेश "**साथ-साथ**" चलने का निदेश देना चाहिए था । विद्वान् काउंसेल ने उल्लेख किया कि इस प्रकृति के प्रत्येक मामले में न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "संहिता" कहा गया है) की धारा 31 के उपबंधों का अवलंब लेकर दोषसिद्धि के आदेश में विनिर्दिष्ट रूप से यह उल्लेख करे कि अलग-अलग धाराओं के अधीन अधिनिर्णीत दंडादेश "**साथ-साथ**" चलेंगे या "**क्रमवर्ती**" चलेंगे । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि किसी भी स्थिति में अपीलार्थी द्वारा कारित अपराध की प्रकृति, उसकी प्रौढ़ आयु (61 वर्ष), दस्तावेजों द्वारा सम्यक् रूप से साबित दंडादेश भुगतने के दौरान उसे कारित गंभीर हृदय रोग, यह तथ्य कि उसकी दोषसिद्धि के कारण उसे पहले ही सेवा से हटा दिया गया है, को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय को संहिता की धारा 31 का अवलंब लेना चाहिए और दोनों दंडादेशों, अर्थात् एक भारतीय दंड संहिता और दूसरा भारतीय डाकघर अधिनियम के अधीन अधिनिर्णीत, को "**क्रमवर्ती**" चलने के बजाय "**साथ-साथ**" चलने का निदेश देना चाहिए ।

10. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया और यह दलील दी कि आक्षेपित निर्णय में कोई हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है ।

11. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुनने और मामले के अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् हमारा यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों में बल है ।

12. इस अपील में हमारे विचार करने के लिए जो प्रश्न उद्‌भूत होता है, वह यह है कि अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता और भारतीय डाकघर अधिनियम के अधीन दिए गए दंडादेश क्या "**साथ-साथ**" चलने चाहिएं या "**क्रमवर्ती**" चलने चाहिएं ?

13. अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता या/और किसी अन्य विशेष अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध का एक ही विचारण या अधिक में दोषी पाए जाने पर उसे दंड अधिनिर्णीत करते समय संहिता में वर्णित "**साथ-साथ**" और "**क्रमवर्ती**" अभिव्यक्तियों का बहुत महत्व है । इसका कारण यह है कि पूर्ववर्ती अधिनिर्णीत करने से अभियुक्त को फायदा प्राप्त होता है जबकि पश्चात्‌वर्ती अधिनिर्णीत करना अभियुक्त के हित के लिए हानिकर होता है । इसलिए दंडादेश अधिनिर्णीत करते समय प्रथम बार के न्यायालय के लिए यह वैध रूप से आबद्धकर है कि दोषसिद्धि के आदेश में स्पष्ट शब्दों में यह विनिर्दिष्ट करे कि अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश "**साथ-साथ**" चलेंगे या वे "**क्रमवर्ती**" चलेंगे ।

14. संहिता की धारा 31 में उन मामलों में दंडादेश अधिनिर्णीत करने की न्यायालय की शक्ति उपबंधित है, जहां अभियुक्त को एक ही विचारण में कई अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया जाता है । यह धारा निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "**31. एक ही विचारण में कई अपराधों के लिए दोषसिद्ध होने के मामलों में दंडादेश** – (1) जब एक विचारण में कोई व्यक्ति दो या अधिक अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया जाता है तब, भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 71 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, न्यायालय उसे उन अपराधों के लिए विहित विभिन्न दंडों में से उन दंडों के लिए, जिन्हें देने के लिए ऐसा न्यायालय सक्षम है, दंडादेश दे सकता है ; जब ऐसे दंड कारावास के रूप में हों तब, यदि न्यायालय ने यह निदेश न दिया हो कि ऐसे दंड साथ-साथ भोगे जाएंगे, तो वे ऐसे क्रम से एक के बाद एक प्रारंभ होंगे जिसका न्यायालय निदेश दे ।
>
> (2) दंडादेशों के क्रमवर्ती होने की दशा में केवल इस कारण से कि कई अपराधों के लिए संकलित दंड उस दंड से अधिक है जो वह न्यायालय एक अपराध के लिए दोषसिद्धि पर देने के लिए सक्षम है, न्यायालय के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि अपराधी को उच्चतर न्यायालय के समक्ष विचारण के लिए भेजे :

परंतु –

(क) किसी भी दशा में ऐसा व्यक्ति चौदह वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास के लिए दंडादिष्ट नहीं किया जाएगा ;

(ख) संकलित दंड उस दंड की मात्रा के दुगने से अधिक न होगा जिसे एक अपराध के लिए देने के लिए वह न्यायालय सक्षम है ।

(3) किसी सिद्धदोष व्यक्ति द्वारा अपील के प्रयोजन के लिए उन क्रमवर्ती दंडादेशों का योग, जो इस धारा के अधीन उसके विरुद्ध दिए गए हैं, एक दंडादेश समझा जाएगा ।"

15. यह विवाद्यक कि अभियुक्त को एक ही विचारण या अधिक में एक से अधिक अपराध के लिए दोषसिद्ध किए जाने पर न्यायालय को किन परिस्थितियों में दंडोदशों को "**साथ-साथ**" या "**क्रमवर्ती**" चलने का निदेश करना चाहिए, इस न्यायालय में कई मामलों में विषयवस्तु रहा है और इस प्रकार अब यह अनिर्णीत विषय नहीं रह गया है । इस न्यायालय द्वारा इस विवाद्यक पर विचार संहिता की धारा 31, 427 और 428 तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 71 की व्याप्ति पर विचार करते हुए किया गया था ।

16. हम कुछ विनिश्चियों को निर्दिष्ट करना उचित समझते हैं ।

17. **मोहम्मद अख्तर हुसैन** उर्फ **इब्राहिम अहमद भाट्टी** बनाम **सहायक सीमा-शुल्क कलक्टर (निवारण) अहमदाबाद और अन्य**[1] वाले मामले में अभियुक्त के कब्जे में 1.4 करोड़ रुपए का प्राथमिक स्वर्ण पाए जाने पर, जो कि स्वर्ण (नियंत्रण) अधिनियम के अतिक्रमण में था, उसे सात वर्ष का कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया था और दस लाख रुपए का जुर्माना अधिरोपित किया गया था । इसके पश्चात् उसे 12.5 करोड़ रुपए मूल्य के स्वर्ण की तस्करी करने और 11.5 करोड़ रुपए मूल्य की चांदी का निर्यात करने के लिए सीमा-शुल्क अधिनियम के उपबंधों का अतिलंघन करने के लिए अभ्यारोपित किया गया था । अभियुक्त पर अपराध कारित करने का दोषी ठहराते हुए चार वर्ष का कारावास और जुर्माना भी अधिनिर्णीत किया गया । दोनों दंडादेशों को "**क्रमवर्ती**" चलने का निदेश दिया गया । तथापि, राज्य ने यह दलील दी कि सीमाशुल्क अधिनियम के अधीन अपराध अधिकतम दंडादेश देने योग्य है, जबकि अभियुक्त ने यह दलील दी कि दंडादेश "**साथ-साथ**" चलने चाहिएं । तथापि, उच्च न्यायालय

[1] (1988) 4 एस. सी. सी. 183.

ने राज्य द्वारा दी गई दलील अनुसार दंडादेश में वृद्धि कर दी और दंडादेश अधिनिर्णीत करने की बाबत अभियुक्त के अभिवाक् को नामंजूर कर दिया । अभियुक्त द्वारा फाइल की गई अपील में इस न्यायालय ने उसके द्वारा किए गए अभिवाक् को स्वीकार किया और संहिता की धारा 427 के प्रतिनिर्देश करके उसकी अपील को मंजूर करते हुए दोनों दंडादेशों को "**साथ-साथ**" चलने का निदेश दिया । इस न्यायालय द्वारा पैरा 9 और 10 में की गई निम्नलिखित मताभिव्यक्तियां उपयोगी हैं :–

> "9. यह धारा दांडिक न्याय प्रशासन से संबंधित है और इसमें दंडादिष्ट करने की प्रक्रिया उपबंधित है । इसलिए दंडादिष्ट करने वाले न्यायालय के लिए यह अपेक्षित है कि वह इस बात पर विचार करे और उचित आदेश करे कि पश्चात्वर्ती मामले में पारित किया गया दंडादेश कैसे चलेगा । क्या यह साथ-साथ चलना चाहिए या समवर्ती ?
>
> 10. साथ-साथ चलने वाले दंडादेशों के लिए वर्षों से अनुभवसिद्ध मूल नियम तथाकथित एकल संव्यवहार नियम रहा है । यदि किसी प्रस्तुत संव्यवहार में दो अधिनियमितियों के अधीन दो अपराध बनते हैं, तो साधारणतया क्रमवर्ती दंडादेश देना गलत है । उचित और विधिसम्मत यह है कि दंडादेश साथ-साथ चलने वाले दिए जाएं । किंतु यह नियम वहां लागू नहीं होगा यदि अपराधों से संबंधित संव्यवहार एक नहीं है या दो अपराध गठित करने वाले तथ्य पूरी तरह से भिन्न हैं ।"

18. इसी प्रकार, **महाराष्ट्र राज्य और एक अन्य** बनाम **नजाकत अलिया मुबारक अली**[1] वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष यह प्रश्न उद्भूत हुआ कि क्या एक के बाद दूसरे दो मामलों में दोषसिद्ध अभियुक्त अन्वेषण, जांच या विचारण के दौरान निरोध की अवधि का दोनों मामलों में दोषसिद्ध होने पर अधिरोपित दंडादेश से मुज़रा कराने का हकदार है या नहीं । संहिता की धारा 428 का निर्वचन करते हुए न्यायाधीशों के बहुमत ने प्रश्न का सकारात्मक उत्तर दिया । प्रश्न का उत्तर देते हुए न्यायमूर्ति थॉमस ने न्यायाधीशों के बहुमत की ओर से निर्णय लिखते हुए निम्नलिखित मताभिव्यक्तियां कीं, जो कि प्रासंगिक हैं :–

> "17. उपरोक्त संदर्भ में, यह उल्लेख करना उचित है कि प्रायः

---

[1] (2001) 6 एस. सी. सी. 311.

यह घटित होता है कि जब किसी अभियुक्त को अलग-अलग अपराधों के अधीन एक ही मामले में दोषसिद्ध किया जाता है और ऐसे प्रत्येक अपराध के लिए अलग-अलग अवधि के कारावास का दंडादेश दिया जाता है, तो ऐसे सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया जाता है । इसके पीछे यह मंतव्य है कि उसके द्वारा एक अपराध के लिए भोगे जाने वाला कारावास वस्तुतः और प्रभावतः दूसरे अपराध के लिए भी कारावास होगा ।"

19. **चतर सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1], **पंजाब राज्य** बनाम **मदन लाल**[2] और अंतिमतः हाल ही में **मनोज** उर्फ **पानू** बनाम **हरियाणा राज्य**[3] वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त सिद्धांत का अवलंब लिया गया, जिनमें इस न्यायालय ने संहिता की धारा 31 का अवलंब लेते हुए लगभग इसी प्रकार के तथ्यों में यह निदेश दिया कि अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश "**क्रमवर्ती**" के स्थान पर "**साथ-साथ**" चलेंगे ।

20. पूर्वोक्त विधि के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए और इसे संहिता की धारा 31 के अधीन उपलब्ध शक्ति को ध्यान में रखकर इस मामले के तथ्यों पर लागू करते हुए हमारी यह सुविचारित राय है कि प्रस्तुत मामले में अपीलार्थी को दिए गए दंडादेश "**साथ-साथ**" चलने चाहिएं और हम ऐसा निदेश धारा 31 का अवलंब लेते हुए दे रहे हैं जो न्यायालय को ऐसा निदेश देने के लिए समर्थ बनाती है ।

21. हमारी सुविचारित राय में, यह एक ऐसा उपयुक्त मामला है जहां हम अपीलार्थी को दिए गए दंडादेशों को इस कारण "**साथ-साथ**" चलने का निदेश दे सकते हैं कि प्रथमतः, मामला जिससे यह अपील उद्भूत हुई है वर्ष 1993 का है और 21 वर्ष की लंबी अवधि से लंबित है ; द्वितीयतः, दोनों दंडादेश, जो अपीलार्थी पर अधिरोपित किए गए हैं, वे भारतीय दंड संहिता की धारा 381 के अधीन दंडनीय चोरी के एक अपराध से उद्भूत हुए हैं; तृतीयतः, अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के उपबंधों का अवलंब लिया जाना चाहिए क्योंकि वह डाक विभाग का कर्मचारी था; चतुर्थतः, सोने की जंजीर बहुत पहले ही बरामद की गई थी और संबंधित व्यक्ति को सौंप दी गई थी; पंचमतः, अपीलार्थी को आक्षेपित

---

[1] (2006) 12 एस. सी. सी. 37.

[2] (2009) 5 एस. सी. सी. 238.

[3] (2014) 2 एस. सी. सी. 153.

दोषसिद्धि के कारण पहले ही सेवा से हटा दिया गया था और अंतिमतः, अपीलार्थी लंबी अवधि से हृदय रोग से पीड़ित है, जैसा कि अपीलार्थी के तारीख 3 नवम्बर, 2014 के शपथपत्र के साथ फाइल किए गए दस्तावेजों से साबित होता है ।

22. इन सभी कारणों से, हमारी सुविचारित राय में, अपीलार्थी को दिए गए दोनों दंडादेशों को "**साथ-साथ**" चलने का निदेश देने से न्याय की पूर्ति हो जाएगी । चूंकि हमने दोषसिद्धि, जिसे अपीलार्थी द्वारा इस अपील में चुनौती नहीं दी गई है, को कायम रखा है इसलिए अपील न्यायालय द्वारा दोनों दंडादेशों को "**साथ-साथ**" चलने का निदेश पारित किया जा सकता है क्योंकि ऐसे निदेश, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **सावल दास** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, दोषसिद्धि की अभिपुष्टि के पारिणामिक और आनुषंगिक प्रकृति के होते हैं ।

23. पूर्ववर्ती चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह अपील सफल होती है और भागतः मंजूर की जाती है । निचले न्यायालयों द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 381 और भारतीय डाकघर अधिनियम की धारा 52 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दिए गए दंडादेश कायम रखे जाते हैं । तथापि, यह निदेश दिया जाता है कि अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता और भारतीय डाकघर अधिनियम के अधीन दिए गए दोनों दंडादेश "**साथ-साथ**" चलेंगे ।

24. परिणामतः, यदि अपीलार्थी ने उस पर अधिरोपित दंडादेश की अवधि को पहले ही भुगत लिया है, तो उसे, यदि वह किसी अन्य मामले के संबंध में अपेक्षित नहीं है, तुरंत रिहा कर दिया जाए ।

अपील भागतः मंजूर की गई ।

जस.

---

[1] (1975) 3 एस. सी. सी. 156.

[2015] 2 उम. नि. प. 35

दासिन बाई उर्फ शांति बाई

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य

11 फरवरी, 2015

न्यायमूर्ति एम. वाई. इकबाल और न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 3 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 32] – हत्या – मृत्युकालिक कथन – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य से यह साबित होता है कि अभियुक्त ने मृतक पर मिट्टी का तेल छिड़का तथा माचिस की तीली से आग लगा दी तथा मृतक ने अपने मृत्युकालिक कथन में यह बताया कि अभियुक्त द्वारा उपरोक्त अपराध किया गया वहां मृत्युकालिक कथन में कोई खामी न होने और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्यों में कोई असंगतता न होने के कारण दोषसिद्ध ठहराए जाने का दायी है ।

तारीख 1 फरवरी, 2000 को सायंकाल राजू रजक नाम का एक व्यक्ति (जो इस मामले में मृतक है) होटल में अपना कार्य समाप्त करने के पश्चात् रेलवे स्टेशन के निकट करगी रोड पर टहल रहा था । वहीं उसकी मुलाकात दासिन बाई जो इस मामले में अपीलार्थी है, से हुई । दासिन बाई के निवेदन पर वह दासिन बाई को कोटसागर पाड़ा, कोटा स्थित मकान पर छोड़ने गया और उसे वहां छोड़ने के पश्चात् जब राजू रजक वापस आ रहा था, दासिन बाई ने उसे अपने (दासिन बाई के) मकान पर ठहरने के लिए कहा । मृतक रजाई ओढ़कर वहां सो गया । जब वह सोया हुआ था, दासिन बाई ने जेरीकेन में रखा हुआ मिट्टी का तेल उस पर उंडेल दिया । मिट्टी के तेल की गंध से मृतक जाग गया और उसी समय दासिन बाई ने उसमें माचिस से आग लगा दी । वह जल गया और सहायता के लिए चिल्लाया । उसके चीखने की आवाज सुनकर, एक पड़ोसी संतोष यादव और अन्य व्यक्ति दासिन बाई के मकान की ओर दौड़े । संतोष यादव ने शाल से मृतक का शरीर ढक दिया और उस समय दासिन बाई वहां खड़ी हुई थी । संतोष यादव राजू रजक को बाहर लाया और मिट्टी के तेल की गंध अभी भी राजू के शरीर से आ रही थी । राजू ने बताया कि दासिन बाई

ने उस पर मिट्टी का तेल उंडेला है और आग लगाई है । राजू को प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, कोटा ले जाया गया और उसके पश्चात् उसे उपचार के लिए जिला अस्पताल, बिलासपुर ले जाया गया जहां तारीख 3 फरवरी, 2000 को उसकी मृत्यु हो गई । अस्पताल में राजू का मृत्युकालिक कथन एस. एल. सोनी द्वारा राधेश्याम, संतोष और बसंत सिंह की मौजूदगी में अभिलिखित किया गया । अन्वेषण अधिकारी ने जला हुआ बिस्तर, चादर, प्लास्टिक की जेरीकेन, माचिस, आधी जली हुई माचिस की तीली और एक कलाई घड़ी घटनास्थल से अभिगृहीत किए । अन्वेषण किए जाने पर यह पाया गया कि दासिन बाई ने मृतक को आग में जलाकर उसकी हत्या की है । उसे गिरफ्तार कर लिया गया, आरोप पत्र फाइल किया गया और मामला विचारण के लिए सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर दिया गया । अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने के लिए 12 साक्षियों की परीक्षा कराई । अभियुक्त का कथन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किया गया । अभियुक्त ने अपनी प्रतिरक्षा में एक साक्षी अर्थात् बसंत सिंह ठाकुर की परीक्षा कराई । सेशन न्यायालय ने दोनों पक्षों के काउंसेलों को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् अपने तारीख 29 सितंबर, 2001 के निर्णय द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया और आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया । दोषसिद्धि और दंडादेश के उक्त निर्णय से व्यथित होकर, अपीलार्थी ने छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर के समक्ष अपील प्रस्तुत की । उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा की गई दोषसिद्धि के निर्णय और दिए गए दंडादेश को कायम रखा तथा अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील खारिज कर दी । उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी ने जेल से यह अपील याचिका फाइल की है । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस न्यायालय ने अनेक मामलों में यह मत व्यक्त किया है कि मृत्युकालिक कथन की सत्यता पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है विशेषकर इस कारण से कि उनके बीच संगतता है । रवि और एक अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि मृत्युकालिक कथन की सत्यता या अन्यथा पर संदेह नहीं किया जा सकता है, किसी अभियुक्त की दोषसिद्धि मात्र मृत्युकालिक कथन के आधार पर की जा सकती है और विधि में मृत्युकालिक कथन की किसी भी प्रकार की सम्पुष्टि किया जाना अपेक्षित नहीं है । न्यायालय के

समक्ष प्रस्तुत तथ्यात्मक स्थिति के आधार पर न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि संतोष यादव और राधेश्याम के कथनों के बीच संगतता है और ये दोनों साक्षी क्षतियों के परिणामस्वरूप हुई राजू की मृत्यु के पूर्व उसके द्वारा दिए गए मौखिक मृत्युकालिक कथन के समय पर अस्पताल में मौजूद थे । इन दोनों साक्षियों के कथनों में संगतता है क्योंकि दोनों साक्षियों ने यह कथन किया है कि वे "बचाओ-बचाओ" की आवाज सुनकर दासिन बाई के घर पहुंचे थे । वर्तमान मामले पर ऊपर उल्लिखित मामलों के विनिश्चयाधार को लागू करते हुए न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि अपीलार्थी के काउंसेल ने इसी के अनुसार दलील दी है । मात्र इस कारण से कि मृतक को 70 प्रतिशत दाह क्षतियां पहुंची थीं, यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि मृतक मौखिक मृत्युकालिक कथन नहीं दे सकता था । न्यायालय की यह राय है कि उच्च न्यायालय ने मृतक के मौखिक मृत्युकालिक कथन पर विश्वास करके ठीक ही किया है क्योंकि कथन में कोई भी कमी नहीं है । अतः, प्रत्यर्थी का यह प्रतिवाद कि मृतक मृत्युकालिक कथन दे ही नहीं सकता था, सारहीन है । न्यायालय का यह मत है कि वर्तमान मामला पारिस्थितिक साक्ष्य से संबंधित है और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 भी इसको लागू होती है जिसके अधीन स्पष्ट रूप से किसी भी तथ्य, विशेषकर जो किसी व्यक्ति की जानकारी में हो, से संबंधित विधि अधिकथित की गई है । राजस्थान राज्य बनाम काशी राम वाले मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के संबंध में इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त किया गया है कि जब कोई ऐसा तथ्य हो, जो विशेषकर किसी व्यक्ति की जानकारी में हो, उस तथ्य को साबित करने का भार उसी व्यक्ति पर होगा । अपीलार्थी/अभियुक्त ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने कथन में ऐसा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है कि मृतक किस प्रकार जला और अभियुक्त/अपीलार्थी ने यह भी स्वीकार किया है कि वह मृतक का नाम भी नहीं जानती थी । यह अत्यंत असंभावी है और इससे अभियुक्त की निर्दोषिता पर संदेह होता है । वह साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अधीन सबूत का भार निर्वहन करने में असफल रही है क्योंकि यह बात उसकी विशेष जानकारी में थी कि मृतक उसके मकान के परिसर में कैसे आया । इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 1 और अभि. सा. 3 जिन्होंने मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया था, अभियुक्त के पड़ोसी हैं और इसलिए विचारण न्यायालय ने यह ठीक ही अभिनिर्धारित किया है कि वे हितबद्ध साक्षी नहीं हैं । विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों से

यह तथ्य भी सामने आता है कि उन साक्षियों की अपीलार्थी से कोई भी शत्रुता नहीं थी और वे दुर्घटना वाली रात्रि में ही उसके घर आए थे । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने इन साक्षियों के साक्ष्य और ऊपर निर्दिष्ट मृत्युकालिक कथन में कही गई बातों का विश्लेषण ठीक ही किया है और अभियुक्त को दोषी ठीक ही ठहराया है । ऐसा होने पर इस मामले में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । यह अपील असफल होती है और खारिज की जाती है । खर्चों के लिए कोई भी आदेश नहीं किया जाता है । (पैरा 10, 12, 14, 15, 18, 20 और 21)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2002] (2002) 6 एस. सी. सी. 399 :
पोथाकुमारी श्रीनिवासुलु बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** । 13

निर्दिष्ट निर्णय

[2013] (2013) 8 एस. सी. सी. 60 :
बाबू उर्फ **बाला सुब्रह्मणियम और एक अन्य** बनाम
तमिलनाडु राज्य ; 17

[2006] (2006) 12 एस. सी. सी. 254 :
राजस्थान राज्य बनाम **काशी राम** ; 15

[2004] (2004) 10 एस. सी. सी. 776 :
रवि और एक अन्य बनाम **तमिलनाडु राज्य** ; 10

[1992] (1992) 3 एस. सी. सी. 43 :
मुलख राज और अन्य बनाम **सतीश कुमार**
और अन्य ; 19

[1992] (1992) 4 एस. सी. सी. 69 :
मफाभाई नागरभाई रावल बनाम **गुजरात राज्य** । 11

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2008 की दांडिक अपील सं. 827.

2001 की दांडिक अपील सं. 1171 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर के तारीख 1 दिसंबर, 2006 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री चेतन्य सिद्धार्थ (अपर अधिवक्ता)

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री अपूर्व कुरुप, (सुश्री) साक्षी कक्कड़ और सी. डी. सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष ने दिया ।

न्या. घोष – यह अपील 2001 की दांडिक अपील सं. 1171 में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर द्वारा पारित किए गए तारीख 1 दिसंबर, 2006 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध दासिन बाई द्वारा फाइल की गई है और इस अपील में उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को मान्य ठहराते हुए अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील खारिज की है । अभियोजन पक्ष द्वारा उल्लिखित मामले के तथ्य संक्षेप में निम्न प्रकार हैं ।

2. तारीख 1 फरवरी, 2000 को सायंकाल राजू रजक नाम का एक व्यक्ति (जो इस मामले में मृतक है) होटल में अपना कार्य समाप्त करने के पश्चात् रेलवे स्टेशन के निकट करगी रोड पर टहल रहा था । वहीं उसकी मुलाकात दासिन बाई जो इस मामले में अपीलार्थी है, से हुई । दासिन बाई के निवेदन पर वह दासिन बाई को कोटसागर पाड़ा, कोटा स्थित मकान पर छोड़ने गया और उसे वहां छोड़ने के पश्चात् जब राजू रजक वापस आ रहा था, दासिन बाई ने उसे अपने (दासिन बाई के) मकान पर ठहरने के लिए कहा । मृतक रजाई ओढ़कर वहां सो गया । जब वह सोया हुआ था, दासिन बाई ने जेरीकेन में रखा हुआ मिट्टी का तेल उस पर उंडेल दिया । मिट्टी के तेल की गंध से मृतक जाग गया और उसी समय दासिन बाई ने उसमें माचिस से आग लगा दी । वह जल गया और सहायता के लिए चिल्लाया । उसके चीखने की आवाज सुनकर, एक पड़ोसी संतोष यादव और अन्य व्यक्ति दासिन बाई के मकान की ओर दौड़े ।

3. संतोष यादव ने शाल से मृतक का शरीर ढक दिया और उस समय दासिन बाई वहां खड़ी हुई थी । संतोष यादव (अभि. सा. 1) राजू रजक को बाहर लाया और मिट्टी के तेल की गंध अभी भी राजू के शरीर से आ रही थी । राजू ने बताया कि दासिन बाई ने उस पर मिट्टी का तेल उंडेला है और आग लगाई है । राजू को प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, कोटा ले जाया गया और उसके पश्चात् उसे उपचार के लिए जिला अस्पताल, बिलासपुर ले जाया गया जहां तारीख 3 फरवरी, 2000 को उसकी मृत्यु हो गई । अस्पताल में राजू का मृत्युकालिक कथन एस. एल. सोनी (अभि.

सा. 12) द्वारा राधेश्याम (अभि. सा. 3), संतोष और बसंत सिंह की मौजूदगी में अभिलिखित किया गया ।

4. अन्वेषण अधिकारी ने जला हुआ बिस्तर, चादर, प्लास्टिक की जेरीकेन, माचिस, आधी जली हुई माचिस की तीली और एक कलाई घड़ी घटनास्थल से अभिगृहीत किए । अन्वेषण किए जाने पर यह पाया गया कि दासिन बाई ने मृतक को आग में जलाकर उसकी हत्या की है । उसे गिरफ्तार कर लिया गया, आरोप पत्र फाइल किया गया और मामला विचारण के लिए सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर दिया गया ।

5. अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने के लिए 12 साक्षियों की परीक्षा कराई । अभियुक्त का कथन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किया गया । अभियुक्त ने अपनी प्रतिरक्षा में एक साक्षी अर्थात् बसंत सिंह ठाकुर की परीक्षा कराई ।

6. सेशन न्यायालय ने दोनों पक्षों के काउंसेलों को सुनने और अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् अपने तारीख 29 सितंबर, 2001 के निर्णय द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया और आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया । दोषसिद्धि और दंडादेश के उक्त निर्णय से व्यथित होकर, अपीलार्थी ने छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर के समक्ष अपील प्रस्तुत की । उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा की गई दोषसिद्धि के निर्णय और दिए गए दंडादेश को कायम रखा तथा अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई अपील खारिज कर दी । उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी ने जेल से यह अपील याचिका फाइल की है ।

7. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय को मृत्युकालिक कथन का अवलंब नहीं लेना चाहिए था । अपीलार्थी का यह पक्षकथन था कि मृतक को पहुंची दाह क्षतियों की गंभीरता पर विचार करते हुए मृतक के लिए यह संभव नहीं था कि वह मृत्युकालिक कथन दे पाता । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने भी दलील दी है कि अभियोजन पक्ष द्वारा उपलब्ध कराया गया साक्ष्य स्वतंत्र और निष्पक्ष नहीं है क्योंकि उन्होंने हितबद्ध साक्षियों का साक्ष्य प्रस्तुत किया है ।

8. इसके प्रतिकूल प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया है ।

9. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना है । हमें मृत्युकालिक कथन की सत्यता पर संदेह करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है विशेषकर इस कारण से कि उनके बीच संगतता है ।

10. इस न्यायालय ने अनेक मामलों में यह मत व्यक्त किया है कि मृत्युकालिक कथन की सत्यता पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है विशेषकर इस कारण से कि उनके बीच संगतता है । **रवि और एक अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि मृत्युकालिक कथन की सत्यता या अन्यथा पर संदेह नहीं किया जा सकता है, किसी अभियुक्त की दोषसिद्धि मात्र मृत्युकालिक कथन के आधार पर की जा सकती है और विधि में मृत्युकालिक कथन की किसी भी प्रकार की सम्पुष्टि किया जाना अपेक्षित नहीं है ।

11. **मफाभाई नागरभाई रावल** बनाम **गुजरात राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "इस पर विचार किया जाना चाहिए कि अभि. सा. 2 ने पांच मिनट के भीतर कथन अभिलिखित किया और कथन में समय का भी उल्लेख किया । उच्च न्यायालय ने यह ठीक ही इंगित किया है कि दोनों मृत्युकालिक कथन सत्य और स्वेच्छा से दिए गए हैं । प्रतिरक्षा पक्ष का यह पक्षकथन नहीं है कि उसने सिखाए-पढ़ाए जाने के पश्चात् कथन दिया है । प्रतिरक्षा पक्ष ने सम्पूर्ण बल मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किए जाने के तरीके पर दिया है और इस आधार पर बल दिया है कि मृतका की दशा गंभीर थी और वह ऐसे कथन नहीं दे सकती थी । ऊपर उल्लिखित इन पहलुओं के आधार पर, चिकित्सक का साक्ष्य महत्वपूर्ण और सुसंगत है । हमने चिकित्सक तथा कार्यकारी मजिस्ट्रेट के साक्ष्य का परिशीलन किया है । हमें उनके साक्ष्य को त्यक्त करने के लिए पूर्णतया कोई कमी दिखाई नहीं देती । अतः यह स्पष्ट होता है कि दोनों मृत्युकालिक कथन स्वतंत्र साक्षियों द्वारा अभिलिखित किए गए हैं और इन कथनों से घटना का सत्य वृत्तांत प्राप्त होता है जैसाकि मृतक द्वारा कथन किया गया है । स्वयं मृत्युकालिक कथन अपीलार्थी को दोषी ठहराने के

---

[1] (2004) 10 एस. सी. सी. 776.

[2] (1992) 4 एस. सी. सी. 69.

लिए पर्याप्त है । उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में हस्तक्षेप करके ठीक ही किया है । तद्नुसार अपील खारिज की जाती है ।"

12. हमारे समक्ष प्रस्तुत तथ्यात्मक स्थिति के आधार पर हमारा यह निष्कर्ष है कि संतोष यादव (अभि. सा. 1) और राधेश्याम (अभि. सा. 3) के कथनों के बीच संगतता है और ये दोनों साक्षी क्षतियों के परिणामस्वरूप हुई राजू की मृत्यु के पूर्व उसके द्वारा दिए गए मौखिक मृत्युकालिक कथन के समय पर अस्पताल में मौजूद थे । इन दोनों साक्षियों के कथनों में संगतता है क्योंकि दोनों साक्षियों ने यह कथन किया है कि वे "बचाओ-बचाओ" की आवाज सुनकर दासिन बाई के घर पहुंचे थे ।

13. इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी ने यह अभिकथन किया है कि मृत्युकालिक कथन देना मृतक के लिए असंभव था क्योंकि वह कथन देने की स्थिति में ही नहीं था, और इसका यह कारण था कि उसे दाह क्षतियां पहुंची थीं । तथापि, इस न्यायालय ने **पोथाकुमारी श्रीनिवासुलु** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत की गई स्थिति पर निम्न मत व्यक्त किया है :–

> "अपीलार्थी की विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि मृत्युकालिक कथन पर कई कारणों से विश्वास नहीं किया जा सकता है । काउंसेल ने यह दलील दी है कि मृतका को पहुंची क्षतियों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए यह संभव है कि वह बोल नहीं सकती थी और अवश्य ही वह अचानक अचेत हो गई होगी । तथापि, दो चिकित्सकों सहित जिन्होंने क्रमशः आहत की चिकित्सा-विधिक परीक्षा की थी किसी भी साक्षी के समक्ष ऐसा कोई भी सुझाव नहीं रखा गया है । इसके प्रतिकूल 3 प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने सकारात्मक रूप से यह कथन किया है कि मृतका घटना के तत्काल पश्चात् उस समय बोल रही थी जब वे उससे मिले थे । मृतका की मृत्यु घटना के दो दिन के पश्चात् हुई थी । इस सकारात्मक साक्ष्य के आधार पर हम यह उपधारित नहीं कर सकते हैं कि आहत क्षतियों के कारण बेहोश हो गई थी और बोलने की स्थिति में नहीं थी और हम इस उपधारणा के आधार पर स्वतंत्र साक्षियों को दिए गए मृत्युकालिक कथन को त्यक्त नहीं कर सकते जिसकी सम्पुष्टि तत्काल दर्ज कराई गई प्रथम

---

[1] (2002) 6 एस. सी. सी. 399.

इत्तिला रिपोर्ट से होती है ।"

14. वर्तमान मामले पर ऊपर उल्लिखित मामलों के विनिश्चयाधार को लागू करते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अपीलार्थी के काउंसेल ने इसी के अनुसार दलील दी है । मात्र इस कारण से कि मृतक को 70 प्रतिशत दाह क्षतियां पहुंची थीं, यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि मृतक मौखिक मृत्युकालिक कथन नहीं दे सकता था । हमारी यह राय है कि उच्च न्यायालय ने मृतक के मौखिक मृत्युकालिक कथन पर विश्वास करके ठीक ही किया है क्योंकि कथन में कोई भी कमी नहीं है । अतः, प्रत्यर्थी का यह प्रतिवाद कि मृतक मृत्युकालिक कथन दे ही नहीं सकता था, सारहीन है ।

15. हमारा यह मत है कि वर्तमान मामला पारिस्थितिक साक्ष्य से संबंधित है और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 भी इसको लागू होती है जिसके अधीन स्पष्ट रूप से किसी भी तथ्य, विशेषकर जो किसी व्यक्ति की जानकारी में हो, से संबंधित विधि अधिकथित की गई है । **राजस्थान राज्य** बनाम **काशी राम**[1] वाले मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के संबंध में इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त किया गया है कि जब कोई ऐसा तथ्य हो, जो विशेषकर किसी व्यक्ति की जानकारी में हो, उस तथ्य को साबित करने का भार उसी व्यक्ति पर होगा । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है :–

> "साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के उपबंध स्वयं स्पष्ट और सटीक हैं जिनके अंतर्गत यह अधिकथित किया गया है कि जब कोई तथ्य जो विशेषकर किसी व्यक्ति की जानकारी में हो, उस तथ्य को साबित करने का भार उसी व्यक्ति पर होगा । इस प्रकार, यदि कोई व्यक्ति अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया है, तब उस व्यक्ति को यह स्पष्ट करना होगा कि कैसे और कब वह मृतक से अलग हुआ था । उस व्यक्ति को ऐसी रीति में स्पष्ट करना होगा जो न्यायालय के लिए संभावी हो और जिससे न्यायालय का समाधान भी हो जाए । यदि वह ऐसा करता है तब उसे साबित करने के भार से निर्मुक्त माना जाना चाहिए । यदि वह उन तथ्यों के आधार पर कोई स्पष्टीकरण देने में असफल रहता है जो उसकी विशेष जानकारी में थे, तब उसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अधीन सबूत के भार

---

[1] (2006) 12 एस. सी. सी. 254.

से निर्मुक्त होने में असफल माना जाएगा ।"

16. इसके अतिरिक्त, पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित ऐसे मामलों पर विचार करते हुए जिनमें अभियुक्त को विशेष जानकारी होती है, इस न्यायालय ने कई बार यह दोहराया है, "पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित मामले में यदि अभियुक्त धारा 106 के अधीन उस पर आए सबूत के भार का निर्वहन करने के संबंध में युक्तियुक्त स्पष्टीकरण देने में असफल रहता है तब इससे स्वयं साक्ष्य की एक ऐसी अतिरिक्त कड़ी उपलब्ध हो जाती है जो अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य की शृंखला को पूर्ण बनाती है" ।

17. **बाबू** उर्फ **बाला सुब्रह्मणियम और एक अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामले में ऐसा ही मत व्यक्त किया गया है कि "अपीलार्थी-1 उक्त तथ्यों के संबंध में अपनी विशेष जानकारी होने के कारण स्पष्टीकरण दे सकता था जिससे भिन्न निष्कर्ष निकाला जा सकता था । चूंकि उसने ऐसा नहीं किया है इसलिए इस परिस्थिति से अन्य परिस्थितियों की सम्पुष्टि हो जाती है जिससे अभियोजन पक्षकथन प्रबलित हो जाता है" ।

18. अपीलार्थी-अभियुक्त ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किए गए अपने कथन में ऐसा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है कि मृतक किस प्रकार जला और अभियुक्त-अपीलार्थी ने यह भी स्वीकार किया है कि वह मृतक का नाम भी नहीं जानती थी । यह अत्यंत असंभावी है और इससे अभियुक्त की निर्दोषिता पर संदेह होता है । वह साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 के अधीन सबूत का भार निर्वहन करने में असफल रही है क्योंकि यह बात उसकी विशेष जानकारी में थी कि मृतक उसके मकान के परिसर में कैसे आया ।

19. अपीलार्थी द्वारा प्रतिरक्षा में लिया गया यह आधार प्रबल नहीं है कि अभियुक्त की हत्या करने के लिए उसका कोई हेतु नहीं था और इससे उसके विरुद्ध बनी परिस्थितियों की शृंखला में कोई कमी नहीं आती है । अतः, जब तथ्य स्पष्ट हो गए हैं, तब यह आवश्यक नहीं है कि दोषसिद्धि किए जाने के लिए हेतु या दुर्भावना को साबित किया जाए । (**मुलख राज और अन्य** बनाम **सतीश कुमार और अन्य**[2] वाला मामला देखिए ।)

---

[1] (2013) 8 एस. सी. सी. 60.

[2] (1992) 3 एस. सी. सी. 43.

20. इसके अतिरिक्त, अभि. सा. 1 और अभि. सा. 3 जिन्होंने मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया था, अभियुक्त के पड़ोसी हैं और इसलिए विचारण न्यायालय ने यह ठीक ही अभिनिर्धारित किया है कि वे हितबद्ध साक्षी नहीं हैं । विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों से यह तथ्य भी सामने आता है कि उन साक्षियों की अपीलार्थी से कोई भी शत्रुता नहीं थी और वे दुर्घटना वाली रात्रि में ही उसके घर आए थे ।

21. विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने इन साक्षियों के साक्ष्य और ऊपर निर्दिष्ट मृत्युकालिक कथन में कही गई बातों का विश्लेषण ठीक ही किया है और अभियुक्त को दोषी ठीक ही ठहराया है । ऐसा होने पर इस मामले में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । यह अपील असफल होती है और खारिज की जाती है । खर्चों के लिए कोई भी आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

अस./पा.

[2015] 2 उम. नि. प. 45

भीम सिंह और एक अन्य

बनाम

उत्तराखंड राज्य

11 फरवरी, 2015

न्यायमूर्ति एम. वाई. इकबाल और न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 304ख और 498क [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4] – दहेज मृत्यु – अभियुक्त-अपीलार्थियों का विवाह से पूर्व दहेज की कोई मांग न किए जाने का अभिवाक् – मृतका के भाई द्वारा इस अभिवाक् को स्वीकार किया जाना – दहेज की मांग किसी भी समय की जा सकती है अर्थात् विवाह से पूर्व, विवाह के समय और विवाह के पश्चात् और यह मांग आवश्यक रूप से विवाह के पूर्व ही की जानी आवश्यक नहीं है ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 113ख और 113क [सपठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 304ख और 498क] – दहेज मृत्यु की उपधारणा – अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा मृतका को कम दहेज लाने के लिए ताने मारना और यातना दिया जाना – मृतका द्वारा अपने माता-पिता को दो अवसरों पर इसकी शिकायत किया जाना – विवाह के पांच माह के भीतर मृतका की मृत्यु हो जाना – उक्त घटनाएं मृतका की मृत्यु के कुछ पूर्व घटित हुई थीं और उसकी मृत्यु सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हुई थी, इसलिए धारा 113ख के अधीन दहेज मृत्यु की उपधारणा उद्भूत होती है ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 304ख और 498क [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख और 113क] – दहेज मृत्यु – अभियुक्त-अपीलार्थियों का अभिवाक् कि मृतका ने विष खाकर आत्महत्या की और उसके पश्चात् स्वयं को आग लगा ली – यदि इसे आत्महत्या का मामला मान भी लिया जाए, तो भी साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क के अधीन यह साबित करने का भार अभियुक्तों पर था कि उन्होंने मृतका को आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित नहीं किया, और अभियुक्तों द्वारा धारा 113क और धारा 113ख के अधीन उपधारणाओं का खंडन न किए जाने पर उनकी दोषसिद्धि और दंडादेश उचित हैं ।

दंड संहिता, 1860 – धारा 304ख और 498क [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113क और 113ख] – दहेज मृत्यु – पारिस्थितिक साक्ष्य – अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत की गई परिस्थितियों की शृंखला अटूट है, इसलिए अभियुक्त-अपीलार्थियों की दोषसिद्धि और दंडादेश उचित हैं ।

अपीलार्थी सं. 1 भीम सिंह का विवाह तारीख 4 मई, 1997 को प्रेमा देवी (मृतका) के साथ हुआ था । आन सिंह और नैन सिंह भीम सिंह के भाई हैं । प्रेमा देवी की तारीख 26 सितम्बर, 1997 को उसकी ससुराल में अप्राकृतिक मृत्यु हो गई । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से यह प्रकट होता है कि मृतका के शरीर पर 90 प्रतिशत दाह क्षतियां थीं । मृतका के भाई द्वारा मामले की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, अन्य बातों के साथ-साथ, यह कथन करते हुए दर्ज कराई गई कि उसकी बहिन श्रीमती प्रेमा देवी का विवाह भीम सिंह से हुआ था । भीम सिंह के बड़े भाई अर्थात् आन सिंह ने विवाह तय करने में बिचौलिए की भूमिका निभाई थी । उपर्युक्त विवाह में कई सारी

चीजें दी गई थीं । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह कथन किया गया कि शिकायतकर्ता की बहिन, प्रेमा देवी ने उसे यह बताया था कि जब वह विवाह के पश्चात् अपनी ससुराल गई थी, तब उसके पति भीम सिंह, आन सिंह, नैन सिंह, जो गोंविद सिंह के पुत्र हैं, और आन सिंह की पत्नी श्रीमती जानकी देवी उसे यह कहकर ताने मारते थे और यातना देते थे कि वह दहेज में कुछ भी लेकर नहीं आई है । जब उसने ये बातें अपने माता-पिता को बताईं तो उन्होंने प्रेमा देवी को समझाया और उसे कहा कि वह अपने परिवार के साथ सामंजस्य बनाए और उनके साथ सौहार्दपूर्वक रहे । उसके पश्चात् जब वह राखी के अवसर पर अपने माता-पिता के घर आई तो उसने उन्हें बताया कि भीम सिंह, आन सिंह, नैन सिंह और जानकी देवी उसे ताने मारते रहते हैं और यातना देते हैं । उसने यह भी बताया कि बड़ा भाई आन सिंह संपूर्ण गांव के समक्ष उसकी बेइज्जती करने की धमकी देता है और अपने माता-पिता के घर से कपड़े और अन्य सामान लाने के लिए दबाव देता है । तारीख 27 सितम्बर, 1997 को शिकायतकर्ता को यह सूचना मिली कि उसकी बहिन की जलने के कारण मृत्यु हो गई है । यह सूचना प्राप्त होने पर वे तुरंत प्रेमा की ससुराल गए और उन्होंने उसे मृत पाया । वह पूरी तरह से जली हुई थी । उन्हें बताया गया कि उसने अपने आप को आग लगा ली थी । पुलिस द्वारा मामले का अन्वेषण किया गया और अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् सभी चारों अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने के पश्चात् कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थियों की दोषिता को साबित करने में सफल रहा है, उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । अभियुक्त भीम सिंह और आन सिंह (इस अपील में अपीलार्थी सं. 1 और 2) को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध का भी दोषी ठहराया गया और दोनों को कठोर आजीवन कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । अपीलार्थियों को दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन अपराधों के लिए भी दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अपीलार्थियों द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि अभियोजन पक्ष ने भीम सिंह और आन सिंह के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और 304ख और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन दंडनीय अपराध के आरोप को सफलतापूर्वक साबित किया है । अभिलेख पर के

संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने यद्यपि नैन सिंह और जानकी देवी को दोषमुक्त कर दिया । वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में अपीलार्थी सं. 1 और 2 को पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध किया । अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियुक्तों ने यह प्रतिरक्षा ली है कि अभियोजन साक्षियों ने भी अपने कथनों में यह कहा है कि विवाह से पूर्व दहेज की कोई मांग नहीं की गई थी और विवाह दोनों पक्षकारों की सहमति से संपन्न हुआ था । उन्होंने यह भी प्रतिरक्षा ली कि मृतका के परिवार वालों द्वारा पहले दहेज की मांग की पुलिस में कोई शिकायत नहीं की गई थी । तथापि, इस न्यायालय के विनिश्चयों और भारतीय समाज में व्याप्त दहेज की सामाजिक बुराई को ध्यान में रखते हुए यह प्रतिरक्षा कसौटी पर खरी नहीं उतरती । दहेज के लिए मांग किसी भी समय की जा सकती है न कि आवश्यक रूप से विवाह के पूर्व ही । अपीलार्थियों ने यह भी अभिवाक् किया है कि गाली-गलौज या यातना देने की कोई विनिर्दिष्ट घटनाएं नहीं हैं । किंतु वर्तमान मामले में अभि. सा. 3 त्रिलोक सिंह ने अपने कथन में स्पष्ट तौर पर यह कहा है कि आन सिंह दुर्गुण के अनुष्ठान, जो कि विवाह के पश्चात् मनाया जाता है, पर आया था जिसमें उसने सभी व्यक्तियों की मौजूदगी में यह कहा था कि उसे उस धन की भी वसूली नहीं हुई है जो उसने विवाह में खर्च किया था और वह नाराज हो गया था । अभियोजन साक्षियों ने भी यह कथन किया है कि मृतका प्रेमा देवी ने भी दो बार अपने परिवार वालों से चारों अभियुक्तों द्वारा ताने मारने और दहेज के लिए मांग करने के संबंध में शिकायत की थी । ये घटनाएं "उसकी मृत्यु के कुछ पूर्व" घटित हुई थीं क्योंकि उसकी उसके विवाह के पांच माह के भीतर मृत्यु हो गई थी । इस बात से भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दंडनीय दहेज मृत्यु के बारे में साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपधारणा उद्भूत होती है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख और भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के संयुक्त वाचन से यह दर्शित होता है कि यह दर्शित करने के लिए सामग्री का होना आवश्यक है कि विपदग्रस्त की मृत्यु से कुछ पूर्व उसके साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था । अभियोजन पक्ष को प्राकृतिक या दुर्घटनावश मृत्यु की संभावना को खारिज करना चाहिए ताकि इसे "सामान्य परिस्थितियों से

अन्यथा होने वाली मृत्यु'' की परिधि के अंतर्गत लाया जा सके । अभियोजन पक्ष यह दर्शित करने के लिए आबद्ध है कि घटना से कुछ पूर्व दहेज की मांग के लिए या उसके संबंध में क्रूरता की गई थी या तंग किया गया था । दूसरे शब्दों में, अभियोजन पक्ष यह साबित करे कि स्त्री की मृत्यु के कुछ पूर्व दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में उसके साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था । अभियोजन पक्ष ने सटीक साक्ष्य प्रस्तुत करके यह साबित किया है कि स्त्री की मृत्यु के कुछ पूर्व दहेज की मांग के संबंध में उसके साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था । अतः, न्यायालय के लिए यह आबद्धकर हो जाता है कि यह उपधारणा करे कि यह मृत्यु एक दहेज मृत्यु है । (पैरा 12)

प्रतिरक्षा पक्ष का यह पक्षकथन है कि मृतका ने विष खाकर आत्महत्या करने की कोशिश की और जब उसे यह आशंका हुई कि उसकी मृत्यु होगी या नहीं, उसने स्वयं को आग लगा ली । यह बात स्वीकार किए बिना, यह मान लिया जाए कि श्रीमती प्रेमा ने आत्महत्या की थी, तब भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क के अधीन विवाहित स्त्री को आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करने की उपधारणा का खंडन करने का भार अभियुक्त पर स्थानांतरित हो जाता है । जैसा कि धारा 304ख में है कि जहां अभियोजन पक्ष ने इस धारा के संघटकों को सिद्ध कर दिया हो, वहां न्यायालय दहेज मृत्यु की "उपधारणा करेगा", इसके विपरीत भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क के अधीन न्यायालय को विवेकाधिकार प्रदत्त किया गया है, जिसमें यह उपबंधित है कि न्यायालय आत्महत्या के दुष्प्रेरण की उपधारणा कर सकेगा । इसलिए यह भार अभियुक्त पर होता है कि इस उपधारणा का खंडन करे, और साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख की दशा में, जो भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख से संबंधित है, साबित करने का भार अनन्य रूप से और विशिष्ट रूप से अभियुक्त पर स्थानांतरित हो जाता है । तब भी यदि यह न्यायालय यह मान ले कि मृतका ने आत्महत्या की थी, अभियुक्तों के विरुद्ध साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क में जो उपधारणा है वह ठीक ही उपधारित की गई है क्योंकि पारिस्थितिक साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि उसे यह अंतिम कदम उठाने के लिए मजबूर किया गया होगा क्योंकि अभिकथित आत्महत्या विवाह के सात वर्ष के भीतर कारित की गई थी । पारिस्थितिक साक्ष्य से अभियुक्तों की दोषिता इंगित होती है, क्योंकि अभियोजन पक्ष ने यह साबित किया है कि अभियुक्तों के पास मृतका को विष देने का अवसर था और डाक्टरों ने भी

चिकित्सीय परीक्षण में यह रिपोर्ट दी है कि मृतका एक स्वस्थ स्त्री थी जो अपने परिवार के साथ मिलकर अभियुक्तों के साथ मामले का सुलह करने की कोशिश कर रही थी । यह तथ्य, कि मृत्यु अभियुक्तों के घर में हुई थी, उनकी दोषिता को इंगित करती है । उन्होंने धारा 113क और 113ख के अधीन उपधारणाओं को नासाबित करने के भार का निर्वहन नहीं किया है । इस प्रकार, आत्महत्या करने के प्रश्न से इनकार किया जाता है । न्यायालय इस मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपधारणा करने के लिए आबद्ध है । अभियुक्तों ने यह प्रतिरक्षा ली है कि मृतका की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने स्वयं ग्राम पंचायत को सूचित किया था, जिसके उपरांत ग्राम प्रधान अन्य व्यक्तियों के साथ अभियुक्तों के घर गई, जहां उन्होंने श्रीमती प्रेमा का शव पाया । एक समझदार व्यक्ति, किसी व्यक्ति को मरने से बचाने की कोशिश में मृत व्यक्ति को नजदीकी अस्तपताल में ले जाता और उसके मरने की प्रतीक्षा न करता । अभियुक्तों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई यह दलील भी कि मृतका ने पहले विष खाया और फिर अपनी मृत्यु की आशंका होने पर उसने स्वयं को आग लगा ली, गलत साबित होती है क्योंकि यदि ऐसी स्थिति उद्भूत होती है तो कोई भी युक्तियुक्त व्यक्ति अपनी पत्नी को बचाना चाहेगा । जब तथ्य स्पष्ट हैं, तब यह अतात्विक है कि हेतु साबित होता है या नहीं । इसके अतिरिक्त, जहां स्पष्ट साक्ष्य हो, वहां हेतु का सबूत या वैमनस्य दोषसिद्धि को कायम रखने के लिए अनावश्यक है । (पैरा 13 और 14)

वर्तमान मामले में अभियुक्तों की दोषिता या निर्दोषिता का निष्कर्ष पारिस्थितिक साक्ष्य से निकाला जाना है । पारिस्थितिक साक्ष्य से संबंधित विधि कमोवेश सुस्थिर है । इस न्यायालय ने अनेक निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया है कि जब दोषसिद्धि केवल पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है, तब परिस्थितियों की शृंखला में कोई दरार नहीं होनी चाहिए । यदि शृंखला में कोई दरार है, तो अभियुक्त संदेह के फायदे का हकदार है । अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए पारिस्थितिक साक्ष्य में कोई कड़ी गुम नहीं है, और इसलिए अभियुक्त संदेह के फायदे के हकदार नहीं हैं । अभियुक्तों अर्थात् इस अपील में अपीलार्थी सं. 1 और 2 की भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दोषिता को सफलतापूर्वक सिद्ध किया गया है । अतः, यह न्यायालय उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय में कोई कमी नहीं पाता है । (पैरा 15 और 18)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2011] (2011) 11 एस. सी. सी. 359 :
बंसीलाल बनाम **हरियाणा राज्य** ; 13

[2008] (2008) 16 एस. सी. सी. 148 :
लियाकत बनाम **उत्तरांचल राज्य** ; 17

[2008] (2008) 13 एस. सी. सी. 256 :
कुसुमा अंकमा राव बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ; 17

[2004] (2004) 9 एस. सी. सी. 157 :
कालियापेरुमल और एक अन्य बनाम
तमिलनाडु राज्य ; 12

[2002] (2002) 8 एस. सी. सी. 18 :
गुरप्रीत सिंह बनाम **हरियाणा राज्य** ; 15

[1995] (1995) 6 एस. सी. सी. 219 :
हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम **निक्कू राम**
और अन्य ; 11, 12

[1995] ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 120, 121 :
हेमचंद बनाम **हरियाणा राज्य** ; 13

[1992] (1992) 3 एस. सी. सी. 43 =
ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 1175 :
मुल्ख राज बनाम **सतीश कुमार** ; 14

[1990] 1990 क्रिमिनल ला जर्नल 562, 571
(एस. सी.) :
गुरबचन सिंह बनाम **सतपाल सिंह** ; 13

[1985] [1985] 1 उम. नि. प. 995 =
(1984) 4 एस. सी. सी. 116 :
शरद बिरधीचंद शारदा बनाम **महाराष्ट्र राज्य** । 16

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 2146.

2001 की दांडिक अपील सं. 1706 में नैनीताल स्थित उत्तराखंड

उच्च न्यायालय के तारीख 23 मार्च, 2009 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री ग्रवेश काबरा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री आशुतोष कुमार शर्मा और अभिषेक अत्रे

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष ने दिया ।

न्या. घोष – यह अपील, विशेष इजाजत लेकर, 2001 की दांडिक अपील सं. 1706 में नैनीताल स्थित उत्तराखंड उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 23 मार्च, 2009 को पारित किए गए उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने दो सह-अभियुक्तों (इसमें अपीलार्थी सं. 2 और 3) को दोषमुक्त करते हुए विद्वान् विशेष न्यायाधीश (केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो)/अपर सेशन न्यायाधीश, नैनीताल द्वारा इस अपील में के अपीलार्थी सं. 1 और 2 की यथा अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश कायम रखे और उनकी अपील खारिज कर दी । विद्वान् विशेष न्यायाधीश (केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो)/अपर सेशन न्यायाधीश, नैनीताल ने 1998 के सेशन विचारण सं. 36 में तारीख 25 अप्रैल, 2000 को पारित किए गए अपने निर्णय और आदेश द्वारा इस अपील में अपीलार्थी सं. 1 और 2 को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दोषसिद्ध किया और उन्हें आजीवन कारावास भोगने का दंडादेश दिया और इसके अतिरिक्त सभी अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 489क के अधीन भी दोषसिद्ध किया और प्रत्येक को एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने और 500/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया । सभी अपीलार्थियों को दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन भी दोषसिद्ध किया गया और उनमें से प्रत्येक को तीन माह के साधारण कारावास और जुर्माने से दंडादिष्ट किया ।

2. वे तथ्य जिनसे यह अपील उद्भूत हुई, यह हैं कि भीम सिंह पुत्र गोविंद सिंह, निवासी ग्राम नलियाना, जिला नैनीताल का विवाह तारीख 4 मई, 1997 को प्रेमा देवी (मृतका) के साथ हुआ था । अपीलार्थी सं. 2 और 3 अर्थात् आन सिंह और नैन सिंह भीम सिंह के भाई हैं और अपीलाथी सं. 4 अर्थात् जानकी देवी आन सिंह (इस अपील में अपीलार्थी सं. 2) की पत्नी है । प्रेमा देवी की तारीख 26 सितम्बर, 1997 को उसकी ससुराल में अप्राकृतिक मृत्यु हो गई । प्रेमा देवी की मृत्यु के कुछ पश्चात्

ज्योलीकोट की ग्राम प्रधान, पुष्पा जोशी ने प्रेमा देवी की अप्राकृतिक मृत्यु के बारे में दूरभाष पर उप मण्डल मजिस्ट्रेट को शिकायत की । यह सूचना प्राप्त होने पर मजिस्ट्रेट उप निरीक्षक शिव सिंह गुसैन (अभि. सा. 7) के साथ गांव में आया और शव को अपने कब्जे में लिया और उसी दिन मृत्यु-समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गई । उसी दिन अपराह्न में लगभग 4.55 बजे डा. डी. के. जोशी (अभि. सा. 5) और डा. एच. सी. भट्ट द्वारा मृतका की मरणोत्तर परीक्षा की गई और उन्होंने शव-परीक्षा रिपोर्ट तैयार की । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से यह प्रकट होता है कि मृतका के शरीर पर 90 प्रतिशत दाह क्षतियां थीं । चूंकि चिकित्सा अधिकारियों द्वारा मृत्यु का कारण अभिनिश्चित नहीं किया गया था, इसलिए रासायनिक परीक्षण के लिए विसरा परिरक्षित रखा गया ।

3. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तारीख 27 सितम्बर, 1997 को अपराह्न में लगभग 6.30 बजे पुलिस थाना, तल्लीताल, जिला नैनीताल में श्री बीरबल सिंह संभल द्वारा, अन्य बातों के साथ-साथ, यह कथन करते हुए दर्ज कराई गई कि उसकी बहिन श्रीमती प्रेमा देवी का विवाह भीम सिंह पुत्र गोविंद सिंह के साथ मई, 1997 में गांव ज्योलीकोट, नैनीताल में संपन्न हुआ था । भीम सिंह के बड़े भाई अर्थात् आन सिंह ने विवाह तय करने में बिचौलिए की भूमिका निभाई थी । उपर्युक्त विवाह में कई सारी चीजें दी गई थीं । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह कथन किया गया कि शिकायतकर्ता की बहिन, प्रेमा देवी ने उसे यह बताया था कि जब वह विवाह के पश्चात् अपनी ससुराल गई थी, तब उसके पति भीम सिंह, आन सिंह, नैन सिंह, जो गोंविद सिंह के पुत्र हैं, और आन सिंह की पत्नी श्रीमती जानकी देवी उसे यह कहकर ताने मारते थे और यातना देते थे कि वह दहेज में कुछ भी लेकर नहीं आई है । जब उसने ये बातें अपने माता-पिता को बताईं तो उन्होंने प्रेमा देवी को समझाया और उसे कहा कि वह अपने परिवार के साथ सामंजस्य बनाए और उनके साथ सौहार्दपूर्वक रहे । तथापि, शिकायतकर्ता के पिता ने प्रेमा देवी को आश्वस्त किया कि वह स्वयं उसके ससुराल वालों से बात करेगा और मामले को सुलझाएगा । वे प्रेमा देवी की ससुराल गए और उन्हें समझाने की भरपूर कोशिश की, किंतु मामले को सुलझाने की बजाय वे ताने देने लगे । परिणामस्वरूप, प्रेमा को सलाह दी गई कि वह स्वयं को स्थिति के अनुकूल बनाए । उसके पश्चात् जब वह राखी के अवसर पर अपने माता-पिता के घर आई तो उसने उन्हें बताया कि भीम सिंह, आन सिंह, नैन सिंह और जानकी देवी उसे ताने मारते रहते

हैं और यातना देते हैं । उसने यह भी बताया कि बड़ा भाई आन सिंह संपूर्ण गांव के समक्ष उसकी बेइज्जती करने की धमकी देता है और अपने माता-पिता के घर से कपड़े और अन्य सामान लाने के लिए दबाव देता है । तारीख 27 सितम्बर, 1997 को शिकायतकर्ता को यह सूचना मिली कि उसकी बहिन की जलने के कारण मृत्यु हो गई है । यह सूचना प्राप्त होने पर वे तुरंत प्रेमा की ससुराल गए और उन्होंने उसे मृत पाया । वह पूरी तरह से जली हुई थी । उन्हें बताया गया कि उसने अपने आप को आग लगा ली थी ।

4. बिमला गुंजयाल, पुलिस उप अधीक्षक (अभि. सा. 6) द्वारा अन्वेषण किया गया और अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् सभी चारों अभियुक्तों के विरुद्ध मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष आरोप पत्र फाइल किया गया और मामला विचारण के लिए सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया ।

5. विचारण न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने के पश्चात् कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थियों की दोषिता को साबित करने में सफल रहा है, उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और प्रत्येक को 500/- रुपए के जुर्माने के साथ तीन वर्ष का कठोर कारावास भोगने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर प्रत्येक को पंद्रह दिन का अतिरिक्त साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया । अभियुक्त भीम सिंह और आन सिंह (इस अपील में अपीलार्थी सं. 1 और 2) को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध का भी दोषी ठहराया गया और दोनों को कठोर आजीवन कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । अपीलार्थियों को दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया और प्रत्येक को 500/- रुपए के जुर्माने सहित तीन माह का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने की स्थिति में वे पंद्रह दिन का और साधारण कारावास भोगेंगे । तथापि, सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया गया ।

6. अपीलार्थियों द्वारा विशेष न्यायाधीश (केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो)/अपर सेशन न्यायाधीश, नैनीताल द्वारा 1998 के सेशन विचारण सं. 36 में तारीख 25 अप्रैल, 2000 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "दंड प्रक्रिया संहिता" कहा गया है) की धारा 374 के अधीन अपील फाइल की गई । पक्षकारों

के विद्वान् काउंसेलों को सुनने और विचारण न्यायालय के अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने प्रथमतः, उन दो डाक्टरों के दल द्वारा निकाले गए निष्कर्ष का अवलंब लिया, जिन्होंने मरणोत्तर परीक्षा की थी और शव-परीक्षा रिपोर्ट तैयार की थी । उक्त रिपोर्ट से यह प्रकट होता है कि 90 प्रतिशत दाह क्षतियां थीं और ये सभी दाह क्षतियां त्वचा की गहराई तक थीं । मृत्यु के कारण के बारे में दोनों अधिकारियों डा. डी. के. जोशी और डा. एच. सी. भट्ट ने यह राय व्यक्त की कि मृत्यु का कारण अभिनिश्चित नहीं किया जा सका है, इसलिए विसरा परिरक्षित रखा गया है । विचारण न्यायालय के अभिलेख पर उपलब्ध विसरा रिपोर्ट से यह प्रकट होता है कि उदर, आंत, यकृत, गुर्दा और प्लीहा के टुकड़ों में आर्गेनो क्लोरो कीटनाशी और ईथाइल अल्कोहल विष अंतर्विष्ट था । शव-परीक्षा रिपोर्ट और रसायन परीक्षक की रिपोर्ट के साथ-साथ डा. डी. के. जोशी के कथन से स्पष्ट रूप से यह तथ्य सिद्ध होता है कि मृतका की अप्राकृतिक मृत्यु हुई थी । द्वितीयतः, उच्च न्यायालय ने मृतका के भाई बीरबल सिंह (अभि. सा. 1), मृतका के पिता मान सिंह (अभि. सा. 2) और मृतका के चाचा त्रिलोक सिंह (अभि. सा. 3) के इन कथनों का भी अवलंब लिया कि मृतका का भीम सिंह के साथ विवाह तारीख 7 मई, 1997 को हुआ था और विवाह के पांच माह के भीतर तारीख 26 सितम्बर, 1997 को उसकी अप्राकृतिक मृत्यु हो गई । यह भी उल्लेखनीय है कि अभियुक्तों ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपने उत्तरों में स्वयं यह स्वीकार किया है कि विवाह उक्त तारीख को हुआ था और प्रेमा देवी की अप्राकृतिक मृत्यु हुई थी । एकमात्र विवादग्रस्त प्रश्न, जो उच्च न्यायालय द्वारा विरचित किया गया, यह था कि क्या अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा मृतका के साथ उसकी मृत्यु के पूर्व क्रूरता की गई थी या नहीं । उच्च न्यायालय ने यह पाया कि प्रथमतः, अभियोजन पक्ष ने अभि. सा. 1 बीरबल सिंह, अभि. सा. 2 मान सिंह और अभि. सा. 3 त्रिलोक सिंह द्वारा शपथ पर किए गए कथनों, जिनमें उन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया है कि दुर्गुण के अनुष्ठान में आन सिंह ने यह शिकायत की थी कि उसके द्वारा विवाह में किए गए खर्च की वसूली नहीं हुई है, का अवलंब लेकर भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपेक्षित अनुसार पर्याप्त रूप से यह दर्शित किया है कि भीम सिंह और आन सिंह द्वारा मृतका के साथ क्रूरता की गई थी और उसे तंग किया गया था । उनके कथनों की संपुष्टि त्रिलोक सिंह के कथन से होती है । उच्च न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य के साथ पठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख का

अवलंब लेते हुए यह राय व्यक्त की कि अभियोजन पक्ष ने भीम सिंह और आन सिंह के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और 304ख और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन दंडनीय अपराध के आरोप को सफलतापूर्वक साबित किया है । द्वितीयतः, मृतका को ताने मारने और उसकी मृत्यु के बीच सन्निकटता को साबित करने के बिंदु पर उच्च न्यायालय ने यह विनिश्चित किया कि पांच माह का समय पर्याप्त सन्निकट है और आरोप साबित करने के लिए धारा 113ख संदेह के परे साबित होती है । तृतीयतः, राशन कार्ड दिखाकर अलग रहने का तथ्य अतात्विक है । अभियुक्तों द्वारा यह याचना किए जाने पर कि विचारण न्यायालय द्वारा विरचित आरोप त्रुटिपूर्ण है और आनुकल्पिक आरोप उस रीति में विरचित नहीं किया जाना चाहिए था जिस रीति में विचारण न्यायालय द्वारा किया गया है, न्यायालय ने यह पाया कि न तो अपराध उल्लिखित करने में और न ही आरोप में उल्लिखित विशिष्टियों में कोई गलती है और न ही न्याय की कोई हानि हुई है, जैसा कि अपीलार्थियों द्वारा दर्शित किया गया है । उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 221 और धारा 464 का अवलंब लेकर यह राय व्यक्त की कि आरोप विरचित करने में कोई गलती नहीं है और न ही न्याय की कोई हानि हुई है । अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् उच्च न्यायालय ने यह पाया कि यद्यपि नैन सिंह और जानकी देवी के नाम भीम सिंह और आन सिंह के साथ वर्णित हैं, तो भी मृतका को तंग करने में उनके विरुद्ध कोई विनिर्दिष्ट भूमिका का उल्लेख नहीं है और इसलिए उनके नामों को संदेह के आधार पर आलिप्त करने की बात से इनकार नहीं किया जा सकता है । यहां तक कि धारा 498क के अधीन दंडनीय अपराध का आरोप और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन दंडनीय अपराध का आरोप भी नैन सिंह और जानकी देवी के विरुद्ध युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया है । किंतु जहां तक भीम सिंह और आन सिंह की बाबत विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि का संबंध है, विचारण न्यायालय ने उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और 304ख के अधीन और दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके विधि की कोई गलती नहीं की है, क्योंकि अभिलेख पर उनके विरुद्ध आरोप को सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है ।

7. वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में अपीलार्थी

सं. 1 और 2 को पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध किया । अग्र न्यायिक पूर्व-निर्णयों में यह स्थिर किया गया है कि जहां अभियोजन पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित होता है, वहां किसी दांडिक मामले में केवल उच्च कोटि के पारिस्थितिक साक्ष्य से ही सबूत की कसौटी का समाधान हो सकता है । अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि करने के लिए घटनाओं की एक पूर्ण और अटूट शृंखला को सिद्ध किया जाना चाहिए ताकि इससे केवल एक ही निष्कर्ष निकाला जा सके और यदि एक से अधिक निष्कर्ष निकाले जा सकते हों, तब अभियुक्त संदेह के फायदे का हकदार होना चाहिए ।

8. उत्तराखंड राज्य की ओर से उपसंजात होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अभि. सा. 1 बीरबल सिंह ने शपथ पर स्पष्ट तौर पर यह कथन किया है कि उसकी बहिन श्रीमती प्रेमा देवी का विवाह भीम सिंह के साथ तारीख 7 मई, 1997 को अनुष्ठापित हुआ था । भीम सिंह के बड़े भाई आन सिंह ने विवाह तय करने में बिचौलिए की भूमिका निभाई थी । विवाह के लिए ऋण लिया गया था । तथापि, दहेज के लिए कोई मांग नहीं की गई थी । किंतु उसकी बहिन ने दो बार यह शिकायत की थी कि भीम सिंह के परिवार वाले उसे ताने मारते हैं और दहेज की मांग कर रहे हैं । अभि. सा. 1 द्वारा किए गए इस कथन की मृतका के पिता द्वारा भी पूर्ण रूप से संपुष्टि की गई है । अभियोजन पक्ष की ओर से काउंसेल ने अभि. सा. 3 चाचा त्रिलोक सिंह की भी परीक्षा की, जिसने यह कहा कि भीम सिंह और आन सिंह ने उसके समक्ष दहेज के बारे में बात की थी और उसके उपरांत उसने अपनी नाराजगी जाहिर की थी । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि श्रीमती प्रेमा देवी की उसके विवाह के चार माह और कुछ दिन पश्चात् अप्राकृतिक ढंग से मृत्यु हो गई थी । इसके अतिरिक्त, यह दलील दी गई कि चूंकि रात के समय गांव में यातायात का कोई साधन नहीं था, इसलिए वे तारीख 26 सितम्बर, 1997 को प्रेमा देवी की ससुराल नहीं जा सके और अगले दिन जब वे लगभग 15 किलोमीटर पैदल चलकर वहां पहुंचे तो उन्हें पता चला कि शव को मरणोत्तर परीक्षा के लिए नैनीताल भेजा गया है । उपरोक्त साक्षियों के अलावा, गांव की ग्राम प्रधान श्रीमती पुष्पा जोशी को अभि. सा. 4 के रूप में पेश किया गया । उसने यह कथन किया कि बड़ा भाई आन सिंह उसके पास आया और यह बताया कि प्रेमा देवी ने अपने को आग लगा ली है और इसके पश्चात् वह

अपने पड़ोसी के साथ उनके मकान पर गई और वहां प्रेमा देवी को बुरी तरह जले हुए पड़े देखा । अभि. सा. 4 ने दरोगा जी गुसाई सिंह को घटना के बारे में सूचित किया । विद्वान् काउंसेल ने आगे यह कहा कि अभि. सा. 4 डा. डी. के. जोशी ने तारीख 26 सितम्बर, 1997 को शव का परीक्षण किया और बाह्य परीक्षण में शरीर पर 90 प्रतिशत दाह क्षतियां पाईं । मृतका की मृत्यु इस परीक्षण से 6-8 घंटे पूर्व हुई थी । चूंकि बाह्य परीक्षण से मृत्यु का कारण प्रकट नहीं था, इसलिए आंतरिक परीक्षण के लिए मृतका का विसरा परिरक्षित रखा गया । मरणोत्तर परीक्षा डा. एच. सी. भट्ट द्वारा तैयार की गई थी, जिसमें यह उल्लेख किया गया कि उसकी यह राय है कि मृतका को उसकी मृत्यु के पूर्व कोई विषैला पदार्थ दिया गया था जिसके कारण उसकी मृत्यु हो गई और बाद में उसे जला दिया गया । क्योंकि मृत्यु का कोई बाह्य कारण नहीं पाया गया था, इसलिए विसरा रासायनिक परीक्षा के लिए राज्य की प्रयोगशाला में भेजा गया था और यह पाया गया कि विसरा में विषैला पदार्थ मौजूद था । इस प्रकार, राज्य की ओर से काउंसेल ने यह दलील दी कि अभियुक्तों ने श्रीमती प्रेमा देवी को दहेज के लिए यातना देने के पश्चात् विषैला पदार्थ देकर मारने की कोशिश की और जब उन्हें यह आशंका हुई कि उसकी मृत्यु हुई है या नहीं, तो उन्होंने उसकी मृत्यु की पुष्टि के लिए उसे आग लगा दी । उसके पश्चात्, उन्होंने गांव की ग्राम प्रधान को सूचित किया कि प्रेमा देवी की जलने के कारण मृत्यु हो गई है जिससे कि मृतका अपना मृत्युकालिक कथन देने योग्य न रहे ।

9. दूसरी ओर, अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अभि. सा. 1 बीरबल सिंह ने अपने कथन में यह स्वीकार किया है कि अभियुक्तों द्वारा विवाह से पूर्व दहेज की कोई मांग नहीं की गई थी और यदि उन्हें दहेज चाहिए होता, तो वे इसकी विवाह से पूर्व ही मांग करते । उनमें से कोई भी दहेज लेने और देने की स्थिति में नहीं था । बीरबल ने अपने कथन में यह स्वीकार किया कि विवाह बीरबल और उसके पिता द्वारा अपनी परस्पर सहमति के आधार पर स्वेच्छा से तय किया गया था । अभि. सा. 1 ने यह कथन किया कि "उसकी बहिन का विवाह उसके पिता द्वारा तय किया गया था और उसका विवाह मेरे और मेरे पिता दोनों की सहमति से अनुष्ठापित हुआ था । मेरी बहिन विवाह के कुछ दिन पश्चात् हमारे घर आई । किंतु मैं यह नहीं बता सकता कि वह कितने दिन पश्चात् वापस आई थी । क्योंकि मैं उस समय हल्द्वानी में था ।" आगे यह

दलील दी गई कि अभि. सा. 1 और 2 ने यह स्वीकार किया है कि उनके द्वारा प्रेमा की मृत्यु से पूर्व दहेज की मांग के लिए यातना देने की बाबत कोई रिपोर्ट दर्ज नहीं कराई गई थी । काउंसेल ने आगे यह कहा कि अभियुक्तों का आचरण बहुत मायने रखता है, क्योंकि गांव की ग्राम प्रधान को मृत्यु की सूचना स्वयं आन सिंह द्वारा दी गई थी । यदि उन्होंने उसकी हत्या की होती, तो उन्होंने उसके परिवार वालों को इसकी सूचना न दी होती और बजाय इसके उसकी मृत्यु के तुरंत पश्चात् उसका दाह-संस्कार कर दिया होता । काउंसेल ने यह दलील दी कि यह प्रतीत होता है कि मृतका ने स्वयं आत्महत्या की है, उसने पहले तो विषैला पदार्थ खाया और उसके पश्चात् सोचा कि इसके खाने से उसकी मृत्यु न हो, इसलिए उसने अपने आपको आग लगा ली । विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि मृतका के पति भीम सिंह के दो भाई हैं । भीम सिंह का बड़ा भाई आन सिंह लोक निर्माण विभाग में चौकीदार है और अपनी पत्नी के साथ अलग रहता है । भीम सिंह एक यान का ड्राइवर था और उसका छोटा भाई नैन सिंह एक दुकान चलाता था । इस प्रकार, आन सिंह, नैन सिंह और जानकी देवी का भीम सिंह के साथ कोई सह-संबंध नहीं था । सभी तीनों अपना अलग-अलग रोजगार कर रहे थे । तीनों भाइयों की मतदाता सूची और राशन कार्ड, जो अभिलेख पर हैं, अलग-अलग हैं । इस प्रकार, यह साबित नहीं होता है कि सभी तीनों भाई अपराध में अंतर्ग्रस्त थे । दूसरी ओर, उन्होंने इस मामले में पुलिस को सूचना देकर उनकी सहायता की थी ।

10. इस प्रकार, वर्तमान अपील में अभिलेख पर के पारिस्थितिक साक्ष्य तथा अन्वेषण के अनुक्रम में किए गए और अभियुक्त-अपीलार्थियों के विरुद्ध प्रस्तुत किए गए कथनों का मूल्यांकन और विश्लेषण करने की आवश्यकता है ।

11. इस अपील में अपीलार्थियों द्वारा ली गई प्रतिरक्षा का प्रथम आधार यह है कि दहेज के लिए गाली-गलौज करने या यातना देने की कोई विनिर्दिष्ट घटना नहीं है और मृतका के परिवार द्वारा दहेज की मांग को लेकर पहले कोई रिपोर्ट दर्ज नहीं कराई गई थी । यह भी कथन किया गया है कि अपीलार्थियों द्वारा विवाह से पहले दहेज की कोई मांग नहीं की गई थी, जैसा कि अभि. सा. 1 बीरबल सिंह और अभि. सा. 2 मान सिंह के कथनों से स्पष्ट है । तथापि, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **हिमाचल**

प्रदेश राज्य बनाम **निक्कू राम और अन्य**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, दहेज की मांग किसी भी समय की जा सकती है, और यह आवश्यक नहीं है कि विवाह से पहले ही की जाए । मांग तीन अवसरों पर की जा सकती है ; विवाह से पूर्व, विवाह के समय और विवाह के पश्चात् । उक्त निर्णय का सुसंगत भाग इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "दहेज, दहेज और दहेज । यह ऐसी दुःखद आवृत्ति है जिससे किसी लड़की के माता-पिता का हमारी उस पवित्र धरा पर जहां पुराने जमाने में यह सोचा जाता था कि – 'यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमंते तत्र देवता' (जहां नारी की पूजा होती है, वहां देवता वास करते हैं) सामना होता रहता है, और कभी-कभी यह आवृत्ति पीछा नहीं छोड़ती । हमने दहेज के बारे में तीन बार उल्लेख किया है, क्योंकि यह मांग तीन अवसरों पर की जाती है – (i) विवाह से पूर्व ; (ii) विवाह के समय ; और (iii) विवाह के पश्चात् । लालच की कोई सीमा नहीं, इसलिए बहुत से मामलों में मांग अतोषणीय बन जाती है और जिसके लिए लड़की को यातना दी जाती है, जो कुछ मामलों में या तो आत्महत्या का कारण बनती है या हत्या का ।"

12. अभियुक्तों ने यह प्रतिरक्षा ली है कि अभियोजन साक्षियों ने भी अपने कथनों में यह कहा है कि विवाह से पूर्व दहेज की कोई मांग नहीं की गई थी और विवाह दोनों पक्षकारों की सहमति से संपन्न हुआ था । उन्होंने यह भी प्रतिरक्षा ली कि मृतका के परिवार वालों द्वारा पहले दहेज की मांग की पुलिस में कोई शिकायत नहीं की गई थी । तथापि, **हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **निक्कू राम और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय और भारतीय समाज में व्याप्त दहेज की सामाजिक बुराई को ध्यान में रखते हुए यह प्रतिरक्षा कसौटी पर खरी नहीं उतरती । दहेज के लिए मांग किसी भी समय की जा सकती है न कि आवश्यक रूप से विवाह के पूर्व ही । अपीलार्थियों ने यह भी अभिवाक् किया है कि गाली-गलौज या यातना देने की कोई विनिर्दिष्ट घटनाएं नहीं हैं । किंतु वर्तमान मामले में अभि. सा. 3 त्रिलोक सिंह ने अपने कथन में स्पष्ट तौर पर यह कहा है कि आन सिंह दुर्गुण के अनुष्ठान, जो कि विवाह के पश्चात् मनाया जाता है, पर आया था जिसमें उसने सभी व्यक्तियों की मौजूदगी में यह कहा था कि उसे उस धन की भी वसूली नहीं हुई है जो उसने विवाह में

---

[1] (1995) 6 एस. सी. सी. 219.

खर्च किया था और वह नाराज हो गया था । अभियोजन साक्षियों ने भी यह कथन किया है कि मृतका प्रेमा देवी ने भी दो बार अपने परिवार वालों से चारों अभियुक्तों द्वारा ताने मारने और दहेज के लिए मांग करने के संबंध में शिकायत की थी । ये घटनाएं "उसकी मृत्यु के कुछ पूर्व" घटित हुई थीं क्योंकि उसकी उसके विवाह के पांच माह के भीतर मृत्यु हो गई थी । इस बात से भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दंडनीय दहेज मृत्यु के बारे में साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपधारणा उद्भूत होती है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख और भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के संयुक्त वाचन से यह दर्शित होता है कि यह दर्शित करने के लिए सामग्री का होना आवश्यक है कि विपदग्रस्त की मृत्यु से कुछ पूर्व उसके साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था । अभियोजन पक्ष को प्राकृतिक या दुर्घटनावश मृत्यु की संभावना को खारिज करना चाहिए ताकि इसे "सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा होने वाली मृत्यु" की परिधि के अंतर्गत लाया जा सके । अभियोजन पक्ष यह दर्शित करने के लिए आबद्ध है कि घटना से कुछ पूर्व दहेज की मांग के लिए या उसके संबंध में क्रूरता की गई थी या तंग किया गया था । दूसरे शब्दों में, अभियोजन पक्ष केवल जब यह साबित कर देता है कि स्त्री की मृत्यु के कुछ पूर्व दहेज की किसी मांग के लिए या उसके संबंध में उसके साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था, जैसा कि **कालियापेरुमल और एक अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित किया गया है । अभियोजन पक्ष ने सटीक साक्ष्य प्रस्तुत करके यह साबित किया है कि स्त्री की मृत्यु के कुछ पूर्व दहेज की मांग के संबंध में उसके साथ क्रूरता की गई थी या उसे तंग किया गया था । अतः, न्यायालय के लिए यह आबद्धकर हो जाता है कि यह उपधारणा करे कि यह मृत्यु एक दहेज मृत्यु है ।

13. प्रतिरक्षा पक्ष का यह पक्षकथन है कि मृतका ने विष खाकर आत्महत्या करने की कोशिश की और जब उसे यह आशंका हुई कि उसकी मृत्यु होगी या नहीं, उसने स्वयं को आग लगा ली । यह बात स्वीकार किए बिना, यह मान लिया जाए कि श्रीमती प्रेमा ने आत्महत्या की थी, तब भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क के अधीन विवाहित स्त्री को आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करने की उपधारणा का खंडन करने का

---

[1] (2004) 9 एस. सी. सी. 157.

भार अभियुक्त पर स्थानांतरित हो जाता है । जैसा कि धारा 304ख में है कि जहां अभियोजन पक्ष ने इस धारा के संघटकों को सिद्ध कर दिया हो, वहां न्यायालय दहेज मृत्यु की "उपधारणा करेगा", इसके विपरीत भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क के अधीन न्यायालय को विवेकाधिकार प्रदत्त किया गया है, जिसमें यह उपबंधित है कि न्यायालय आत्महत्या के दुष्प्रेरण की उपधारणा कर सकेगा । इसलिए यह भार अभियुक्त पर होता है कि इस उपधारणा का खंडन करे, और साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख की दशा में, जो भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख से संबंधित है, साबित करने का भार अनन्य रूप से और विशिष्ट रूप से अभियुक्त पर स्थानांतरित हो जाता है, जैसा कि **बंसीलाल** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है । इस प्रकार, जहां यह पाया गया कि पत्नी की मृत्यु अप्राकृतिक थी, अर्थात् गला घोंटकर की गई थी, और साथ-साथ पति की ओर से दहेज की मांग की गई थी और क्रूरता भी की गई थी, वहां धारा 113ख के अधीन ठीक ही उपधारणा की गई है, जैसा कि **हेमचंद** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है । तब भी यदि हम यह मान लें कि मृतका ने आत्महत्या की थी, अभियुक्तों के विरुद्ध साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क में जो उपधारणा है वह ठीक ही उपधारित की गई है क्योंकि पारिस्थितिक साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि उसे यह अंतिम कदम उठाने के लिए मजबूर किया गया होगा क्योंकि अभिकथित आत्महत्या विवाह के सात वर्ष के भीतर कारित की गई थी, जैसा कि **गुरबचन सिंह** बनाम **सतपाल सिंह**[3] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है । पारिस्थितिक साक्ष्य से अभियुक्तों की दोषिता इंगित होती है, क्योंकि अभियोजन पक्ष ने यह साबित किया है कि अभियुक्तों के पास मृतका को विष देने का अवसर था और डाक्टरों ने भी चिकित्सीय परीक्षण में यह रिपोर्ट दी है कि मृतका एक स्वस्थ स्त्री थी जो अपने परिवार के साथ मिलकर अभियुक्तों के साथ मामले को सुलह करने की कोशिश कर रही थी । यह तथ्य, कि मृत्यु अभियुक्तों के घर में हुई थी, उनकी दोषिता को इंगित करती है । उन्होंने धारा 113क और 113ख के अधीन उपधारणाओं को नासाबित करने के भार का निर्वहन नहीं किया

---

[1] (2011) 11 एस. सी. सी. 359.

[2] ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 120, 121.

[3] 1990 क्रिमिनल ला जर्नल 562, 571 (एस. सी.).

है । इस प्रकार, आत्महत्या करने के प्रश्न से इनकार किया जाता है । न्यायालय इस मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपधारणा करने के लिए आबद्ध है ।

14. अभियुक्तों ने यह प्रतिरक्षा ली है कि मृतका की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने स्वयं ग्राम पंचायत को सूचित किया था, जिसके उपरांत ग्राम प्रधान अन्य व्यक्तियों के साथ अभियुक्तों के घर गई, जहां उन्होंने श्रीमती प्रेमा का शव पाया । एक समझदार व्यक्ति, किसी व्यक्ति को मरने से बचाने की कोशिश में मृत व्यक्ति को नजदीकी अस्पताल में ले जाता और उसके मरने की प्रतीक्षा न करता । अभियुक्तों की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई यह दलील भी कि मृतका ने पहले विष खाया और फिर अपनी मृत्यु की आशंका होने पर उसने स्वयं को आग लगा ली, गलत साबित होती है क्योंकि यदि ऐसी स्थिति उद्भूत होती है तो कोई भी युक्तियुक्त व्यक्ति अपनी पत्नी को बचाना चाहेगा । जब तथ्य स्पष्ट हैं, तब यह अतात्विक है कि हेतु साबित होता है या नहीं । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **मुल्ख राज** बनाम **सतीश कुमार**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, हेतु के अभाव में अभियुक्त को अपराध से संबद्ध करने वाली परिस्थितियों की शृंखला की कड़ी नहीं टूट जाती है । इसके अतिरिक्त, जहां स्पष्ट साक्ष्य हो, वहां हेतु का सबूत या वैमनस्य दोषसिद्धि को कायम रखने के लिए अनावश्यक है ।

15. वर्तमान मामले में अभियुक्तों की दोषिता या निर्दोषिता का निष्कर्ष पारिस्थितिक साक्ष्य से निकाला जाना है । पारिस्थितिक साक्ष्य से संबंधित विधि कमोवेश सुस्थिर है । इस न्यायालय ने अनेक निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया है कि जब दोषसिद्धि केवल पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है, तब परिस्थितियों की शृंखला में कोई दरार नहीं होनी चाहिए । यदि शृंखला में कोई दरार है, तो अभियुक्त संदेह के फायदे का हकदार है । **गुरप्रीत सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाला मामला ऐसे मामलों में से एक है । किसी युक्तियुक्त परिकल्पना के प्रश्न पर, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यदि शृंखला में की किन्हीं परिस्थितियों को किसी अन्य युक्तियुक्त परिकल्पना द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है, तब अभियुक्त संदेह के फायदे का हकदार है । किंतु साक्ष्य का अवधारण करने में

---

[1] (1992) 3 एस. सी. सी. 43 = ए. आई. आर. 1992 एस. सी. 1175.

[2] (2002) 8 एस. सी. सी. 18.

काल्पनिक संभाव्यताओं का कोई स्थान नहीं है । न्यायालय सामान्य मानवीय संभाव्यताओं पर विचार करता है ।

16. **शरद बिरधीचंद शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने पारिस्थितिक साक्ष्य पर निम्नलिखित सिद्धांत अधिकथित किए हैं :–

(1) वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह सिद्ध करनी होंगी या की जानी चाहिएं न कि केवल सिद्ध की 'जा सकती हैं' ।

(2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं अर्थात् इस बात के सिवाए कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं ।

(3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं ।

(4) उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के सिवाय हर संभावित उप-कल्पना अपवर्जित करनी चाहिए, और

(5) साक्ष्य की शृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित हो कि संपूर्ण मानवीय संभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।

जब कभी परिस्थितियों की शृंखला में कोई दरार हो, अभियुक्त संदेह के फायदे का हकदार है ; महाराष्ट्र राज्य **बनाम** अनप्पा बंधु कावाटेज, (1979) 4 एस. सी. सी. 715 वाला मामला देखिए ।

17. **शरद बिरधीचंद** (उपरोक्त) वाले मामले में के विनिश्चय का अनुसरण करते हुए **लियाकत** बनाम **उत्तरांचल राज्य**[2] और **कुसुमा अंकमा राव** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[3] वाले मामलों में इस न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा यथाअधिनिर्णीत और उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट दोषसिद्धि को मान्य ठहराया ।

---

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

[2] (2008) 16 एस. सी. सी. 148.

[3] (2008) 13 एस. सी. सी. 256.

18. इस प्रकार उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए पारिस्थितिक साक्ष्य में कोई कड़ी गुम नहीं है, और इसलिए अभियुक्त संदेह के फायदे के हकदार नहीं हैं । अभियुक्तों अर्थात् इस अपील में अपीलार्थी सं. 1 और 2 की भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन दोषिता को सफलतापूर्वक सिद्ध किया गया है । अतः, हम उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय में कोई कमी नहीं पाते हैं । तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है । खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2015] 2 उम. नि. प. 65

नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे

बनाम

महाराष्ट्र राज्य

13 फरवरी, 2015

न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा और न्यायमूर्ति प्रफुल्ल चन्द्र पंत

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49) – धारा 7, 13(1)(घ), 13(2) और 20 – अवैध परितोषण – उपधारणा – अभियुक्त द्वारा साधारण भविष्य निधि और पेंशन कागजातों के निपटान के लिए अवैध परितोषण की मांग किया जाना – शिकायतकर्ता की शिकायत के आधार पर भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो के छापामार दल द्वारा अभियुक्त को रिश्वत लेते हुए रंगे हाथों पकड़ा जाना – शिकायतकर्ता द्वारा मुख्य परीक्षा में रिश्वत के संदाय और नोटों की बरामदगी के बारे में कथन किया जाना – प्रतिपरीक्षा में रिश्वत की मांग न करने का कथन किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को युक्तियुक्त संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति को उलटा जाना – अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ नहीं होने पर कि यदि रिश्वत की मांग नहीं की गई थी तो शिकायत क्यों की गई तथा शिकायतकर्ता द्वारा मुख्य परीक्षा में किए गए कथन की संपुष्टि अन्य

साक्षियों के कथनों से होने पर उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त की दोषमुक्ति के निष्कर्ष को उलटकर उसे दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके ठीक ही किया है ।

अभियुक्त-अपीलार्थी जिला परिषद्, ओस्मानाबाद के वित्तीय प्रभाग में कार्यरत था । वह कर्मचारिवृंद के सेवानिवृत्त सदस्यों के साधारण भविष्य निधि (जी. पी. एफ.) और पेंशन के मामलों के निपटान का कार्य कर रहा था । मीराबाई एन. देशपांडे (अभि. सा. 10), जो भूम में समेकित बाल विकास स्कीम में सेवारत थी, ने जुलाई, 1992 में अपनी शारीरिक बीमारी के कारण स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की ईप्सा की । उसने अपने पेंशन के कागजात प्रस्तुत किए । वह निःसंतान विधवा थी । उसके द्वारा अपने भाई अनंत देशमुख (शिकायतकर्ता) को अपने कागजातों को आगे बढ़ाने के लिए अनुरोध किया गया । वह अपनी बहिन के पेंशन और साधारण भविष्य निधि के कागजातों के संबंध में जांच-पड़ताल करने के लिए कई बार जिला परिषद् के कार्यालय में गया । आखिरकार, अभियुक्त-अपीलार्थी ने उसे कहा कि साधारण भविष्य निधि के समाशोधन में 2-3 माह लगेंगे, किंतु यदि वह उसे 1,000/- रुपए का संदाय कर देता है तो यह कार्य 8-10 दिनों में किया जा सकता है । अनंत देशमुख ने अनिच्छापूर्वक उसे 200/- रुपए दे दिए और उसने उसे शेष रकम के साथ पांच-छह दिन में संपर्क करने के लिए कहा । शिकायतकर्ता उससे मिला और उसने उसे बताया कि काम हो गया है और कागजात संबंधित प्राधिकारी के पास हस्ताक्षरों के लिए पड़े हुए हैं और उसे अपराह्न में 2.30-3.00 बजे शेष रकम के साथ आने के लिए कहा । शिकायतकर्ता उससे मिला और कहा कि वह केवल 300/- रुपए की ही व्यवस्था कर सका है और शेष 500/- रुपए साधारण भविष्य निधि की रकम मिलने पर संदत्त कर देगा । अभियुक्त-अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता से कहा कि पेंशन के कार्य के लिए अलग से 1,000/- रुपए और देने होंगे और इस कार्य में दो-तीन माह का समय लगेगा । इस पर, शिकायतकर्ता, अनंत देशमुख भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो गया और भ्रष्टाचार के बारे में शिकायत की । पुलिस उप-अधीक्षक के नेतृत्व में एक दल द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थी को रंगे-हाथों पकड़ने के लिए उसी दिन जाल बिछाया गया । योजना अनुसार शिकायतकर्ता ने एंथ्रासिन पाउडर लगे हुए दूषित करंसी नोट अभियुक्त-अपीलार्थी को दिए और उसने अपने दाहिने हाथ से इन्हें लिया और बाएं हाथ से नोटों को अपनी जेब में डाल लिया । संकेत मिलने पर छापामार दल ने उसे रंगे हाथों पकड़ लिया । अन्वेषण के पश्चात् अभियुक्त के विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा

13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराध की बाबत आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया । विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य और पक्षकारों की दलीलों पर विचार करने के पश्चात् तारीख 18 जनवरी, 1997 अभियुक्त को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराध के आरोप से यह अभिनिर्धारित करते हुए दोषमुक्त कर दिया कि आरोप युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं होते हैं । महाराष्ट्र राज्य ने विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त की दोषमुक्ति अभिलिखित करते हुए पारित किए गए आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी । उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि विचारण न्यायालय ने अभियुक्त को संदेह का फायदा देकर उसे दोषमुक्त करके विधि की गलती की है । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे के विरुद्ध आरोप अभिलेख पर साबित होते हैं और उसे भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । अभियुक्त ने उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – रिश्वत के संदाय और तीन करंसी नोटों की बरामदगी के संबंध में अभि. सा. 9 अनंत देशमुख के कथन, जैसा कि मुख्य परीक्षा में अभिलिखित किया गया है कि अभि. सा. 1 उत्तम भूतेकर और अभि. सा. 3 साहेबराव वानवे के कथनों से पूर्ण रूप से संपुष्टि होती है । अभियोजन के वृत्तांत की अभि. सा. 10 मीराबाई और अभि. सा. 12 पुलिस निरीक्षक नंदकुमार गडाडे के कथनों से भी संपुष्टि होती है । उपरोक्त साक्षियों के मौखिक परिसाक्ष्य की संपुष्टि पंचनामा, शिकायत, द्वितीय पंचनामा और अभिलेख पर के अन्य कागजातों से भी होती है । आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि उच्च न्यायालय अभिलेख पर के साक्ष्य पर चर्चा करने के पश्चात् इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचा कि विचारण न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में विधि की गलती की है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराध की बाबत आरोप सिद्ध नहीं होता है । उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि विचारण न्यायालय ने वर्तमान मामले में अभियुक्त को युक्तियुक्त संदेह का फायदा देकर विधि की गलती की है । अभिलेख पर के साक्ष्य का

परिशीलन करने के पश्चात् इस न्यायालय की भी यह राय है कि यह ऐसा मामला नहीं है जहां दो मत संभव हों । इसलिए यह न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषमुक्ति के आदेश को उलटने वाले आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता है । अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा इस न्यायालय का ध्यान अभि. सा. 9 अनंत देशमुख (शिकायतकर्ता) की प्रतिपरीक्षा के अंतिम वाक्य की ओर दिलाया गया, जिसमें उसने अपनी बात से पलटते हुए यह कहा था कि अभियुक्त द्वारा रकम की मांग नहीं की गई थी । यह प्रतीत होता है कि कथन के इसी भाग के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को युक्तियुक्त संदेह का फायदा दिया गया है । अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गई कि रिश्वत की मांग अभिलेख पर साबित नहीं होती है । इस न्यायालय की राय में, इस तथ्य पर विचार करते हुए कि मुख्य साक्षी अभि. सा. 9 अनंत देशमुख का कथन घटना के लगभग तीन वर्ष पश्चात् अभिलिखित किया गया था, और प्रतिपरीक्षा उसी दिन नहीं की गई थी जब मुख्य परीक्षा अभिलिखित की गई थी, इसलिए यह विश्वास करने का हरसंभव कारण है कि साक्षी की रुचि समाप्त हो गई हो और अभियुक्त द्वारा उसे अपने पक्ष में कर लिया गया हो । अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है कि जब अभियुक्त द्वारा सेवानिवृत्ति के पश्चात् मिलने वाले शोध्यों का निपटान किया जा रहा था और यदि अभियुक्त द्वारा रकम की मांग नहीं की गई थी, तो अनंत देशमुख ने उस तारीख को जब उसकी बहिन के कागजातों का निपटान किया जा रहा था भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो में लिखित शिकायत क्यों की । इस संबंध में, यह न्यायालय उच्च न्यायालय से सहमत है कि विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 20 की उपधारा (1) के अधीन की जाने वाली उपधारणा की पूर्णतः अनदेखी की है । धारा 20 की उपधारा (1) में यह उपबंधित है कि जहां धारा 7 या धारा 13 की उपधारा (1) के खंड (क) या खंड (ख) के अधीन दंडनीय अपराध के किसी विचारण में यह साबित किया जाता है कि अभियुक्त व्यक्ति ने किसी व्यक्ति से कोई परितोषण (वैध पारिश्रमिक से भिन्न) या कोई मूल्यवान वस्तु अपने लिए, या किसी अन्य व्यक्ति के लिए, प्रतिगृहीत या अभिप्राप्त की है या प्रतिगृहीत करने की सहमति दी है या अभिप्राप्त करने का प्रयत्न किया है, वहां जब तक प्रतिकूल साबित नहीं कर दिया जाता है, यह उपधारणा की जाएगी कि उसने, यथास्थिति, उस परितोषण या उस मूल्यवान वस्तु को ऐसे हेतु या इनाम के रूप में, जैसा कि धारा 7 में वर्णित है, या यथास्थिति प्रतिफल के

बिना या ऐसे प्रतिफल के लिए जिसका अपर्याप्त होना वह जानता है, प्रतिगृहीत या अभिप्राप्त किया है या प्रतिगृहीत करने के लिए सहमत हुआ है या अभिप्राप्त करने का प्रयत्न किया है । अभियुक्त की ओर से अभि. सा. 1 उत्तम भूतेकर, अभि. सा. 3 साहेबराव वानवे और अभि. सा. 9 अनंत देशमुख को दिए गए इस सुझाव के अतिरिक्त, यह स्पष्ट है कि अभियुक्त ने यह स्वीकार किया है कि छापामार दल ने उसकी जेब से तीन करंसी नोट बरामद किए थे । इन परिस्थितियों में, वर्तमान मामले में अभियुक्त को युक्तियुक्त संदेह का फायदा देने का कोई प्रश्न नहीं था । (पैरा 9, 10, 12, 13, 14 और 15)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2013]	(2013) 4 एस. सी. सी. 642 : **निरंजन हेमचन्द्र साशीथल और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	17
[1972]	[1972] 2 उम. नि. प. 105 = (1972) 1 एस. सी. सी. 249 : **हिमाचल प्रदेश प्रशासन** बनाम **ओम प्रकाश** ।	16

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 1352.

1997 की दांडिक अपील सं. 135 में बम्बई उच्च न्यायालय की औरंगाबाद स्थित न्यायपीठ के तारीख 6 फरवरी, 2009 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	श्री सुधांशु एस. चौधरी
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री अमोल चितले, अनिरुद्ध पी. मायी, चारुदत्त महिन्द्रकर और ए. सेल्विन राजा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति प्रफुल्ल चन्द्र पंत ने दिया ।

न्या. पंत – यह अपील 1997 की दांडिक अपील सं. 135 में बम्बई उच्च न्यायालय (औरंगाबाद स्थित न्यायपीठ) द्वारा तारीख 6 फरवरी, 2009 के उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा उक्त न्यायालय ने 1993 के विशेष मामला सं. 3 में विशेष न्यायाधीश,

ओस्मानाबाद द्वारा अभिलिखित दोषमुक्ति को उलट दिया और वर्तमान अपीलार्थी नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दोषसिद्ध किया और उसे एक वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश दिया तथा 10,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर छह माह का और कठोर कारावास भोगने का निदेश दिया ।

2. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया ।

3. अभियोजन पक्षकथन के अनुसार, अपीलार्थी जिला परिषद्, ओस्मानाबाद के वित्तीय प्रभाग में कार्यरत था । वह कर्मचारिवृंद के सेवानिवृत्त सदस्यों के साधारण भविष्य निधि (जी. पी. एफ.) और पेंशन के मामलों के निपटान का कार्य कर रहा था । अभि. सा. 10 मीराबाई एन. देशपांडे, जो भूम में समेकित बाल विकास स्कीम में सेवारत थी, ने जुलाई, 1992 में अपनी शारीरिक बीमारी के कारण स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिए चयन किया । उसने अपने पेंशन के कागजात प्रस्तुत किए । वह निःसंतान विधवा थी । उसके द्वारा अपने भाई अभि. सा. 9 अनंत देशमुख, जो पूर्व सैनिक था, को अपने कागजातों को आगे बढ़ाने के लिए अनुरोध किया गया । वह पूणे में एक प्राइवेट कंपनी में कार्य करता था । अभि. सा. 9 अनंत देशमुख नवम्बर, 1992 से जनवरी, 1993 के बीच अपनी बहिन के पेंशन और साधारण भविष्य निधि के कागजातों के संबंध में जांच-पड़ताल करने के लिए कई बार जिला परिषद् के कार्यालय में गया । अपीलार्थी, जो उक्त कार्यालय में कार्यरत था, ने उसे बताया कि पेंशन कागजातों को ढूंढा गया था किंतु मिल नहीं सके । इस पर अभि. सा. 9 भूम गया और जिला परिषद्, ओस्मानाबाद को संबोधित उस अग्रेषित पत्र का संख्यांक अभिप्राप्त किया जिसके साथ मीराबाई के पेंशन कागजात भेजे गए थे । उसके पश्चात् पेंशन और साधारण भविष्य निधि के कागजात ढूंढ लिए गए और अपीलार्थी ने अभि. सा. 9 अनंत देशमुख (शिकायतकर्ता) को खंड विकास अधिकारी, पंचायत समिति, भूम से "अनापत्ति प्रमाणपत्र" अभिप्राप्त करने के लिए कहा । उसने शिकायतकर्ता को यह भी बताया कि साधारण भविष्य निधि की विवरणी में वर्ष 1987-88 की प्रविष्टि नहीं है । इस पर शिकायतकर्ता अपनी बहिन का एक पत्र लाया जिसमें यह कहा गया कि वह साधारण भविष्य निधि की रकम वर्ष 1987-88 की अविद्यमान जमा को

अपवर्जित करते हुए स्वीकार करने के लिए तैयार है । खंड विकास अधिकारी से "अनापत्ति प्रमाणपत्र" भी अभिप्राप्त किया गया और जिला परिषद् के कार्यालय में प्रस्तुत किया गया । जब पुनः संपर्क किया गया तो अपीलार्थी ने अनंत देशमुख को कहा कि साधारण भविष्य निधि के समाशोधन में 2-3 माह लगेंगे, किंतु यदि शिकायतकर्ता उसे 1,000/- रुपए का संदाय कर देता है तो यह कार्य 8-10 दिनों में किया जा सकता है । अनंत देशमुख ने अनिच्छापूर्वक अपीलार्थी को 200/- रुपए दे दिए और उसने उसे शेष रकम के साथ पांच-छह दिन में संपर्क करने के लिए कहा । शिकायतकर्ता तारीख 30 जनवरी, 1993 को अपीलार्थी नयनकुमार शिवप्पा (अभियुक्त) से पूर्वाह्न में 10.45 बजे मिला । अपीलार्थी ने उसे बताया कि काम हो गया है और कागजात संबंधित प्राधिकारी के पास हस्ताक्षरों के लिए पड़े हुए हैं और उसे अपराह्न में 2.30-3.00 बजे शेष रकम के साथ आने के लिए कहा । शिकायतकर्ता ने कहा कि वह केवल 300/- रुपए की ही व्यवस्था कर सका है और शेष 500/- रुपए साधारण भविष्य निधि की रकम मिलने पर संदत्त कर देगा । अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता से कहा कि पेंशन के कार्य के लिए अलग से 1,000/- रुपए और देने होंगे जिसमें दो-तीन माह का समय लगेगा । इस पर, शिकायतकर्ता, अभि. सा. 9 अनंत देशमुख भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो गया और अभि. सा. 12, पुलिस निरीक्षक नंदकुमार गडाडे से मिला और भ्रष्टाचार के बारे में शिकायत की । अभि. सा. 12 ने शिकायत लेखबद्ध की और उसके पश्चात् सिंचाई कार्यालय से पंच साक्षियों, अर्थात् अभि. सा. 1 उत्तम भूतेकर और अभि. सा. 3 साहेबराव वानवे को बुलाया गया । लिखित शिकायत को अनंत देशमुख की मौजूदगी में साक्षियों को पढ़कर सुनाया गया । पुलिस उप-अधीक्षक श्री शेतकर के नेतृत्व में एक दल द्वारा अपीलार्थी को गिरफ्तार करने के लिए उसी दिन छापा मारा गया क्योंकि अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता को धन लेकर दोपहर बाद आने के लिए कहा था । तीन करंसी नोटों पर एंथ्रासिन पाउडर लगाने, जो शिकायतकर्ता द्वारा अपीलार्थी को सौंपे जाने थे, और इस आशय का पंचनामा तैयार करने के पश्चात् योजना अनुसार अभि. सा. 9 अनंत देशमुख साक्षियों उत्तम भूतेकर और साहेबराव वानवे के साथ जिला परिषद् के कार्यालय गया । भूतेकर को कहा गया कि वह अनंत देशमुख और अभियुक्त के बीच बातचीत के दौरान उसके साथ मौजूद रहे । वानवे को कुछ दूरी पर तीनों का पीछा करना था । जिला परिषद् कार्यालय पहुंचने पर शिकायतकर्ता ने अपीलार्थी से बाहर आने के लिए कहा और वे दोनों भूतेकर सहित निकटवर्ती चाय की दुकान पर गए । अभि. सा. 9

अनंत देशमुख, अभि. सा. 3 साहेबराव वानवे और अभि. सा. 1 उत्तम भूतेकर ने चाय ली और देशमुख ने इसके लिए भुगतान किया । इसके पश्चात् देशमुख ने दूषित करंसी नोट अपीलार्थी को दिए और उसने अपने दाहिने हाथ से इन्हें लिया और बाएं हाथ से नोटों को अपनी जेब में डाल लिया । योजना अनुसार, देशमुख ने अपने सिर के ऊपर से हाथ हिलाकर छापामार दल को संकेत किया । छापामार दल तुरंत दौड़कर आया और अपीलार्थी के दोनों हाथ पकड़ लिए और साक्षियों की मौजूदगी में पराबैंगनी प्रकाश में अपीलार्थी के हाथ देखे गए और यह पाया गया कि हाथों पर एंथ्रासीन पाउडर, जिससे करंसी नोट दूषित किए गए थे, के कारण नीलापन युक्त चमक दिखाई दे रही थी । अपीलार्थी द्वारा स्वीकार किए गए 100 - 100/- रुपए के तीनों नोटों को, जिनका संख्यांक 5बीक्यू 075977, 9सीए 767761 और 0पीएन 648332 था, जाल में फंसाने वाले/पुलिस छापामार दल द्वारा अभिगृहीत किए गए और एक पंचनामा तैयार किया गया । अभि. सा. 12, पुलिस निरीक्षक गडाडे द्वारा एक शिकायत (प्रदर्श 41) दी गई और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । अन्वेषण के पश्चात्, जिला परिषद् के मुख्य कार्यकारी अधिकारी के समक्ष सभी सुसंगत कागजात अपीलार्थी के विरुद्ध अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी हेतु प्रस्तुत किए गए और अभियुक्त के विरुद्ध मंजूरी अभिप्राप्त की गई तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराध की बाबत आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया ।

4. पक्षकारों को सुनने के पश्चात् यह प्रतीत होता है कि विचारण न्यायालय ने तारीख 15 मार्च, 1996 को नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे के विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के विरुद्ध दंडनीय अपराधों की बाबत आरोप विरचित किए, जिनके लिए उसने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया ।

5. इस पर, अभियोजन पक्ष ने अभि. सा. 1 उत्तम भूतेकर (पंच साक्षी), अभि. सा. 2 भीमराव (जिला परिषद् में कनिष्ठ सहायक), अभि. सा. 3 साहेबराव वानवे (पंच साक्षी), अभि. सा. 4 रियाज़, अभि. सा. 5 भरत, अभि. सा. 6 नागनाथ (तीनों जिला परिषद् के पदधारी हैं), अभि. सा. 7 राजीव (मुख्य लेखाकार), अभि. सा. 9 अनंत देशमुख (शिकायतकर्ता), अभि. सा. 10 मीराबाई (पेंशनधारी, जिसके जीपीएफ के कागजात पर कार्रवाई हुई थी), अभि. सा. 11 रामदास (पुलिस हैड कांस्टेबल), अभि.

सा. 12 पुलिस निरीक्षक नंदकुमार गडाडे (छापामार दल का मुखिया) की परीक्षा कराई । साक्षियों के मौखिक परिसाक्ष्य और दस्तावेजी साक्ष्य अभियुक्त के समक्ष रखे गए, जिसके उत्तर में उसने स्वीकार किया कि मीराबाई एन. देशपांडे (अभि. सा. 10) ने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की ईप्सा की थी और यह तथ्य है कि शिकायतकर्ता के अनुरोध पर मीराबाई के पेंशन कागजात ढूंढे गए थे । तथापि, रिश्वत की मांग करने और स्वीकार करने संबंधी शेष साक्ष्य के बारे में अभियुक्त ने यह कथन किया कि यह बात सही नहीं है । प्रतिरक्षा में कोई साक्ष्य पेश नहीं किया गया ।

6. विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य और पक्षकारों की दलीलों पर विचार करने के पश्चात् तारीख 18 जनवरी, 1997 के निर्णय और आदेश द्वारा अभियुक्त (नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे) को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराध के आरोप से यह अभिनिर्धारित करते हुए दोषमुक्त कर दिया कि आरोप युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं होते हैं ।

7. महाराष्ट्र राज्य ने विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त की दोषमुक्ति अभिलिखित करते हुए पारित किए गए आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी । उच्च न्यायालय पक्षकारों को सुनने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि विचारण न्यायालय ने अभियुक्त को संदेह का फायदा देकर उसे दोषमुक्त करके विधि की गलती की है । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे के विरुद्ध आरोप अभिलेख पर साबित होते हैं और उसे भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दोषसिद्ध किया और एक वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया तथा 10,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने का निदेश दिया और यह भी निदेश दिया कि जुर्माने के संदाय करने में व्यतिक्रम करने पर दोषसिद्ध व्यक्ति छह माह का और कठोर कारावास भोगेगा ।

8. साक्ष्य का परिशीलन करने पर हम यह पाते हैं कि अभि. सा. 9 अनंत देशमुख ने यह कथन किया है कि मीराबाई (अभि. सा. 10) उसकी बड़ी बहिन थी और उसने अपनी बीमारी के कारण तारीख 15 जुलाई, 1992 को स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की ईप्सा की थी । वह एक निःसंतान विधवा थी । इस साक्षी द्वारा यह भी कथन किया गया कि मीराबाई उसके साथ रहती थी और उसने उसे अपने पेंशन के कागजातों को आगे बढ़ाने

और साधारण भविष्य निधि की शोध्य रकम निकलवाने के लिए कहा था । इस साक्षी ने आगे यह भी कथन किया कि नवम्बर, 1992 में उसने अपनी बहिन के सेवानिवृत्ति उपरांत मिलने वाले शोध्यों के संबंध में जिला परिषद्, ओस्मानाबाद के कार्यालय में जांच-पड़ताल करनी आरंभ की । उसने अपीलार्थी, जो जिला परिषद् के कार्यालय में कार्यरत था, से अपनी मुलाकातों के बारे में विस्तार से वर्णन किया । उसने आगे यह बताया कि मांगे जाने पर उसने खंड विकास अधिकारी के कार्यालय से 'अनापत्ति प्रमाणपत्र' और अपनी बहिन से यह पत्र अभिप्राप्त किया कि वह वर्ष 1987-88 के अभिदाय के बिना ही साधारण भविष्य निधि की रकम स्वीकार करने के लिए तैयार है । अभि. सा. 9 ने यह भी बताया कि अभियुक्त (अपीलार्थी) द्वारा साधारण भविष्य निधि की रकम के समाशोधन के लिए 1,000/- रुपए मांगे गए । उसने यह भी कथन किया कि उसने अभियुक्त को 200/- रुपए दिए और शेष राशि के लिए यह सहमति हुई कि यह राशि एक सप्ताह के पश्चात् संदत्त कर दी जाएगी । इस साक्षी ने आगे यह कहा कि तारीख 30 जनवरी, 1993 को जब वह पुनः जिला परिषद् के कार्यालय में गया तो उसे शेष 800/- रुपए के साथ अपराह्न में 3.00 बजे आने के लिए कहा गया, और उसे यह भी कहा गया कि पेंशन के कागजातों के निपटान के लिए अलग से 1000/- रुपए देने होंगे और इस कार्य में दो से तीन माह लगेंगे । अभि. सा. 9 अनंत देशमुख ने आगे यह कथन किया कि इस बात को लेकर वह भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो के पास गया और एक शिकायत दी । उसने यह भी बताया कि वह पंच साक्षियों और सतर्कता विभाग के दल के साथ आया और जाल बिछाया गया । इस साक्षी ने आगे यह बताया कि निकटवर्ती चाय की दुकान पर चाय पीने के पश्चात् उसने अभियुक्त को 300/- रुपए दिए, जिस पर जाल में फंसाने वाले दल ने अभियुक्त को गिरफ्तार कर लिया और उससे रकम बरामद की । तथापि, प्रतिपरीक्षा के अंत में इस साक्षी ने यह कथन किया कि अभियुक्त ने रकम की मांग नहीं की थी ।

9. रिश्वत के संदाय और तीन करंसी नोटों की बरामदगी के संबंध में अभि. सा. 9 अनंत देशमुख के कथन, जैसा कि मुख्य परीक्षा में अभिलिखित किया गया है, की संपुष्टि अभि. सा. 1 उत्तम भूतेकर और अभि. सा. 3 साहेबराव वानवे के कथनों से पूर्ण रूप से होती है । अभियोजन के वृत्तांत की अभि. सा. 10 मीराबाई और अभि. सा. 12 पुलिस निरीक्षक नंदकुमार गडाडे के कथनों से भी संपुष्टि होती है ।

10. उपरोक्त साक्षियों के मौखिक परिसाक्ष्य की संपुष्टि पंचनामा (प्रदर्श 22), शिकायत (प्रदर्श 23), द्वितीय पंचनामा (प्रदर्श 24) और अभिलेख पर के अन्य कागजातों से भी होती है ।

11. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने हमारे समक्ष यह दलील दी कि चूंकि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को युक्तियुक्त संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त किया है, उच्च न्यायालय ने उसे दोषसिद्ध करके विधि की गलती की है क्योंकि विधि का यह स्थिर सिद्धांत है कि जहां दो मत संभव हों, वहां विचारण न्यायालय के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए ।

12. वर्तमान मामले में अपीलार्थी की ओर से दी गई उपरोक्त दलील इस कारण से भ्रामक है कि यदि यह दलील स्वीकार की जाती है तो ऐसा कोई मामला नहीं हो सकता जिसमें दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील मंजूर की जा सके, और विचारण न्यायालय द्वारा कारित की गई गलती को ठीक किया जा सके । आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि उच्च न्यायालय अभिलेख पर के साक्ष्य पर चर्चा करने के पश्चात् इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचा कि विचारण न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में विधि की गलती की है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दंडनीय अपराध की बाबत आरोप सिद्ध नहीं होता है । उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि विचारण न्यायालय ने वर्तमान मामले में अभियुक्त को युक्तियुक्त संदेह का फायदा देकर विधि की गलती की है । अभिलेख पर के साक्ष्य का परिशीलन करने के पश्चात् हमारी भी यह राय है कि यह ऐसा मामला नहीं है जहां दो मत संभव हों । इसलिए हम विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषमुक्ति के आदेश को उलटने वाले आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं पाते हैं ।

13. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा हमारा ध्यान अभि. सा. 9 अनंत देशमुख (शिकायतकर्ता) की प्रतिपरीक्षा के अंतिम वाक्य की ओर दिलाया गया, जिसमें उसने अपनी बात से पलटते हुए यह कहा कि अभियुक्त द्वारा रकम की मांग नहीं की गई थी । यह प्रतीत होता है कि कथन के इसी भाग के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को युक्तियुक्त संदेह का फायदा दिया गया है । अपीलार्थी की ओर से यह दलील दी गई कि रिश्वत की मांग अभिलेख पर साबित नहीं होती है ।

14. हमारी राय में, इस तथ्य पर विचार करते हुए कि मुख्य साक्षी

अभि. सा. 9 अनंत देशमुख का कथन घटना के लगभग तीन वर्ष पश्चात् अभिलिखित किया गया था, और प्रतिपरीक्षा उसी दिन नहीं की गई थी जब मुख्य परीक्षा अभिलिखित की गई थी, इसलिए यह विश्वास करने का हरसंभव कारण है कि साक्षी की रुचि समाप्त हो गई हो और अभियुक्त द्वारा उसे अपने पक्ष में कर लिया गया हो । अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है कि जब अभियुक्त द्वारा सेवानिवृत्ति के पश्चात् मिलने वाले शोध्यों का निपटान किया जा रहा था और यदि अभियुक्त द्वारा रकम की मांग नहीं की गई थी, तो अनंत देशमुख ने उस तारीख को जब उसकी बहिन के कागजातों का निपटान किया जा रहा था भ्रष्टाचार निरोध ब्यूरो में लिखित शिकायत क्यों की ।

15. इस संबंध में, हम उच्च न्यायालय से सहमत हैं कि विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 20 की उपधारा (1) के अधीन की जाने वाली उपधारणा की पूर्णतः अनदेखी की है । धारा 20 की उपधारा (1) में यह उपबंधित है कि जहां धारा 7 या धारा 13 की उपधारा (1) के खंड (क) या खंड (ख) के अधीन दंडनीय अपराध के किसी विचारण में यह साबित किया जाता है कि अभियुक्त व्यक्ति ने किसी व्यक्ति से कोई परितोषण (वैध पारिश्रमिक से भिन्न) या कोई मूल्यवान वस्तु अपने लिए, या किसी अन्य व्यक्ति के लिए, प्रतिगृहीत या अभिप्राप्त की है या प्रतिगृहीत करने की सहमति दी है या अभिप्राप्त करने का प्रयत्न किया है, वहां जब तक प्रतिकूल साबित नहीं कर दिया जाता है, यह उपधारणा की जाएगी कि उसने, यथास्थिति, उस परितोषण या उस मूल्यवान वस्तु को ऐसे हेतु या इनाम के रूप में, जैसा कि धारा 7 में वर्णित है, या यथास्थिति प्रतिफल के बिना या ऐसे प्रतिफल के लिए जिसका अपर्याप्त होना वह जानता है, प्रतिगृहीत या अभिप्राप्त किया है या प्रतिगृहीत करने के लिए सहमत हुआ है या अभिप्राप्त करने का प्रयत्न किया है । अभियुक्त की ओर से अभि. सा. 1 उत्तम भूतेकर, अभि. सा. 3 साहेबराव वानवे और अभि. सा. 9 अनंत देशमुख को दिए गए इस सुझाव के अतिरिक्त, यह स्पष्ट है कि अभियुक्त ने यह स्वीकार किया है कि छापामार दल ने उसकी जेब से तीन करंसी नोट बरामद किए थे । इन परिस्थितियों में, वर्तमान मामले में अभियुक्त को युक्तियुक्त संदेह का फायदा देने का कोई प्रश्न नहीं था ।

16. **हिमाचल प्रदेश प्रशासन** बनाम **ओम प्रकाश**[1] वाले मामले में

[1] [1972] 2 उम. नि. प. 105 = (1972) 1 एस. सी. सी. 249.

"युक्तियुक्त संदेह" अभिव्यक्ति को स्पष्ट करते हुए इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया है :–

> "विचारण में प्रतिपरीक्षा द्वारा या साक्ष्यक्रम का संयोजन किसी रीति विशेष से करके जिस पर जोर दिया है, अभियोजन साक्ष्य के संबंध में संदेह और अनिश्चितताएं पैदा कर देना अनुभवी, योग्य और निपुण अधिवक्ताओं के बूते के बाहर नहीं है । किंतु ध्यान में रखने योग्य बात यह है कि न्यायालय के समक्ष साक्ष्य में अनिश्चितता कहां तक है यह बात साधारणतया उस साक्ष्य की प्रकृति और गुण पर निर्भर है । हो सकता है कि ऐसे साक्षी हों जो झूठ बोल रहे हों या जहां वे ईमानदार और सच्चे हों उन्हें पक्का पता न हो । अतः ऐसे साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय या सही नतीजे पर पहुंचते समय विज्ञान या गणित की तरह सही और निश्चित बात की आशा करना कठिन है । इन कठिनाइयों के कारण, जहां संभव होता है, संपुष्टि की अपेक्षा की जाती है और अपराधियों के अभियोजन में अभियुक्त को संदेह का लाभ देने का नियम निर्णायक बन जाता है जिसका दूसरे शब्दों में अर्थ यह है कि अभियोजन को अपना मामला पर्याप्त विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा इस प्रकार साबित करना पड़ता है जिससे वह युक्तियुक्त संदेह से परे हो जाए । जिस संदेह के लाभ का अभियुक्त हकदार है वह युक्तियुक्त संदेह है– ऐसा संदेह जो तर्कसंगत रूप से विचार करने वाले के मन में युक्तियुक्ततः ईमानदारी से और शुद्ध अंतःकरण से उठेगा न कि ऐसे बुजदिल का संदेह जो उस तर्कसंगत परिणाम से कतराता है चाहे उसका कारण नासमझी हो– या डरा हुआ है जो उस दशा में होता है जिसमें लाभ नहीं दिया जाता है । या जैसा कि एक महान न्यायाधीश ने कहा है कि 'वह संदेह ऐसे अस्थिर मनःव्यक्ति का नहीं है जिसमें निश्चय करने का नैतिक साहस न हो बल्कि जो व्यर्थ और निर्मूल संशय में पड़ा रहता हो ।' इसका यह अर्थ नहीं है कि साक्ष्य इतना पक्का होना चाहिए जिससे कि ऐसी दूर की संभावना भी शेष न रहे जिसके अनुसार अभियुक्त अपराध नहीं कर सकता था । यदि ऐसा होता तो विधि समाज को संरक्षण न दे पाती क्योंकि ऐसी संभावना किसी भी मामले में अपवर्जित नहीं की जा सकती । इससे अजीब-अजीब अनुमानों या असंगत संदेहों के लिए गुंजाइश निकल आती है और न्याय का क्रम बिल्कुल अवरुद्ध न भी होता तो विलीन अवश्य हो जाता ।"

17. इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त अनुसार अधिकथित विधि को

दृष्टिगत करते हुए और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 20 को ध्यान में रखते हुए अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात्, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि विचारण न्यायालय ने भ्रष्टाचार से संबंधित वर्तमान मामले में युक्तियुक्त संदेह का फायदा देकर विधि की गलती की है । **निरंजन हेमचन्द्र साशीथल और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने भ्रष्टाचार के मामलों की गंभीरता पर निम्नलिखित शब्दों में चर्चा की है :–

> "26. विरोधाभास के किसी भय के बिना यह कहा जा सकता है कि भ्रष्टाचार को मात्रा के आधार पर नहीं आंका जाना चाहिए, क्योंकि भ्रष्टाचार अव्यवस्था पैदा करता है, उन्नति करने की सामाजिक इच्छा को नष्ट करता है, नाहक महत्वाकांशाओं को बढ़ाता है, अंतश्चेतना को मारता है, संस्थाओं की महत्ता को गिराता है, देश की आर्थिक हालत को पंगु बनाता है, शिष्टता का ह्रास करता है और शासन की रीढ़ को खोखला करता है । यह उल्लेख करना होगा कि धन का अनैतिक अर्जन ईमानदारी में विश्वास करने वाले लोगों की ऊर्जा को समाप्त करता है, और इतिहास साक्षी है कि उन्होंने इसे कैसे भोगा है ।"

18. ऊपर चर्चा किए गए कारणों, मामले के अभिलेख का परिशीलन करने, और पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों की विरोधी दलीलों पर विचार करने के पश्चात् हम उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित धारा 7 और 13(1)(घ) के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करते हुए पारित किए गए आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाते हैं । इसलिए, यह अपील खारिज की जानी चाहिए ।

19. तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है । अपीलार्थी नयनकुमार शिवप्पा वाघमरे जमानत पर है । उसकी जमानत रद्द की जाती है । वह दंडादेश के शेष भाग को भोगने के लिए संबंधित न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करेगा ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

---

[1] (2013) 4 एस. सी. सी. 642.

अमृतलाल लीलाधर भाई कोटक और अन्य

बनाम

गुजरात राज्य

26 फरवरी, 2015

न्यायमूर्ति एम. वाई. इकबाल और न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 498, 304ख और 306 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 113ख] – दहेज मृत्यु – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा साक्षियों के कथन से यह साबित होता है कि दहेज की मांग की गई, मृतका को मानसिक रूप से तंग किया गया, मृतका की मृत्यु विवाह के सात वर्ष के भीतर हुई अतः, न्यायालय यह उपधारित कर सकेगा कि ऐसी आत्महत्या का दुष्प्रेरण उसके पति या उसके पति के नातेदार द्वारा किया गया, इस प्रकार अभियुक्त धारा 498क, 304ख और 306 के अधीन दोषसिद्ध ठहराए जाने के दायी हैं ।

अभियोजन का पक्षकथन इस प्रकार है कि मृतका तृप्तिबेन और इस मामले में के अपीलार्थी सं. 3 का विवाह तारीख 1 मई, 1996 को हुआ था । तृप्तिबेन गुजरात के जिला राजकोट के निवासी कांतिलाल धनजीभाई करिया की पुत्री थी । विवाह के पश्चात्, तृप्तिबेन अपने ससुराल वालों अर्थात् अपीलार्थी सं. 1 और 2 तथा उसके पति के साथ एक संयुक्त परिवार में गुजरात के मोरबी कस्बे में रहती थी । उक्त विवाह बंधन से एक कन्या ने जन्म लिया जिसका नाम गोपी है । तारीख 23 मार्च, 2000 को लगभग 11.30 बजे पूर्वाह्न में जब कांतिलाल धनजीभाई करिया राजकोट स्थित बैंक आफ बड़ोदा में अपनी ड्यूटी पर था, उसे अपीलार्थी सं. 1 से टेलीफोन पर संदेश प्राप्त हुआ कि उसकी पुत्री पंखे से लटकी हुई है और उससे कहा गया कि वह तुरंत मोरबी आ जाए । कांतिलाल धनजीभाई करिया ने अपने निकट नातेदारों को उक्त टेलीफोन पर प्राप्त संदेश के बारे में सूचित किया और उसके पश्चात् वे मोरबी की ओर रवाना हो गए । इसी दौरान, अपीलार्थी सं. 1 ने उक्त घटना की सूचना मोरबी नगर के पुलिस थाने को दी । सुसंगत समय पर तैनात थाना प्रभारी ने थाने के रोजनामचे में प्रवृष्टि की और इस मामले का अन्वेषण करने के लिए सहायक उप निरीक्षक को निदेश दिया । सहायक उप निरीक्षक घटनास्थल पर गया और

अन्वेषण की प्रारंभिक औपचारिकताएं पूरी कीं । उसने अपीलार्थी सं. 1 का कथन अभिलिखित किया और इसके पश्चात् उसने एक सहायक (याडी) को दुर्घटनात्मक मृत्यु के लिए मामला दर्ज कराने पुलिस थाने भेजा जो ए. डी. सं. 16/2000 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । इसके पश्चात् उक्त घटना के संबंध में पुलिस निरीक्षक श्री जयनारायण रामेश्वर श्रीवास्तव ने अन्वेषण का कार्यभार संभाला । अन्वेषण अधिकारी ने मृतका के पिता कांतिलाल धनजीभाई करिया को उक्त घटना के संबंध में सूचित किया और इसके उत्तर में मृतका के पिता ने अन्वेषण अधिकारी से कहा कि वह उसके मोरबी पहुंचने तक उसकी पुत्री के शव की स्थिति में कोई भी परिवर्तन न करे । उसी दिन अर्थात् तारीख 23 मार्च, 2000 को सायंकाल उक्त घटना के संबंध में मृतका के पिता द्वारा अपीलार्थियों के विरुद्ध एक शिकायत फाइल की गई जो भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 114 के साथ पठित धारा 498क, 304ख और 306 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए अपराध मामला सं. 92/2000 रजिस्ट्रीकृत किया गया । मृतका का शव पंखे से उतारा गया और उसे शवपरीक्षण के लिए भेज दिया गया । अन्वेषण किया गया और अनेक साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए । अपीलार्थियों को जिला और अपर सेशन न्यायाधीश, त्वरित निपटान न्यायालय सं. 7, मोरबी के न्यायालय में सेशन मामला सं. 52/2000 के लिए प्रस्तुत किया गया और उनका विचारण किया गया । विचारण के दौरान साक्षियों की विस्तार से परीक्षा कराई गई । अभि. सा. 1, अभि. सा. 8 और अभि. सा. 9 ने यह कथन किया है कि विवाह के समय उपलब्ध कराए गए अपर्याप्त दहेज के कारण अभियुक्तों द्वारा मृतका अपने साथ निरंतर होने वाली मानसिक यातना और प्रपीड़न की शिकायत किया करती थी । इस साक्ष्य का समर्थन मृतका का मित्र अभि. सा. 7 द्वारा होता है जिसने यह कथन किया है कि मृतका ने उसे यह बताया था कि कम दहेज लाने के कारण उसके साथ अभियुक्तों द्वारा निरंतर मानसिक यातना और प्रपीड़न का व्यवहार किया जा रहा है । इस साक्षी की भी अन्य साक्षियों से भिन्न प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा विस्तार से प्रतिपरीक्षा की गई है और साक्षियों द्वारा उपलब्ध कराए गए साक्ष्य के आधार पर अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 114 के साथ पठित धारा 498क, 304ख और 306 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया । यह दांडिक अपील, विशेष इजाजत द्वारा गुजरात उच्च न्यायालय के तारीख 17 जून, 2009 के उस आक्षेपित एक ही निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है जिसके अनुसार उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों

द्वारा फाइल की गई 2004 की दांडिक अपील सं. 1327 खारिज की और विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश की पुष्टि की । उच्च न्यायालय ने वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश कायम रखा और यह मत व्यक्त किया कि शिकायतकर्ता, मृतका की बड़ी बहिन और मृतका के दादा द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का समर्थन अभि. सा. 7 द्वारा दिए गए साक्ष्य से होता है और ये सभी साक्षी मृतका के मित्र और नातेदार हैं । उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश के विरुद्ध इस न्यायालय में अपील की गई । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि अभि. सा. 1, अभि. सा. 7, अभि. सा. 8 और अभि. सा. 9 द्वारा दिए गए साक्ष्य का परिशीलन करने पर युक्तियुक्त रूप से इस बात की आशंका प्रतीत होती है कि अभियुक्त द्वारा अपराध कारित किया गया है । यदि किसी अभियुक्त को एक धारा के अधीन दोषमुक्त किया जाता है तब इसका यह अर्थ नहीं होगा कि उसे अन्य धारा के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता । जब किसी महिला ने विवाह की तारीख से 7 वर्ष की अवधि के भीतर आत्महत्या कारित की हो तब साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अनुसार उपधारणा की जा सकती है । इस मामले में, दस्तावेजी साक्ष्य और साक्षियों के वृत्तांत का परिशीलन करने पर अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 304ख और 498क के अधीन दोषसिद्ध किया गया है । वर्तमान मामले में जिस पर न्यायालय विचार कर रहा है, युक्तियुक्त शंका की जा सकती है कि अभियुक्तों ने दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध कारित किया है और साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपधारणा की जा सकती है क्योंकि विवाह हुए 7 वर्ष पूरे नहीं हुए हैं । भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क और 113ख के लागू किए जाने के संबंध में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि विधान-मंडल का आशय दहेज मृत्यु आदि जैसी बुराई को दृढ़ता के साथ समाप्त करना है । यह ध्यान में रखना चाहिए कि चूंकि ऐसे अपराध सामान्यतया आवासीय गृहों के भीतर ही कारित किए जाते हैं, इसलिए ऐसे मामलों में प्रत्यक्ष साक्ष्य जुटाना सरल नहीं है । यही कारण है कि विधान-मंडल ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क और 113ख को पुरःस्थापित करते हुए और यदि कतिपय बुनियादी तथ्य साबित हो जाते हैं और विवाह के 7 वर्षों के भीतर दुर्भाग्य घटना घटित होती है तब ऐसी स्थिति में अभियोजन पक्ष को सशक्त बनाने का प्रयास किया है । वर्तमान मामले में, अभि. सा. 1 अभि. सा. 7, अभि. सा. 8

और अभि. सा. 9 के साक्ष्यों से यह सिद्ध हो गया है कि दहेज की मांग की गई है और मृतका को मानसिक रूप से तंग किया जा रहा था । इस न्यायालय ने दहेज मृत्यु के मामलों में दोष के सिद्ध होने के संबंध में कतिपय सिद्धांत व्यक्त किए हैं । प्रथम सिद्धांत इस प्रकार है कि आत्म-हत्या विवाह के 7 वर्षों के भीतर कारित की गई हो । द्वितीय सिद्धांत यह है कि पति या पति के किसी नातेदार ने आहत के साथ क्रूरता कारित की हो जिसके परिणामस्वरूप आहत ने आत्महत्या की है । ऐसा तब होता है जब साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क के अधीन यह उपदर्शित होता हो कि ऐसी परिस्थितियों में मामले के सम्पूर्ण पहलुओं पर विचार करते हुए न्यायालय यह उपधारित कर सकता है कि यह आत्महत्या मृतका के पति या उसके किसी नातेदार द्वारा दुष्प्रेरण किए जाने पर की गई है । वर्तमान मामले में अर्थात् जिस पर न्यायालय विचार कर रहा है, उपरोक्त दोनों सिद्धांतों का समाधान हो गया है क्योंकि मृतका की मृत्यु उसके विवाह के 7 वर्षों के भीतर हुई है और साक्षियों के साक्ष्यों से भी यह साबित हो गया है कि मृतका की दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु के तत्काल पूर्व उसके साथ क्रूरता कारित की गई थी । (पैरा 14, 15, 16 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 5 स्केल 641 : **दिनेश** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	16
[2010]	(2010) 10 एस. सी. सी. 353 : **थानू राम** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	17
[2008]	(2008) 15 एस. सी. सी. 497 : **बलवंत सिंह और अन्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** ;	14
[2007]	(2007) 10 एस. सी. सी. 797 : **किशोरी लाल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	12
[2007]	(2007) 12 एस. सी. सी. 443 : **एम. श्रीनिवासुलू** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ;	13
[2005]	(2005) 6 एस. सी. सी. 281 : **सुशील कुमार शर्मा** बनाम **भारत संघ** ;	13

[2004] (2004) 11 एस. सी. सी. 291 :
सकातर सिंह और अन्य बनाम **हरियाणा राज्य** ; 13

[1991] (1991) 3 एस. सी. सी. 1 :
पंजाब राज्य बनाम **इकबाल सिंह और अन्य** ; 15

[1971] (1971) 2 एस. सी. सी. 75 :
मटरू बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** । 13

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2010 की दांडिक अपील सं. 186.

2004 की दांडिक अपील सं. 1327 में गुजरात उच्च न्यायालय, अहमदाबाद के तारीख 17 जून, 2009 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री के. टी. एस. तुलसी, हुजैफा अहमदी (ज्येष्ठ अधिवक्ता), प्रधुमान गोहिल, (सुश्री) तरुणा सिंह, कुबेर बौद्ध, (सुश्री) जयकृति एस. जडेजा, (सुश्री) प्रबौधा शर्मा और (सुश्री) चारू माथुर

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वसुश्री नितिन सांग्रा, हेमन्तिका वाही, स्वाती वैभव, प्रीति भारद्वाज और पूजा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष ने दिया ।

न्या. घोष – यह दांडिक अपील, विशेष इजाजत द्वारा गुजरात उच्च न्यायालय के तारीख 17 जून, 2009 के उस आक्षेपित एक ही निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है जिसके अनुसार उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई 2004 की दांडिक अपील सं. 1327 खारिज की और विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश की पुष्टि की । उच्च न्यायालय ने वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश कायम रखा और यह मत व्यक्त किया कि शिकायतकर्ता (अभि. सा. 1), मृतका की बड़ी बहिन (अभि. सा 8) और मृतका के दादा (अभि. सा. 9) द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का समर्थन अभि. सा. 7 द्वारा दिए गए साक्ष्य से होता है और ये सभी साक्षी मृतका के मित्र और नातेदार हैं ।

2. अभियोजन का पक्षकथन इस प्रकार है कि मृतका तृप्तिबेन और इस मामले में के अपीलार्थी सं. 3 का विवाह तारीख 1 मई, 1996 को

हुआ था । तृप्तिबेन गुजरात के जिला राजकोट के निवासी कांतिलाल धनजीभाई करिया की पुत्री थी । विवाह के पश्चात्, तृप्तिबेन अपने ससुराल वालों अर्थात् अपीलार्थी सं. 1 और 2 तथा उसके पति (अपीलार्थी सं. 3) के साथ एक संयुक्त परिवार में गुजरात के मोरबी कस्बे में रहती थी । उक्त विवाह बंधन से एक कन्या ने जन्म लिया जिसका नाम गोपी है ।

3. तारीख 23 मार्च, 2000 को लगभग 11.30 बजे पूर्वाह्न में जब कांतिलाल धनजीभाई करिया राजकोट स्थित बैंक आफ बड़ोदा में अपनी ड्यूटी पर था, उसे अपीलार्थी सं. 1 से टेलीफोन पर संदेश प्राप्त हुआ कि उसकी पुत्री पंखे से लटकी हुई है और उससे कहा गया कि वह तुरंत मोरबी आ जाए । कांतिलाल धनजीभाई करिया ने अपने निकट नातेदारों को उक्त टेलीफोन पर प्राप्त संदेश के बारे में सूचित किया और उसके पश्चात् वे मोरबी की ओर रवाना हो गए ।

4. इसी दौरान, अपीलार्थी सं. 1 ने उक्त घटना की सूचना मोरबी नगर के पुलिस थाने को दी । सुसंगत समय पर तैनात थाना प्रभारी ने थाने के रोजनामचे में प्रवृष्टि की और इस मामले का अन्वेषण करने के लिए सहायक उप निरीक्षक को निदेश दिया । सहायक उप निरीक्षक घटनास्थल पर गया और अन्वेषण की प्रारंभिक औपचारिकताएं पूरी कीं । उसने अपीलार्थी सं. 1 का कथन अभिलिखित किया और इसके पश्चात् उसने एक सहायक (याडी) को दुर्घटनात्मक मृत्यु के लिए मामला दर्ज कराने पुलिस थाने भेजा जो ए. डी. सं. 16/2000 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । इसके पश्चात उक्त घटना के संबंध में पुलिस निरीक्षक श्री जयनारायण रामेश्वर श्रीवास्तव ने अन्वेषण का कार्यभार संभाला । अन्वेषण अधिकारी ने मृतका के पिता कांतिलाल धनजीभाई करिया को उक्त घटना के संबंध में सूचित किया और इसके उत्तर में मृतका के पिता ने अन्वेषण अधिकारी से कहा कि वह उसके मोरबी पहुंचने तक उसकी पुत्री के शव की स्थिति में कोई भी परिवर्तन न करे ।

5. उक्त कांतिलाल धनजीभाई करिया अर्थात् मृतका का पिता उसी दिन 3.00 बजे अपराह्न में वहां पहुंचा । उसे अपनी पुत्री तृप्तिबेन की मृत्यु पर संदेह हुआ क्योंकि अपीलार्थी इस घटना के पहले कई बार दहेज की मांग कर चुके थे और चूंकि सुसंगत समय पर मकान में कोई भी अपीलार्थी मौजूद नहीं था इसलिए यह तथ्य और अधिक प्रबलित हो गया ।

6. उसी दिन अर्थात् तारीख 23 मार्च, 2000 को सायंकाल उक्त

घटना के संबंध में मृतका के पिता द्वारा अपीलार्थियों के विरुद्ध एक शिकायत फाइल की गई जो भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 114 के साथ पठित धारा 498क, 304ख और 306 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए अपराध मामला सं. 92/2000 रजिस्ट्रीकृत किया गया । मृतका का शव पंखे से उतारा गया और उसे शवपरीक्षण के लिए भेज दिया गया । अन्वेषण किया गया और अनेक साक्षियों के कथन अभिलिखित किए गए ।

7. अपीलार्थियों के विरुद्ध शिकायत दर्ज किए जाने के पश्चात्, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 70 के अधीन अन्वेषण अधिकारी द्वारा रिपोर्ट फाइल किए जाने पर, संबंधित न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, मोरबी द्वारा गिरफ्तारी वारंट जारी किया गया किंतु अपीलार्थियों का पता नहीं चल सका । वे 36 दिन तक फरार रहे और अंत में तारीख 29 अप्रैल, 2000 को लगभग 9.30 बजे अपराह्न में अपीलार्थियों ने पुलिस थाना, मोरबी नगर में अभ्यर्पण किया ।

8. अपीलार्थियों को जिला और अपर सेशन न्यायाधीश, त्वरित निपटान न्यायालय सं. 7, मोरबी के न्यायालय में सेशन मामला सं. 52/2000 के लिए प्रस्तुत किया गया और उनका विचारण किया गया । विचारण के दौरान साक्षियों की विस्तार से परीक्षा कराई गई । अभि.सा. 1, अभि. सा. 8 और अभि. सा. 9 ने यह कथन किया है कि विवाह के समय उपलब्ध कराए गए अपर्याप्त दहेज के कारण अभियुक्तों द्वारा मृतका अपने साथ निरंतर होने वाली मानसिक यातना और प्रपीड़न की शिकायत किया करती थी । इस साक्ष्य का समर्थन मृतका का मित्र अभि. सा. 7 द्वारा होता है जिसने यह कथन किया है कि मृतका ने उसे यह बताया था कि कम दहेज लाने के कारण उसके साथ अभियुक्तों द्वारा निरंतर मानसिक यातना और प्रपीड़न का व्यवहार किया जा रहा है । इस साक्षी की भी अन्य साक्षियों से भिन्न प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा विस्तार से प्रतिपरीक्षा की गई है और साक्षियों द्वारा उपलब्ध कराए गए साक्ष्य के आधार पर अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 114 के साथ पठित धारा 498क, 304ख और 306 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया ।

9. उपर्युक्त निर्णय और सेशन न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर अपीलार्थियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपीलार्थियों के काउंसेल ने उच्च न्यायालय के समक्ष यह दलील दी है कि मृतका के नातेदारों द्वारा दिया गया साक्ष्य विश्वसनीय

नहीं है क्योंकि वे हितबद्ध साक्षी हैं ।

10. उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि इस पर कोई विवाद नहीं है कि मृतका की मृत्यु आत्महत्या से हुई है यद्यपि अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य विशेषकर शव के फोटोचित्र प्रदर्श 49/1 से 49/7 और मृत्यु समीक्षा पंचनामे से एक अलग ही कहानी सामने आती है । उच्च न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया है कि चूंकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 374 के अधीन अपील फाइल की गई है इसलिए मामले के दूसरे पहलू पर विचार करने की अपेक्षा नहीं की गई है और इसके बजाय वर्तमान अपील पर ध्यान केंद्रित किया गया है । शिकायतकर्ता (अभि. सा. 1), मृतका की बड़ी बहिन (अभि. सा. 8) और उसके दादा (अभि. सा. 9) के साक्ष्य का समर्थन अभि. सा. 7 के साक्ष्य से होता है और ये साक्षी मृतका का मित्र तथा नातेदार है । उच्च न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया है कि अभि. सा. 1, अभि. सा. 7, अभि. सा. 8 और अभि. सा. 9 के साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह सिद्ध होता है कि अपीलार्थी लालची हैं जिन्होंने विवाह की तारीख अर्थात् 1 मई, 1996 से ही दहेज मांगना आरंभ कर दिया था । अपीलार्थियों का यह पक्षकथन है कि मृत्यु के कुछ पूर्व क्रूरता किए जाने के संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा दंड संहिता की धारा 304ख के आवश्यक संघटक सिद्ध नहीं किए गए हैं । इस प्रकार उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित अंतिम निष्कर्ष और आदेश को कायम रखा है ।

11. हमने दोनों पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना है ।

12. अपीलार्थियों के काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभियोजन पक्ष दंड संहिता की धारा 306 और 304ख के अधीन अपीलार्थियों का दोष साबित करने में असफल रहा है । काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि दंड संहिता की धारा 304ख और 306 की शर्तों का समाधान करने के लिए यह साबित किया जाना चाहिए कि मृतका को अभियुक्तों द्वारा आत्महत्या करने के लिए वास्तव में उकसाया गया था या प्रकोपित किया गया था । अपीलार्थियों के काउंसेल ने यह दलील दी है कि **किशोरी लाल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि आत्महत्या के अभिकथित दुष्प्रेरण के मामलों में आत्महत्या कारित करने के लिए उकसाए जाने के संबंध में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कृत्य किए जाने का सबूत होना चाहिए । मात्र यह तथ्य कि पति ने पत्नी के साथ

[1] (2007) 10 एस. सी. सी. 797.

क्रूरता की थी, पर्याप्त नहीं है ।

13. अपीलार्थियों के काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि **सुशील कुमार शर्मा** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि दंड संहिता की धारा 498क का उद्देश्य दहेज जैसी बुराई की जड़ तक पहुंचना है और इसे बेलगाम करना विधिक आतंक की कोटि में आएगा । उपबंध का प्रयोग ढाल के रूप में किया जाना चाहिए न कि किसी अपराधी के हथियार के रूप में । काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि **सकातर सिंह और अन्य** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि ऐसा साक्ष्य जो साक्षी की वैयक्तिक जानकारी पर आधारित नहीं है, दोषसिद्धि का आधार नहीं बन सकता । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि **एम. श्रीनिवासुलू** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[3] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि यदि अभियुक्त द्वारा मृतका के साथ क्रूरता और तंग किए जाने का सारभूत सबूत उपलब्ध है तब भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख के अधीन केवल दहेज मृत्यु के मामलों में ही उपधारणा की जा सकती है । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि मात्र इस कारण से कि अभियुक्त फरार था, उक्त तथ्य उसके दोषी होने का आधार नहीं बन सकता । विद्वान् काउंसेल ने **मटरू** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[4] वाले मामले को उद्धृत किया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि फरार होने में अपनाए गए अपीलार्थियों के आचरण से आवश्यक रूप से यह निष्कर्ष नहीं निकलता है कि अपीलार्थी ने दोषी मन से कृत्य किया है । यहां तक कि एक निर्दोष व्यक्ति भी भयपरत हो सकता है और वह गिरफ्तारी से बचने का प्रयास कर सकता है यदि उस पर गलत तरीके से किसी गंभीर अपराध का संदेह किया जाए ।

14. हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अभि. सा. 1, अभि. सा. 7, अभि. सा. 8 और अभि. सा. 9 द्वारा दिए गए साक्ष्य का परिशीलन करने पर युक्तियुक्त रूप से इस बात की आशंका प्रतीत होती है कि अभियुक्त द्वारा अपराध कारित किया गया है । दंड संहिता की धारा 498क, 304ख

---

[1] (2005) 6 एस. सी. सी. 281.
[2] (2004) 11 एस. सी. सी. 291.
[3] (2007) 12 एस. सी. सी. 443.
[4] (1971) 2 एस. सी. सी. 75.

और 306 के लागू किए जाने के संबंध में विधिक स्थिति पर विचार किए जाने के लिए **बलवंत सिंह और अन्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि दंड संहिता की धारा 304ख और धारा 498क परस्पर सम्मिलित नहीं हैं । यदि किसी अभियुक्त को एक धारा के अधीन दोषमुक्त किया जाता है तब इसका यह अर्थ नहीं होगा कि उसे अन्य धारा के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता । जब किसी महिला ने विवाह की तारीख से 7 वर्ष की अवधि के भीतर आत्महत्या कारित की हो तब साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अनुसार उपधारणा की जा सकती है । इस मामले में, दस्तावेजी साक्ष्य और साक्षियों के वृत्तांत का परिशीलन करने पर अभियुक्तों को दंड संहिता की धारा 304ख और 498क के अधीन दोषसिद्ध किया गया है । वर्तमान मामले में जिस पर हम विचार कर रहे हैं, युक्तियुक्त शंका की जा सकती है कि अभियुक्तों ने दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध कारित किया है और साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख के अधीन उपधारणा की जा सकती है क्योंकि विवाह हुए 7 वर्ष पूरे नहीं हुए हैं ।

15. भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क और 113ख के लागू किए जाने के संबंध में, **पंजाब राज्य** बनाम **इकबाल सिंह और अन्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि विधान-मंडल का आशय दहेज मृत्यु आदि जैसी बुराई को दृढ़ता के साथ समाप्त करना है । यह ध्यान में रखना चाहिए कि चूंकि ऐसे अपराध सामान्यतया आवासीय गृहों के भीतर ही कारित किए जाते हैं, इसलिए ऐसे मामलों में प्रत्यक्ष साक्ष्य जुटाना सरल नहीं है । यही कारण है कि विधान-मंडल ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क और 113ख को पुरःस्थापित करते हुए और यदि कतिपय बुनियादी तथ्य साबित हो जाते हैं और विवाह के 7 वर्षों के भीतर दुर्भाग्य घटना घटित होती है तब ऐसी स्थिति में अभियोजन पक्ष को सशक्त बनाने का प्रयास किया है ।

16. दहेज की मांग और मृत्यु के बीच कोई प्रत्यक्ष संबंध है या नहीं, इस बाबत **दिनेश** बनाम **हरियाणा राज्य**[3] वाले मामले में अभियुक्त को दंड संहिता की धारा 113ख और 304ख के अधीन उपधारणा के आधार पर दोषसिद्ध किया गया है क्योंकि कतिपय बुनियादी तथ्य सिद्ध हो गए थे ।

---

[1] (2008) 15 एस. सी. सी. 497.

[2] (1991) 3 एस. सी. सी. 1.

[3] (2014) 5 स्केल 641.

वर्तमान मामले में, अभि. सा. 1 अभि. सा. 7, अभि. सा. 8 और अभि. सा. 9 के साक्ष्यों से यह सिद्ध हो गया है कि दहेज की मांग की गई है और मृतका को मानसिक रूप से तंग किया जा रहा था ।

17. **थानू राम** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने दहेज मृत्यु के मामलों में दोष के सिद्ध होने के संबंध में कतिपय सिद्धांत व्यक्त किए हैं । प्रथम सिद्धांत इस प्रकार है कि आत्महत्या विवाह के 7 वर्षों के भीतर कारित की गई हो । द्वितीय सिद्धांत यह है कि पति या पति के किसी नातेदार ने आहत के साथ क्रूरता कारित की हो जिसके परिणामस्वरूप आहत ने आत्महत्या की है । ऐसा तब होता है जब साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क के अधीन यह उपदर्शित होता हो कि ऐसी परिस्थितियों में मामले के सम्पूर्ण पहलुओं पर विचार करते हुए न्यायालय यह उपधारित कर सकता है कि यह आत्महत्या मृतका के पति या उसके किसी नातेदार द्वारा दुष्प्रेरण किए जाने पर की गई है । वर्तमान मामले में अर्थात् जिस पर हम विचार कर रहे हैं, उपरोक्त दोनों सिद्धांतों का समाधान हो गया है क्योंकि मृतका की मृत्यु उसके विवाह के 7 वर्षों के भीतर हुई है और साक्षियों के साक्ष्यों से भी यह साबित हो गया है कि मृतका की दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु के तत्काल पूर्व उसके साथ क्रूरता कारित की गई थी ।

18. अतः हमें उच्च न्यायालय या विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णयों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । तद्नुसार अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

अस./पा.

---

[1] (2010) 10 एस. सी. सी. 353.

[2015] 2 उम. नि. प. 90

तेजराम पाटिल

बनाम

महाराष्ट्र राज्य

26 फरवरी, 2015

न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा और न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 32(1) – मृत्युकालिक कथन – अभियुक्त द्वारा अपनी पत्नी (मृतका) पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाया जाना – मृतका को शत-प्रतिशत दाह क्षतियां पहुंचना – पुलिस अधिकारी द्वारा अस्पताल में मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जाना – कथन अभिलिखित करने से पूर्व उसके कथन करने के लिए समर्थ होने की बाबत डाक्टर की राय अभिप्राप्त न किया जाना – कथन पर कथनकर्ता के हस्ताक्षर/अंगूठे का चिह्न न होना – कथन की विश्वसनीयता – अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कोई सामग्री न होने पर कि मृतका कथन करने के लिए ठीक मानसिक हालत में थी, ऐसे कथन को विश्वसनीय मानकर उसका अवलंब नहीं लिया जा सकता है ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 32(1) – मृत्युकालिक कथन – अभियुक्त द्वारा अपनी पत्नी (मृतका) पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाया जाना – मृतका की माता द्वारा बीच-बचाव करने पर उसे भी दाह क्षतियां पहुंचना – उसके द्वारा मृत्युकालिक कथन किया जाना – अन्य व्यक्ति (मृतका) की मृत्यु की बाबत उक्त कथन की ग्राह्यता – मृत्युकालिक कथन न केवल कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु के कारण के संबंध में और उस संव्यवहार की परिस्थितियों के संबंध में ग्राह्य है जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, अपितु यदि उक्त संव्यवहार की परिस्थितियों का अन्य व्यक्ति की मृत्यु से भी संबंध है, तो ऐसा कथन तब अग्राह्य नहीं ठहराया जा सकता है जब उसकी मृत्यु की परिस्थितियां उस अन्य व्यक्ति की मृत्यु की परिस्थितियों से अभिन्न रूप से संबद्ध हों, अतः उक्त मृत्युकालिक कथन के आधार पर की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि उचित है ।

मृतका सविता का विवाह अभियुक्त-अपीलार्थी के साथ प्रश्नगत घटना की तारीख अर्थात् 28 मार्च, 1999 से तीन वर्ष पूर्व हुआ था । वे एक किराए के मकान में रह रहे थे जिसकी स्वामी विमलबाई (अभि. सा. 1) थी । मृतका की माता प्रभाबाई भी अपनी बेटी के घर आई हुई थी । दुर्भाग्यशाली दिन अपीलार्थी नशे की हालत में घर लौटा और मृतका तथा उसकी माता को गाली देने लगा । उसके पश्चात् उसने मृतका पर मिट्टी का तेल छिड़का और उसे आग लगा दी । प्रभाबाई और विमलबाई ने आग बुझाने की कोशिश की और इस प्रक्रिया में उन्हें भी दाह क्षतियां पहुंचीं । उन्हें चिकित्सा महाविद्यालय और अस्पताल, नागपुर ले जाया गया । मृतका ने पुलिस उप निरीक्षक सुनील एकनाड़ी वंजारी के समक्ष एक मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श 45) किया । उसकी तारीख 29 मार्च, 1999 को क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । प्रभाबाई ने भी पुलिस उप निरीक्षक (अभि. सा. 5) के समक्ष एक मृत्युकालिक कथन किया, जिनके आधार पर पुलिस थाने में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट (अभि. सा. 3) ने भी तारीख 29 मार्च, 1999 को प्रभाबाई का मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श 41) अभिलिखित किया । उक्त मजिस्ट्रेट ने अभि. सा. 1 विमलबाई का भी कथन (प्रदर्श 29) अभिलिखित किया । प्रभाबाई की भी 77 प्रतिशत दाह क्षतियों के साथ तारीख 1 अप्रैल, 1999 को मृत्यु हो गई । शवों की मरणोत्तर परीक्षा की गई । अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् अभियुक्त को विचारण के लिए भेजा गया । विचारण न्यायालय ने अभियोजन के पक्षकथन को मुख्य रूप से मृतका प्रभाबाई द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथन का अवलंब लेते हुए साबित किया गया ठहराया और अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध ठहराया और दंडादिष्ट किया । अपील करने पर उच्च न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश की अभिपुष्टि तो की, किंतु अलग आधार पर । उच्च न्यायालय ने मृत्युकालिक कथनों, प्रदर्श 41 और 43, को सविता की मृत्यु के कारण के लिए अग्राह्य ठहराया, क्योंकि उक्त कथन मृतका प्रभाबाई द्वारा किए गए थे और केवल प्रभाबाई की मृत्यु के कारण के लिए ही सुसंगत हो सकते थे । तथापि, सविता द्वारा किया गया मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 45, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था, उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया । उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर अभियुक्त-अपीलार्थी ने उच्चतम न्यायालय में अपील

फाइल की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस अपील का विनिश्चय निम्नलिखित दो प्रश्नों पर निर्भर करेगा :– (i) अभि. सा. 4, पुलिस उप निरीक्षक सुनील एकनाड़ी वंजारी द्वारा अभिलिखित मृतका सविता द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 45, की विश्वसनीयता ; (ii) विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट राजीव बाबाराव राउत द्वारा अभिलिखित प्रभाबाई द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श 41) और पुलिस उप निरीक्षक भीला नारायण बचाओ द्वारा अभिलिखित मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श 43) की ग्राह्यता और विश्वसनीयता । जहां तक मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 45, का संबंध है, यह न्यायालय अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलील में गुणागुण पाता है । इस न्यायालय का यह मत है कि विचारण न्यायालय ने उक्त साक्ष्य को त्यक्त करके न्यायोचित किया है । निस्संदेह, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेकर अभिनिर्धारित किया गया है कि यहां तक कि कथनकर्ता की मस्तिष्क की आरोग्यता के बारे में डाक्टर द्वारा प्रमाणन के अभाव में और चाहे मृत्युकालिक कथन पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया हो, उसका अवलंब लिया जा सकता है । तथापि, न्यायालय का यह समाधान होना आवश्यक है कि मृतका मृत्युकालिक कथन करने के लिए ठीक मानसिक हालत में थी और कथन निष्ठापूर्वक अभिलिखित किया गया था और अन्यथा विश्वसनीय है । वर्तमान मामले में, ऐसा समाधान अभिलिखित करना कठिन है । न्यायालय का यह समाधान करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि मृतका कथन करने के लिए ठीक हालत में थी । मृतका अपना अभिकथित कथन करने के समय अस्पताल में थी किंतु पुलिस उप निरीक्षक द्वारा उसके स्वास्थ्य की दशा का अभिनिश्चय करने या यह प्रमाणित करने का कोई प्रयास नहीं किया कि उसने कथनकर्ता के समर्थ होने के बारे में अपना समाधान कर लिया है । मृत्युकालिक कथन पर मृतका के हस्ताक्षर या अगूंठे का चिह्न नहीं है । मृतका को शत-प्रतिशत दाह क्षतियां पहुंची थीं और इस न्यायालय की राय में, उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया यह दृष्टिकोण कि तथ्यों की विलक्षणता में मृत्युकालिक कथन की प्रमाणिकता स्वीकार की जा सकती है, तर्कसंगत नहीं है । (पैरा 14 और 15)

वर्तमान मामले में, इस न्यायालय का संबंध इस प्रश्न से है कि क्या प्रभाबाई का कथन सविता की मृत्यु के कारण का अवधारण करने के लिए सुसंगत है या नहीं । दूसरे शब्दों में, जब आरोप सविता की हत्या का है, तब क्या प्रभाबाई की मृत्यु के कारण को भी प्रश्नगत होना ठहराया जा

सकता है, जो घटना का अभिन्न भाग है । पढ़ने मात्र से ही यह कथन मृत्यु के कारण या उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में ग्राह्य लगता है जिसके फलस्वरूप कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु हुई । प्रश्न यह है कि तब क्या घटित हुआ था जब एक ही संव्यवहार में दो मृत्यु हुईं और उस संव्यवहार की परिस्थितियां जिनके फलस्वरूप एक मृत्यु हुई, दूसरी मृत्यु के साथ पूरी तरह से परस्पर संबद्ध है । स्वीकार्य रूप से, प्रभाबाई का मृत्युकालिक कथन उसकी मृत्यु तथा उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में ग्राह्य है जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई । ऐसा कथन स्वतः कथन करने वाले व्यक्ति से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु के कारण का अवधारण करने के लिए ग्राह्य न हो । तथापि, जब उस संव्यवहार की परिस्थितियां, जिनके फलस्वरूप कथन करने वाले व्यक्ति तथा किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु हुई, एक ही संव्यवहार का भाग हैं, तब वे ऐसे अन्य व्यक्ति की मृत्यु के कारण के बारे में भी सुसंगत होंगी । इस प्रकार, जब उस संव्यवहार की परिस्थितियों से संबंधित मृत्युकालिक कथन, जिनके फलस्वरूप कथन करने वाले की मृत्यु हुई, उन परिस्थितियों का अभिन्न भाग हैं जिनके फलस्वरूप किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु हुई, तो ऐसे मृत्युकालिक कथन की उस अन्य व्यक्ति की मृत्यु से भी सुसंगति है । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मृत्युकालिक कथन न केवल कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु के कारण के संबंध में और उस संव्यवहार की परिस्थितियों के संबंध में ग्राह्य है जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, अपितु यदि उक्त संव्यवहार की परिस्थितियों का अन्य व्यक्ति की मृत्यु से भी संबंध है, तो ऐसा कथन तब अग्राह्य नहीं ठहराया जा सकता है जब "उसकी" मृत्यु की परिस्थितियां उस अन्य व्यक्ति की मृत्यु की परिस्थितियों से अभिन्न रूप से संबद्ध हों । वर्तमान मामले में, सविता पर मिट्टी का तेल छिड़कने, इस प्रक्रिया में प्रभाबाई द्वारा बीच-बचाव करने और उसे दाह क्षतियां पहुंचने जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई का कथन एक ही संव्यवहार का अभिन्न भाग है । इस प्रकार, वह कथन, जो उस संव्यवहार की परिस्थितियों के संबंध में है जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, ग्राह्य होने के कारण यह दर्शित करने के लिए इसका अवलंब लिया जा सकता है कि सविता की मृत्यु कैसे हुई । उक्त कथन की संपुष्टि स्वयं अभियुक्त की इस सीमा तक स्वीकारोक्ति से होती है कि सविता की मृत्यु जलने से हुई थी और मृतका प्रभाबाई को दाह क्षतियां उसी घटना में पहुंची थीं । यद्यपि अभियुक्त का यह बयान कि यह आत्महत्या थी, इसे ठीक ही मिथ्या पाया गया है । इन परिस्थितियों में, सविता की मृत्यु अभियुक्त द्वारा मिट्टी का

तेल छिड़क कर और उसे आग लगाकर जलाने से हुई मानव वध मृत्यु होना युक्तियुक्त संदेह के परे साबित होती है । यह बात प्रभाबाई के कथन और विद्यमान परिस्थितियों से सिद्ध होती है । उक्त कथन सम्यक् रूप से मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया गया था और इस पर प्रभाबाई के होश में होने और कथन करने के लिए समर्थ होने के बारे में डाक्टर द्वारा किया गया पृष्ठांकन है । उक्त मृत्युकालिक कथन में दिए गए वृत्तांत की प्रमाणिकता को स्वीकार न करने का कोई कारण नहीं है । तद्नुसार, यह न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि प्रभाबाई द्वारा उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में किया गया मृत्युकालिक कथन ग्राह्य है जिसमें अभियुक्त द्वारा मिट्टी का तेल छिड़कने और आग लगाने की वह परिस्थिति भी सम्मिलित है जिसके फलस्वरूप मृतका की मृत्यु हुई । उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, यह न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि अपीलार्थी के विरुद्ध अभियोजन का पक्षकथन युक्तियुक्त संदेह के परे साबित होता है । उसकी दोषसिद्धि और दंडादेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । (पैरा 18, 19, 21, 25, 26, 28 और 29)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2002]	(2002) 6 एस. सी. सी. 710 : **लक्ष्मण** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	15
[1985]	[1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	24
[1984]	1984 क्रिमिलन ला जर्नल 1447 : **काशीनाथ तुकाराम जाधव** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	22
[1959]	ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 18 = [1959] एस. सी. आर. 1336 : **रतन गौंड** बनाम **बिहार राज्य** ;	23
[1955]	ए. आई. आर. 1955 त्रावण.- को. 104 : **लुक्का उलाहन्नेन** बनाम **त्रावणकोर-कोचिन राज्य** ;	22
[1948]	ए. आई. आर. 1948 इलाहाबाद 170 : **कुंवरपाल सिंह** बनाम **एम्परर** ;	22

[1936] ए. आई. आर. 1936 रंगून 187 :
नगा हिज दीन बनाम **एम्परर** । 22

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 1330.

2003 की दांडिक अपील सं. 455 में बम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर स्थित नागपुर न्यायपीठ के तारीख 17 नवम्बर, 2008 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री किशोर लोम्बाड और एस. राजप्पा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री प्रशांत एस. केंजले और अनिरुद्ध मेयी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल ने दिया ।

न्या. गोयल – यह अपील 2003 की दांडिक अपील सं. 455 में बम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर न्यायपीठ द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि और कठोर आजीवन कारावास के दंडादेश को मान्य ठहराते हुए तारीख 17 नवम्बर, 2008 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है । अपीलार्थी को 10,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर छह माह का और कठोर कारावास भोगने का भी निदेश दिया गया है ।

2. मृतका सविता का अपीलार्थी के साथ विवाह प्रश्नगत घटना की तारीख अर्थात् 28 मार्च, 1999 से तीन वर्ष पूर्व हुआ था । इस विवाह से एक पुत्र और एक पुत्री का जन्म हुआ । वे एक किराए के मकान में रह रहे थे जिसकी स्वामी अभि. सा. 1 विमलबाई थी ।

3. अभियोजन पक्ष के अनुसार, मृतका के साथ क्रूरता की जाती थी और दुर्भाग्यशाली दिन अपीलार्थी नशे की हालत में घर लौटा और मृतका तथा उसकी माता प्रभाबाई, जो अपनी बेटी के घर आई हुई थी, को गाली देने लगा । उसके पश्चात् अपीलार्थी ने मृतका पर मिट्टी का तेल छिड़का और उसे आग लगा दी । प्रभाबाई और विमलबाई (अभि. सा. 1) ने आग बुझाने की कोशिश की और इस प्रक्रिया में उन्हें दाह क्षतियां पहुंचीं । उन्हें चिकित्सा महाविद्यालय और अस्पताल, नागपुर ले जाया गया । मृतका ने

पुलिस उप निरीक्षक सुनील एकनाड़ी वंजारी के समक्ष एक मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श 45) किया । उसकी तारीख 29 मार्च, 1999 को पूर्वाह्न में 6.25 बजे क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । प्रभाबाई ने भी पुलिस उप निरीक्षक भीला नारायण बचाओ (अभि. सा. 5) के समक्ष एक मृत्युकालिक कथन किया, जिनके आधार पर पुलिस थाना, इमामबाड़ा में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, राजीव बाबाराव राउत (अभि. सा. 3) ने भी तारीख 29 मार्च, 1999 को पूर्वाह्न में 9.30 बजे प्रभाबाई का मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श 41) अभिलिखित किया । उक्त मजिस्ट्रेट ने अभि. सा. 1 विमलबाई का भी कथन (प्रदर्श 29) अभिलिखित किया । प्रभाबाई की 77 प्रतिशत दाह क्षतियों के साथ तारीख 1 अप्रैल, 1999 को पूर्वाह्न में 2.20 बजे मृत्यु हो गई । शवों की मरणोत्तर परीक्षा की गई ।

4. अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् अभियुक्त को विचारण के लिए भेजा गया । अभियोजन पक्ष ने मृत्युकालिक कथनों और अन्य दस्तावेजों को प्रस्तुत करने के अतिरिक्त अभि. सा. 1 विमलबाई, भूस्वामिनी, मृतका का पिता, अभि. सा. 2 पुरुषोत्तम, विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट अभि. सा. 3 राजीव बाबाराव राउत, अभि. सा. 4 पुलिस उप निरीक्षक सुनील एकनाड़ी वंजारी और अभि. सा. 5 पुलिस उप निरीक्षक भीला नारायण बचाओ की परीक्षा कराई । अभियोजन पक्ष ने विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट, राजीव बाबाराव द्वारा सम्यक् रूप से अभिलिखित प्रभाबाई द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 41, का मुख्य रूप से अवंलब लिया । जहां तक मृतका सविता के मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 45, का संबंध है, विचारण न्यायालय ने इन खामियों का उल्लेख करते हुए इसका अवलंब नहीं लिया कि उक्त मृत्युकालिक कथन पर मृतका के हस्ताक्षर या अंगूठा चिह्न नहीं है । कथन करने के लिए मृतका के समर्थ होने का कोई साक्ष्य नहीं है ।

5. जहां तक प्रभाबाई के मृत्युकालिक कथन का संबंध है, इसकी ग्राह्यता के बारे में आक्षेप को, जहां तक इसका संबंध मृतका सविता की मृत्यु से है, नामंजूर कर दिया गया । इस प्रश्न पर इस आदेश के पश्चात्वर्ती भाग में विचार करेंगे । तथ्यों के पूर्ण वर्णन के लिए उक्त मृत्युकालिक कथन की अंतर्वस्तुएं उल्लेखनीय हैं, जो निम्नलिखित रूप में हैं :–

> "मैं आकस्मिक रूप से अपनी पुत्री सविता के घर गई थी । घटना अपराह्न में 8.30 बजे घटी थी । सविता का पति (तेजराम)

अभियुक्त शराब पीकर घर आया । तेजराम सविता के साथ झगड़ने लगा । फिर तेजराम ने सविता के शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़क दिया और माचिस की तिल्ली जलाकर उसे आग लगा दी । मैं और मकानमालकिन विमलबाई (अभि. सा. 1) सविता को बचाने के लिए दौड़े । तथापि, आग की लपटें उठने लगी थीं । मैंने सविता को पकड़ने की कोशिश की किंतु जल गई । पड़ोसी हमें अस्पताल लेकर आए ।"

उपरोक्त कथन अभि. सा. 5, उप निरीक्षक भीला नारायण बचाओ द्वारा अभिलिखित कथन (प्रदर्श 43) के समतुल्य है । यहां यह उल्लेखनीय है कि मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 41, पर कथनकर्ता के कथन करने के लिए समर्थ होने के बारे में डाक्टर का प्रमाणन है ।

6. धारा 313 के अधीन अभियुक्त के कथन में उसका आधार यह था कि जब वह मृतका सविता की घरेलू खर्चे के लिए 200/- रुपए देने की मांग को पूरा करने में असफल रहा तो उसने अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़ककर आत्महत्या कर ली ।

7. विचारण न्यायालय ने अभियोजन के पक्षकथन को मुख्य रूप से मृतका प्रभाबाई द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथनों, प्रदर्श 41 और 43, का अवलंब लेते हुए साबित किया गया ठहराया । उक्त मृत्यकालिक कथनों को ग्राह्य और असली ठहराया गया ।

8. अपील करने पर उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश की अभिपुष्टि तो की, किंतु अलग आधार पर । उच्च न्यायालय ने मृत्युकालिक कथनों, प्रदर्श 41 और 43, को सविता की मृत्यु के कारण के लिए अग्राह्य ठहराया, क्योंकि उक्त कथन मृतका प्रभाबाई द्वारा किए गए थे और केवल प्रभाबाई की मृत्यु के कारण के लिए ही सुसंगत हो सकते थे । तथापि, सविता द्वारा किया गया मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 45, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था, उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया । यह अभिनिर्धारित किया गया कि चूंकि सविता को शत-प्रतिशत दाह क्षतियां पहुंची थीं, इसलिए पुलिस उप निरीक्षक सुनील एकनाड़ी वंजारी (अभि. सा. 4) को मृतका का कथन अभिलिखित करने के लिए अत्यावश्यकता थी और ऐसी परिस्थितियों में चिकित्सीय साक्ष्य अभिप्राप्त करने में असफल रहना या मजिस्ट्रेट की प्रतीक्षा करना उक्त मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता के लिए रुकावट नहीं है ।

9. उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि मामले के निम्नलिखित महत्वपूर्ण पहलू हैं :–

> "(क) घटना के समय घटनास्थल पर अपीलार्थी, प्रभाबाई (मृतका की माता) तथा विमल बाई (मृतका की मकान मालकिन) की मौजूदगी ।
>
> (ख) इसी प्रकार, यह भी विवादग्रस्त नहीं है कि सविता, प्रभाबाई और विमल बाई को दाह क्षतियां पहुंची थीं और उन्हें अस्पताल में भर्ती कराया गया था ।
>
> (ग) अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कतई कोई साक्ष्य नहीं है कि सविता या तो अपनी जीवन से ऊब गई थी या हताश थी और इसलिए अपने जीवन का अंत करना चाहती थी ।
>
> (घ) इसी प्रकार, अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ नहीं है कि सविता के पास अपने जीवन का अंत करने के लिए कोई कारण था ।"

10. हमने पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुना ।

11. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल ने मुख्य रूप से यह दलील दी कि विचारण न्यायालय द्वारा मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 45, को ठीक ही त्यक्त किया गया था और उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी की दोषसिद्धि के लिए एकमात्र आधार के रूप में इसका गलत रूप से अवलंब लिया गया है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि प्रभाबाई द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 41 और 43, साक्ष्य में ग्राह्य नहीं हैं, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया है । इस प्रकार, विद्वान् काउंसेल ने अंतिमतः यह दलील दी कि अपीलार्थी की दोषसिद्धि के समर्थन में कोई वैध साक्ष्य नहीं है ।

12. दूसरी ओर, राज्य की ओर से काउंसेल ने निचले न्यायालयों के निर्णय का समर्थन किया । उनके अनुसार, मृतका सविता द्वारा किया गया मृत्युकालिक कथन तथा प्रभाबाई द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथन साक्ष्य में ग्राह्य हैं और विश्वसनीय हैं । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी द्वारा घटना की बात स्वीकार की गई और उसकी एकमात्र प्रतिरक्षा यह थी कि मृतका सविता ने अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क कर आत्महत्या की थी और यह बात दोनों निचले न्यायालयों द्वारा मिथ्या

पाई गई है । इस प्रकार, घटनास्थल पर मृतका के मौजूद होने और मृत्यु आत्महत्या न होने के पारिस्थितिक साक्ष्य से अपीलार्थी के निर्दोष होने की बात का खंडन होता है । पारिस्थितिक साक्ष्य से ही अपीलार्थी की दोषिता साबित होती है ।

13. हमने विरोधी दलीलों पर गंभीरता से विचार किया और अभिलेख पर के साक्ष्य का परिशीलन किया ।

14. इस अपील का विनिश्चय निम्नलिखित दो प्रश्नों पर निर्भर करेगा :–

(i) अभि. सा. 4, पुलिस उप निरीक्षक सुनील एकनाड़ी वंजारी द्वारा अभिलिखित मृतका सविता द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 45, की विश्वसनीयता ;

(ii) विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट राजीव बाबाराव राउत द्वारा अभिलिखित प्रभाबाई द्वारा किए गए मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श 41) और पुलिस उप निरीक्षक भीला नारायण बचाओ द्वारा अभिलिखित मृत्युकालिक कथन (प्रदर्श 43) की ग्राह्यता और विश्वसनीयता ।

15. जहां तक मृत्युकालिक कथन, प्रदर्श 45, का संबंध है, हम अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की दलील में गुणागुण पाते हैं । हमारा यह मत है कि विचारण न्यायालय ने उक्त साक्ष्य को त्यक्त करके न्यायोचित किया है । निस्संदेह, जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा **लक्ष्मण** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेकर अभिनिर्धारित किया गया है कि यहां तक कि कथनकर्ता की मस्तिष्क की आरोग्यता के बारे में डाक्टर द्वारा प्रमाणन के अभाव में और चाहे मृत्युकालिक कथन पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया हो, उसका अवलंब लिया जा सकता है । तथापि, न्यायालय का यह समाधान होना आवश्यक है कि मृतका मृत्युकालिक कथन करने के लिए ठीक मानसिक हालत में थी और कथन निष्ठापूर्वक अभिलिखित किया गया था और अन्यथा विश्वसनीय है । वर्तमान मामले में, ऐसा समाधान अभिलिखित करना कठिन है । न्यायालय का यह समाधान करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि मृतका कथन करने के लिए ठीक हालत में थी । मृतका अपना अभिकथित कथन करने के समय अस्पताल में थी किंतु पुलिस उप निरीक्षक द्वारा उसके स्वास्थ्य की दशा का अभिनिश्चय करने या यह

---

[1] (2002) 6 एस. सी. सी. 710.

प्रमाणित करने का कोई प्रयास नहीं किया कि उसने कथनकर्ता के समर्थ होने के बारे में अपना समाधान कर लिया है । मृत्युकालिक कथन पर मृतका के हस्ताक्षर या अगूंठे का चिह्न नहीं है । मृतका को शत-प्रतिशत दाह क्षतियां पहुंची थीं और हमारी राय में, उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया यह दृष्टिकोण कि तथ्यों की विलक्षणता में मृत्युकालिक कथन की प्रमाणिकता स्वीकार की जा सकती है, तर्कसंगत नहीं है ।

16. अब मृत्युकालिक कथनों, प्रदर्श 41 और 43, की ग्राह्यता और विश्वसनीयता के दूसरे प्रश्न पर विचार करने के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के पाठ को निर्दिष्ट करना आवश्यक होगा :–

> "वे दशाएं जिनमें उस व्यक्ति द्वारा सुसंगत तथ्य का किया गया कथन सुसंगत है, जो मर गया है या मिल नहीं सकता, इत्यादि – सुसंगत तथ्यों के लिखित या मौखिक कथन, जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए थे, जो मर गया है या मिल नहीं सकता है, या जो साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो गया है, या जिसकी हाजिरी इतने विलंब या व्यय के बिना उपाप्त नहीं की जा सकती, जितना मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को अयुक्तियुक्त प्रतीत होता है, निम्नलिखित दशाओं में स्वयमेव सुसंगत है –
>
> (1) जब वह मृत्यु के कारण से संबंधित है – जबकि वह कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में, या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, जब उन मामलों में, जिनमें उक्त व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो ।
>
> ऐसे कथन सुसंगत हैं, चाहे उस व्यक्ति को, जिसने उन्हें किया है, उस समय जब वे किए गए थे, मृत्यु की प्रत्याशंका थी या नहीं और चाहे उस कार्यवाही की, जिसमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत होता है, प्रकृति कैसी ही क्यों न हो ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

17. इस धारा के परिशीलन मात्र से यह दर्शित होता है :–

(i) कथन उस व्यक्ति का होना चाहिए जो मर गया है/पाया नहीं जा सकता/साक्ष्य इत्यादि देने के लिए असमर्थ हो गया है ;

(ii) यह सुसंगत तथ्यों से संबंधित होना चाहिए ;

(iii) यह 'उसकी मृत्यु' से या और उस संव्यवहार की परिस्थितियों से संबंधित होना चाहिए जिसके फलस्वरूप 'उसकी मृत्यु' हुई, जब उन मामलों में, जिनमें उक्त व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो ।

18. वर्तमान मामले में, हमारा सरोकार बिंदु (iii) से है क्योंकि हमारा संबंध इस प्रश्न से है कि क्या प्रभाबाई का कथन सविता की मृत्यु के कारण का अवधारण करने के लिए सुसंगत है या नहीं । दूसरे शब्दों में, जब आरोप सविता की हत्या का है, तब क्या प्रभाबाई की मृत्यु के कारण को भी प्रश्नगत होना ठहराया जा सकता है, जो घटना का अभिन्न भाग है ।

19. पढ़ने मात्र से ही यह कथन मृत्यु के कारण या उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में ग्राह्य लगता है जिसके फलस्वरूप कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु हुई । प्रश्न यह है कि तब क्या घटित हुआ था जब एक ही संव्यवहार में दो मृत्यु हुईं और उस संव्यवहार की परिस्थितियां जिनके फलस्वरूप एक मृत्यु हुई, दूसरी मृत्यु के साथ पूरी तरह से परस्पर संबद्ध है । स्वीकार्य रूप से, प्रभाबाई का मृत्युकालिक कथन उसकी मृत्यु तथा उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में ग्राह्य है जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई । ऐसा कथन स्वतः कथन करने वाले व्यक्ति से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु के कारण का अवधारण करने के लिए ग्राह्य न हो । तथापि, जब उस संव्यवहार की परिस्थितियां, जिनके फलस्वरूप कथन करने वाले व्यक्ति तथा किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु हुई, एक ही संव्यवहार का भाग हैं, तब वे ऐसे अन्य व्यक्ति की मृत्यु के कारण के बारे में भी सुसंगत होंगी ।

20. साक्ष्य अधिनियम में "सुसंगत" और "विवाद्यक तथ्य" अभिव्यक्तियों को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया गया है :–

"**सुसंगत** – एक तथ्य दूसरे तथ्य से सुसंगत कहा जाता है जबकि तथ्यों की सुसंगति से संबंधित इस अधिनियम के उपबंधों में निर्दिष्ट प्रकारों में से किसी भी प्रकार से वह तथ्य उस दूसरे तथ्य से संसक्त हो ।

विवाद्यक तथ्य – 'विवाद्यक तथ्य' से अभिप्रेत है और उसके अंतर्गत आता है – ऐसा कोई भी तथ्य जिसे अकेले ही से, या अन्य तथ्यों के ससंग में, किसी ऐसे अधिकार, दायित्व या निर्योग्यता के, जिसका किसी वाद या कार्यवाही में प्राख्यान या प्रत्याख्यान किया

गया है, अस्तित्व, अनस्तित्व, प्रकृति या विस्तार की उत्पत्ति अवश्यमेव होती है ।

धारा 6 निम्नलिखित प्रकार से है –

6. **एक ही संव्यवहार के भाग होने वाले तथ्यों की सुसंगति –** जो तथ्य विवाद्यक न होते हुए भी किसी विवाद्यक तथ्य से इस प्रकार संसक्त हैं कि वे एक ही संव्यवहार के भाग हैं, वे तथ्य सुसंगत हैं, चाहे वे उसी समय और स्थान पर या विभिन्न समयों और स्थानों पर घटित हुए हों ।

दृष्टांत

*****"

21. इस प्रकार, जब उस संव्यवहार की परिस्थितियों से संबंधित मृत्युकालिक कथन, जिनके फलस्वरूप कथन करने वाले की मृत्यु हुई, उन परिस्थितियों का अभिन्न भाग हैं जिनके फलस्वरूप किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु हुई, तो ऐसे मृत्युकालिक कथन की उस अन्य व्यक्ति की मृत्यु से भी सुसंगति है ।

22. अब हम उक्त विधिक विवाद्यक से संबंधित विनिश्चयों को निर्दिष्ट कर सकते हैं । **काशीनाथ तुकाराम जाधव** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में बम्बई उच्च न्यायालय की एक खंड न्यायापीठ ने **लुक्का उलाहन्नेन** बनाम **त्रावणकोर-कोचिन राज्य**[2] वाले मामले में त्रावणकोर-कोचिन उच्च न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए इसी प्रकार का मत व्यक्त करते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

"यह दृष्टिकोण, कि एक मृत व्यक्ति का कथन किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु के बारे में प्रश्न की बाबत या किसी तृतीय व्यक्ति को उपहति कारित करने की बाबत एक सुसंगत तथ्य नहीं है, एक बहुत ही संकीर्ण दृष्टिकोण है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है । एक मृत व्यक्ति द्वारा उन घटनाओं के बारे में, जो उस संव्यवहार के अनुक्रम में घटित हुई जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, किए गए कथनों को उसकी मृत्यु के कारण से संबंधित भिन्न कथनों के साक्ष्य से अपवर्जित करना धारा में प्रयुक्त शब्दों का वह परिसीमित

---

[1] 1984 क्रिमिलन ला जर्नल 1447.

[2] ए. आई. आर. 1955 त्रावण.- को. 104.

अर्थ लगाना होगा जो उनका स्वाभाविक अर्थ आज्ञा नहीं देता । जब इस प्रकार की कोई परिसीमा आशयित हो, तब विधान-मंडल द्वारा विशेष तौर पर इसे उपबंधित किया जाता है ।"

उच्च न्यायालय ने ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए **पी. सुब्बु थेवन** [2 वियर 750 (बी)] वाले मामले में पूर्ववर्ती मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णय और **नगा हिज दीन** बनाम **एम्परर**[1] वाले मामले में रंगून उच्च न्यायालय के निर्णय का भी अवलंब लिया किंतु **कुंवरपाल सिंह** बनाम **एम्परर**[2] वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से विसम्मति व्यक्त की । बम्बई उच्च न्यायालय ने उक्त मामले में एक ही संव्यवहार में हुई दो व्यक्तियों की मृत्यु पर विचार किया था । मृत्युकालिक कथन करने वाले व्यक्ति को उस समय छुरा घोंप दिया गया जब वह अन्य व्यक्ति जिसे छुरा घोंपा गया था को बचा रहा था । ऐसे मृत्युकालिक कथन को दोनों मृत्युओं के लिए ग्राह्य होना ठहराया गया । उक्त निर्णय में मृत्युकालिक कथन और की गई चर्चा निम्नलिखित प्रकार से है :–

"27. तात्या के मृत्युकालिक कथन का सुसंगत भाग इस प्रकार है –

30 जुलाई, 1978 को रविवार के दिन अपराह्न में लगभग 1.00 बजे मैं और श्री खन्ना टैगोर नगर, ग्रुप सं. 7 में आटा चक्की के निकट खड़े थे । काश्या जाधव नामक व्यक्ति वहां आया और हमें पुकारा । उसने कहा कि क्या हम उस पर हमला करने के लिए उसे तलाश रहे हैं । इसके तुरंत पश्चात्, उसने एक खुला चाकू निकाला और खन्ना को उसकी छाती में दो बार घोंपा । जब मैंने खन्ना को बचाने की कोशिश की तो काश्या ने मुझे मेरी छाती पर चाकू घोंपा ।

28. कथन को पढ़ने से यह दर्शित होता है कि यदि खन्ना को चाकू घोंपने संबंधी वर्णन को इसमें से निकाल दिया जाए तो यह अबोध्य बात हो जाएगी और एक आधी-अधूरी तस्वीर पेश करेगी । काश्या ने तात्या को चाकू क्यों घोंपा ? इसलिए क्योंकि तात्या खन्ना को बचाने के लिए दौड़ा था जिसे काश्या चाकू घोंप रहा था । खन्ना से संबंधित वर्णन को अपवर्जित करने से कथन का यह प्रभाव पड़ सकता है कि काश्या घटनास्थल पर आया और सीधे तात्या पर टूट पड़ा और उसे चाकू घोंप दिया – यह वैसा नहीं है जो कथनकर्ता ने

---

[1] ए. आई. आर. 1936 रंगून 187.

[2] ए. आई. आर. 1948 इलाहाबाद 170.

कथन किया है । काश्या के सड़क के चौराहे पर पहुंचने के क्षण से लेकर, जहां नाना और खन्ना खड़े हुए थे, नाना को चाकू घोंपने तक की घटनाओं की एक अटूट शृंखला बनती है जो एक संव्यवहार का गठन करती है । इसलिए नाना का उसी रीति के बारे में प्रकथन जिसमें काश्या ने खन्ना को चाकू घोंपा, साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 की उपधारा (1) में अंतर्विष्ट 'संव्यवहार की किसी परिस्थिति' अभिव्यक्ति के अर्थांतर्गत आएगा । अंधाधुंध अपनी बस चला रहा बस ड्राइवर प्रतीक्षा कर रहे यात्रियों की भीड़ पर बस चढ़ा देता है ; बंधन से छुटकर बिफरा हुआ सांड दर्शकों को कुचलता हुआ दौड़ता है, अपनी जाति को उच्च मानने वाला व्यक्ति अपनी घृणा के निशाने पर के व्यक्तियों पर गोलियां बरसाता है – क्या उस आक्रमण में जीवित बचा अंतिम व्यक्ति यह वर्णन करने के लिए योग्य नहीं होगा कि उस पर कहर टूटने से पूर्व अन्य कैसे अपनी मृत्यु को प्राप्त हुए ?"

23. **रतन गौंड** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में दो युवा लड़कियां बैसाखी और अगहनी, आयु क्रमशः 9 वर्ष और 5 वर्ष, की हत्या की गई थी । वे अपने गांव से थोड़ी सी दूरी पर जंगल में गई थीं । उनकी माता जत्री भी जंगल में गई थी । जब जत्री वापस आई तो उसने अगहनी को घर में अकेले पाया । अगहनी ने अपनी माता को बैसाखी के बारे में एक कथन किया और उसके बाद उसकी मृत्यु हो गई, प्रश्न यह था कि क्या उसका कथन बैसाखी की मृत्यु के कारण के बारे में ग्राह्य है । यह उल्लेखनीय है कि बैसाखी अपने घर वापस नहीं आई थी और अगले दिन उसका शव पाया गया था । न्यायालय के समक्ष प्रश्न यह था कि क्या अगहनी का कथन बैसाखी की मृत्यु के कारण के बारे में ग्राह्य है, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

"हमारे समक्ष मामले में अगहनी द्वारा किए गए कथन उसके मृत्यु के कारण के संबंध में या उसकी मृत्यु से संबंधित किन्हीं परिस्थितियों के संबंध में नहीं हैं, इसके विपरीत वे कथन उसकी बहिन की मृत्यु के संबंध में हैं । इसलिए हमारी यह राय है कि ये कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) की अंतर्गत नहीं आते हैं और, वास्तव में, राज्य की ओर से उपसंजात होने वाले श्री धेबर ने यह माना है कि धारा 32(1) अगहनी के कथनों को लागू नहीं होती है ।"

---

[1] ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 18 = [1959] एस. सी. आर. 1336.

उपरोक्त निर्णय से यह स्पष्ट है कि यह ऐसा मामला नहीं था जहां वह संव्यवहार, जिसमें कथन करने वाले व्यक्ति और अन्य मृतक की मृत्यु हुई, एक ही था, जैसा कि वर्तमान मामले में है ।

24. **शरद बिरधीचंद शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस विषय पर पुनः विचार किया गया था । यह मत व्यक्त किया गया :–

> "10. .....साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के निर्वचन के प्रश्न पर विचार करते हुए न्या. एस. के. दास ने रतन गौंड **बनाम** बिहार राज्य {[1959] एस. सी. आर. 1336 = ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 18 = 1959 क्रिमिनल ला जर्नल 108} वाले मामले में इस न्यायालय का मत निम्नलिखित रूप में इस प्रकार व्यक्त किया था –
>
> > धारा 32 का एकमात्र सुसंगत खंड, जिसकी बाबत यह कहा जा सकता है कि उसका इससे कोई संबंध है, खंड (1) है, जिसका संबंध ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए कथनों से है जो अपनी मृत्यु के बारे में किए गए हों या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किए गए हों, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी । हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले में अगहनी ने जो कथन किए थे, उनका संबंध अपनी मृत्यु के कारण से या उसकी मृत्यु से संबंधित किसी परिस्थिति से नहीं है ; उसके विपरीत उन कथनों का संबंध उसकी बहिन की मृत्यु से है ।
>
> वुडरोफ और अमीर अली लिखित लॉ ऑफ एवीडेंस (खंड II) में लेखकों ने एक ही स्थान पर सभी मामले संगृहीत किए हैं और अपने निष्कर्षों को इस प्रकार उद्धृत किया है –
>
> > संक्षेप में, धारा 32(1) के अधीन किसी कथन की सुसंगति की कसौटी यह नहीं है कि उस मामले में अंतिम निष्कर्ष क्या है, बल्कि यह है कि क्या कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु का कारण उस मामले में प्रश्नगत है या नहीं । 'उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई' अभिव्यक्ति की परिधि 'अपनी मृत्यु के कारण' अभिव्यक्ति की बनिस्वत अधिक विस्तृत है ; अन्य शब्दों में धारा 32 का खंड (1) दो प्रकार के कथनों के प्रति

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 995 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

निर्देश करता है : (1) किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के संबंध में किया गया कथन और (2) किसी व्यक्ति द्वारा उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के संबंध में किया गया कथन, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई ।

'जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई' शब्दों से 'उसकी मृत्यु कारित की गई' अभिप्रेत नहीं है । इस प्रकार यह सुस्थिर है कि मृत्युकालिक कथन केवल वहां तक ग्राह्य होते हैं, जहां तक कि वे ऐसे तथ्य के प्रति प्रत्यक्ष रूप से संकेत करते हैं, जो मानव वध से संबंधित तथ्य और कार्य का गठन करते हैं, अर्थात् यह कि वे मार डालने के कार्य के प्रति और ऐसी परिस्थितियों के प्रतिनिर्देश करते हैं जो उनसे संबंधित हों, जैसे कि ऐसी धमकियां, कठिनाइयां, कार्य (मृत्युकालिक) कथन और घटनाएं, जोकि विवाद्य तथ्य या संव्यवहार गठित करती हैं या उसके साथ-साथ होती हैं और उसे स्पष्ट करती हैं । वे किसी पक्षकार के पक्ष में या विरुद्ध इस प्रकार ग्राह्य होती हैं, मानो कि वे संबंधित तथ्य और कार्य के भाग हों....।

11. इस प्रश्न के संबंध में जो अग्रनिर्णय है और जिसका अनुमोदन इस न्यायालय ने किया है, वह पकाला नारायण स्वामी **बनाम** सम्राट (ए. आई. आर. 1939 पीसी 47 = 66 आईए 66 = 180 आईसी 1) वाला मामला है, जिसमें लार्ड एटकिन ने निम्नलिखित कसौटियां अधिकथित की हैं –

यह सुझाव दिया गया है कि संव्यवहार हो जाने के बाद ही कथन किया जाना चाहिए, यह कि कथन करने वाला व्यक्ति किसी भी स्थिति में मरणासन्न होना चाहिए, यह कि 'परिस्थितियों' के अंतर्गत ऐसे कार्य आ सकते हैं, जोकि तब और वहां किए गए हों जब और जहां मृत्यु कारित हुई हो । माननीय न्यायाधीशों की यह राय है कि प्रयुक्त शब्दों के स्वाभाविक अर्थ से ऐसी कोई भी सीमा अभिप्रेत नहीं होती । ऐसा कथन मृत्यु का कारण उत्पन्न होने से पूर्व या इसके पूर्व कि मृतक के पास उसे मार डाले जाने का पूर्वानुमान लगाने का कोई कारण हो, किया जा सकता है । परिस्थितियां संव्यवहार की परिस्थितियां होनी चाहिएं ; साधारण अभिव्यक्तियां, जिनसे भय या संदेह उपदर्शित होता हो, चाहे किसी विशिष्ट व्यक्ति के

> संबंध में हो या अन्यथा, और मृत्यु के अवसर से प्रत्यक्षतः संबंधित न हो, ग्राह्य नहीं होंगी ..... । 'संव्यवहार की परिस्थितियां' निस्संदेह ऐसा वाक्यांश है जिससे कतिपय परिसीमाएं अभिप्रेत हैं । यह उतना विस्तृत नहीं है, जितना कि 'पारिस्थितिक साक्ष्य' में सदृश उपयोग है, जिसके अंतर्गत सभी सुसंगत तथ्यों का साक्ष्य आ जाता है । दूसरी ओर, वह 'संबंधित तथ्य और कार्य' की बनिस्वत अधिक संकुचित है । परिस्थितियों का संबंध वास्तविक घटना से कुछ निकट का अवश्य होना चाहिए.....।

यह अवश्य ही कहना होगा कि परिस्थितियां ऐसे संव्यवहार की हैं, जिनके फलस्वरूप मृत्युकालिक कथन करने वाले की मृत्यु हुई थी ।

शिव कुमार और अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (1996 की दांडिक अपील सं. 55, जिसका विनिश्चय तारीख 29 जुलाई, 1966 को किया गया) वाले मामले में किए गए इस न्यायालय के विनिश्चय में इन सिद्धांतों का अनुसरण किया गया था और उन्हें पूरी तरह से अनुमोदित किया गया था, जिसमें निम्नलिखित मत व्यक्त किए गए थे –

> यह स्पष्ट है कि यदि मृतका का कथन इस धारा के अधीन ग्राह्य किया जाना है, तो उसे उस संव्यवहार की परिस्थितियों से संबंधित ऐसा कथन होना चाहिए, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है । कथन मृत्यु का कारण उत्पन्न होने से पूर्व किया जा सकता है या इसके पूर्व ही किया जा सकता है जबकि मृतक के पास यह पूर्वानुमान लगाने का कोई कारण रहा हो कि उसे मार डाला जाएगा.....इस धारा के अधीन ग्राह्यता की आवश्यक शर्त यह है कि परिस्थितियों का संबंध वास्तविक घटना से कुछ निकट का होना चाहिए । 'संव्यवहार की परिस्थितियां' वाक्यांश ऐसा वाक्यांश है जिससे निस्संदेह कुछ परिसीमाएं अभिप्रेत हैं । वह उतना विस्तृत नहीं है जितना कि 'पारिस्थितिक साक्ष्य' अभिव्यक्ति में उसके सदृश उपयोग, जिसके अंतर्गत सभी सुसंगत तथ्यों के साक्ष्य आते हैं । दूसरी ओर, वह संबंधित तथ्य और कार्य की अपेक्षा अधिक संकुचित है (पाकला नारायण स्वामी **बनाम** सम्राट वाला मामला देखिए) ।"

25. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मृत्युकालिक कथन न केवल कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु के कारण के संबंध में और उस संव्यवहार की परिस्थितियों के संबंध में ग्राह्य है जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, अपितु यदि उक्त संव्यहार की परिस्थितियों का अन्य व्यक्ति की मृत्यु से भी संबंध है, तो ऐसा कथन तब अग्राह्य नहीं ठहराया जा सकता है जब 'उसकी' मृत्यु की परिस्थितियां उस अन्य व्यक्ति की मृत्यु की परिस्थितियों से अभिन्न रूप से संबद्ध हों ।

26. वर्तमान मामले में, सविता पर मिट्टी का तेल छिड़कने, इस प्रक्रिया में प्रभाबाई द्वारा बीच-बचाव करने और उसे दाह क्षतियां पहुंचने जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई का कथन एक ही संव्यवहार का अभिन्न भाग है । इस प्रकार, वह कथन, जो उस संव्यवहार की परिस्थितियों के संबंध में है जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, ग्राह्य होने के कारण यह दर्शित करने के लिए इसका अवलंब लिया जा सकता है कि सविता की मृत्यु कैसे हुई । उक्त कथन की संपुष्टि स्वयं अभियुक्त की इस सीमा तक स्वीकारोक्ति से होती है कि सविता की मृत्यु जलने से हुई थी और मृतका प्रभाबाई को दाह क्षतियां उसी घटना में पहुंची थीं । यद्यपि अभियुक्त का यह बयान कि यह आत्महत्या थी, इसे ठीक ही मिथ्या पाया गया है ।

27. इन परिस्थितियों में, सविता की मृत्यु अभियुक्त द्वारा मिट्टी का तेल छिड़क कर और उसे आग लगाकर जलाने से हुई मानव वध मृत्यु होना युक्तियुक्त संदेह के परे साबित होती है । यह बात प्रभाबाई के कथन और विद्यमान परिस्थितियों से सिद्ध होती है । उक्त कथन सम्यक् रूप से मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया गया था और इस पर प्रभाबाई के होश में होने और कथन करने के लिए समर्थ होने के बारे में डाक्टर द्वारा किया गया पृष्ठांकन है । उक्त मृत्युकालिक कथन में दिए गए वृत्तांत की प्रमाणिकता को स्वीकार न करने का कोई कारण नहीं है ।

28. तद्नुसार, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि प्रभाबाई द्वारा उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में किया गया मृत्युकालिक कथन ग्राह्य है जिसमें अभियुक्त द्वारा मिट्टी का तेल छिड़कने और आग लगाने की वह परिस्थिति भी सम्मिलित है जिसके फलस्वरूप मृतका की मृत्यु हुई ।

29. उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अपीलार्थी के विरुद्ध अभियोजन का पक्षकथन युक्तियुक्त संदेह के परे साबित होता है । उसकी दोषसिद्धि और दंडादेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

तद्नुसार यह अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2015] 2 उम. नि. प. 109

धीरेन्द्र कुमार उर्फ **धीरू**

बनाम

उत्तराखंड राज्य

26 फरवरी, 2015

न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा और न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 – हत्या – पुरानी शत्रुता – मृतक के नाजुक अंगों पर घातक क्षतियां – पत्थर का हथियार के रूप में बलपूर्वक प्रयोग – अचानक प्रकोपन के आधार पर अपीलार्थी द्वारा हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अपराध का अभिवाक् किया जाना – शवपरीक्षण रिपोर्ट के अनुसार अपीलार्थी द्वारा मृतक पर पत्थर से बलपूर्वक वार किया गया जिससे उसका क्रूर और असाधारण रीति में कृत्य करना साबित होता है, साथ ही अपीलार्थी की मृतक के साथ चली आ रही पुरानी शत्रुता से उसका मृत्यु कारित करने का आशय भी स्पष्ट हो जाता है, ऐसी स्थिति में अपीलार्थी के दोषसिद्धि के आदेश में हस्तक्षेप करना अनुचित होगा और अपीलार्थी हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के अपराध का नहीं अपितु हत्या का दोषी होगा ।

इस मामले में, अपीलार्थी की मृतक के साथ पहले से शत्रुता चली आ रही थी और उसने होली के अवसर पर कहा-सुनी के परिणामस्वरूप तीन दिन के पश्चात् मृतक की पत्थर से उसके सिर पर वार करके हत्या कर दी ।

अपीलार्थी को गिरफ्तार किया गया और सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किए जाने के पश्चात् उसे हत्या का दोषी पाया गया । विचारण न्यायालय के इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उत्तराखंड उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय को मान्य ठहराते हुए अपीलार्थी की अपील खारिज कर दी । अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की है । न्यायालय ने निचले दोनों न्यायालयों के निर्णय को उचित ठहराते हुए अपीलार्थी की अपील खारिज कर दी । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मृतक को पहुंची क्षतियों की प्रकृति से यह दर्शित नहीं होता है कि क्षति दुर्घटना के परिणामस्वरूप पहुंची है । शरीर पर कई घाव हैं और चेहरा विकृत पाया गया है । अस्थियां छिन्न-भिन्न पाई गई हैं । सभी घावों से मस्तिष्क का गूदा बाहर निकल रहा है । पिछली घटना से संबंधित हेतु के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अभियुक्त ने क्रूरतापूर्ण रीति में यह मृत्यु कारित की है । अचानक झगड़ा होने के अभिवाक् के संबंध में सबूत का भार अभियुक्त पर आता है कि वह यह साबित करे कि यह मामला दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 के अधीन आता है । निस्संदेह सकारात्मक रूप से विचार किए बिना भी इस अभिवाक् को अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री से सारभूत किया जा सकता है । वर्तमान मामले में, अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिससे अंधाधुंध लड़ाई का मामला साबित हो सके । अभियुक्त ने मिथ्या फंसाए जाने का अभिवाक् किया है । परिस्थितियों पर कुल मिलाकर विचार करने पर केवल यही संभव निष्कर्ष निकलता है कि अभियुक्त ने मृत्यु कारित करने के आशय से घातक क्षति पहुंचाई है । मृतक के सिर पर जो क्षतियां पाई गई हैं वे पूर्ण बल के साथ कारित की गई हैं । इस मामले में पुरानी शत्रुता चली आ रही थी । यह मामला अचानक लड़ाई या अचानक प्रकोपन या आवेश की तीव्रता का नहीं है । कोई मामला दंड संहिता की धारा 302 या 304 के अधीन आता है या नहीं, यह प्रश्न प्रत्येक मामले के अपने संघटकों के आधार पर विनिश्चित किया जाना चाहिए जैसे वे परिस्थितियां जिनमें घटना घटित हुई है, हथियारों की प्रकृति और इस बात को भी ध्यान में रखते हुए भी विनिश्चित किया जाना चाहिए कि जिन हथियारों का अपराध में प्रयोग किया गया है वे पहले से अपराधियों के पास थे या घटनास्थल से प्राप्त किए गए थे तथा इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिए कि हमला

शरीर के नाजुक अंगों पर किया गया है या नहीं ; हमला किए जाने में कितने बल का प्रयोग किया गया है ; मृतक ने अचानक हुई लड़ाई में भाग लिया है या नहीं ; दोनों पक्षों के बीच पहले से शत्रुता थी या नहीं ; अचानक प्रकोपन हुआ था या नहीं ; हमला आवेश की तीव्रता में किया गया था या नहीं ; क्षति कारित करने वाले व्यक्ति ने असम्यक् लाभ लिया है या नहीं या उसने क्रूर या असाधारण रीति में कृत्य किया है या नहीं । परिस्थितियों की यह सूची अभी पूर्ण नहीं है और अन्य भी अनेक परिस्थितियां हो सकती हैं जो प्रत्येक मामले में भिन्न-भिन्न होती हैं । वर्तमान मामले को इस कसौटी पर परखते हुए हम अपीलार्थी की ओर से की गई प्रतिरक्षा को स्वीकार करने में आनत हैं । यह पुरानी शत्रुता का मामला है और क्षतियों की प्रकृति से मृत्यु कारित करने या शरीर के नाजुक अंग पर पूर्ण बल के साथ ऐसी घातक क्षति पहुंचाने का आशय स्पष्ट होता है जो मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो । इन परिस्थितियों में, न्यायालय को इस मामले में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । (पैरा 12, 13 और 15)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2013] (2013) 6 एस. सी. सी. 770 :
अंकुश शिवाजी गायकवाड़ बनाम **महाराष्ट्र राज्य** । 7

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2008 की दांडिक अपील सं. 1848.

2007 की दांडिक अपील सं. 158 में उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल के तारीख 17 नवम्बर, 2007 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री (सुश्री) हेमा साहू, राजेन्द्र साहू और सी. एल. साहू

प्रत्यर्थी की ओर से श्री जतिन्दर कुमार भाटिया

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल ने दिया ।

न्या. गोयल – यह अपील 2007 की दांडिक अपील सं. 158 में उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल द्वारा पारित किए गए तारीख 17 नवम्बर, 2007 के उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में जिसे "दंड संहिता"

कहा गया है) की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि और आजीवन कारावास का दंडादेश कायम रखा गया था ।

2. अभियोजन का यह पक्षकथन है कि अपीलार्थी ने तारीख 1 अप्रैल, 1983 को 8.30 बजे अपराह्न में ग्राम जन्तावाला में मृतक सूरत सिंह की मृत्यु कारित की । तारीख 2 अप्रैल, 1983 को 9.05 बजे पूर्वाह्न में मृतक के पिता मणि राम (जिसकी मृत्यु इस मामले के विचारण के लंबित रहने के दौरान हो गई थी) ने इस बाबत प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई कि तारीख 18 मार्च, 1983 को मृतक अभियुक्त के घर होली मनाने गया था । रात्रि में अभियुक्त शिकायतकर्ता के घर पर मृतक पर हमला करने इस अभिकथन के साथ आया कि मृतक ने अभियुक्त की चाची कुमारी सुनीता का दरवाजा रात्रि में गलत आशय से उस समय खटखटाया जब वह घर पर अकेली थी । मणि राम और मृतक की पत्नी राजकुमारी (अभि. सा. 7) द्वारा हस्तक्षेप किए जाने पर, अभियुक्त को मृतक को मकान के बाहर घसीट कर लाने से रोका गया किन्तु अभियुक्त धमकी देते हुए, घर से चला गया । तारीख 1 अप्रैल, 1983 को जब मृतक निकट स्थित देहरादून नगर गया था तब वह रात्रि में घर वापस नहीं आया । प्रातःकाल लाल सिंह (अभि. सा. 2) ने उसे बताया कि मृतक को अभियुक्त के साथ रात्रि में 7.30 बजे अपराह्न में देखा गया था । इसके अतिरिक्त, लखी राम (अभि. सा. 4) और बहादुर सिंह (अभि. सा. 3) ने उसे बताया कि अभियुक्त को 8.30 बजे अपराह्न में मृतक को पत्थर से पीटते हुए देखा गया था । जगदीश सिंह नाम के एक व्यक्ति ने उसे बताया कि उसने रतन सिंह के खेत के निकट नदी के किनारे पर एक शव देखा है ।

3. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के पश्चात्, थाना प्रभारी राजपाल सिंह (अभि. सा. 11) ने मामले का अन्वेषण किया । डा. आई. एफ. नाथ (अभि. सा. 6) द्वारा शव का शवपरीक्षण किया । अन्वेषण पूरा करने के पश्चात्, अभियुक्त को विचारण के लिए भेज दिया गया ।

4. अभियोजन पक्ष ने कुल मिलाकर 12 साक्षियों की परीक्षा की है । अभियुक्त ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन दिए गए अपने कथन में यह अभिवाक् किया है कि उसे इस मामले में इसलिए मिथ्या फंसाया गया है कि वह 'युवक ग्राम कल्याण समिति' का सदस्य है और उसने अवैध शराब बेचे जाने के विरुद्ध जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत दर्ज कराई थी जिसके कारण पुलिस उससे शत्रुता मानने लगी । उसने एक शिकायत सरकारी सीमेंट विक्रय किए जाने के संबंध में ठेकेदारों

के अवैध क्रियाकलाप के विरुद्ध भी दर्ज कराई थी जिससे ये ठेकेदार भी उससे शत्रुता मानने लगे । उसने अपने पक्षकथन के समर्थन में अपने भाई विजेन्द्र कुमार शर्मा (प्रतिरक्षा साक्षी 1) की परीक्षा कराई ।

5. विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य का परिशीलन करने के पश्चात् अपीलार्थी को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जिसकी पुष्टि उच्च न्यायालय द्वारा की गई ।

6. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना है ।

7. अपीलार्थी की ओर से मुख्य दलील यह दी गई है कि बहादुर सिंह (अभि. सा. 3) और लखी राम (अभि. सा. 4) प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं जिनका साक्ष्य विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि यदि उन्होंने घटना स्वयं देखी होती तो वे रात्रि में शांत नहीं रह सकते थे । यह भी दलील दी गई है कि अभिकथित हेतुक असंगत है और उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता । अंत में यह दलील दी गई है कि यह मामला दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 के अंतर्गत आता है क्योंकि यह अचानक हुए झगड़े का मामला है जिसमें दोनों पक्षकारों ने एक दूसरे पर पत्थर फेंके थे और इस प्रकार यह मामला दंड संहिता की धारा 304, भाग II के अधीन आता है । **अंकुश शिवाजी गायकवाड़** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में दिए गए इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया गया है ।

8. हमने परस्पर विरोधी दलीलों पर सम्यक् रूप से विचार किया है और अभिलेख का परिशीलन किया है ।

9. जहां तक अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य की विश्वसनीयता का संबंध है, हमारा यह मत है कि भारत का संविधान, 1950 के अनुच्छेद 136 के अधीन की गई अपील में स्पष्ट अवैधता या अनुचितता के अभाव में साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन मात्र इस कारण किया जाना अपेक्षित नहीं है कि भिन्न मत भी व्यक्त किया जा सकता है । वर्तमान मामले में, निचले दोनों न्यायालयों ने बहादुर सिंह (अभि. सा. 3) और लखी राम (अभि. सा. 4) के साक्ष्य को विश्वसनीय पाया है । मृतक की विधवा राज कुमारी (अभि. सा. 7) के साक्ष्य पर इस बाबत विश्वास किया गया है कि इस घटना के पूर्व एक घटना घटित हुई थी जिससे अभियुक्त का हेतु स्पष्ट हो जाता है । लाल सिंह (अभि. सा. 2) ने भी प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य की यह उल्लेख

---

[1] (2013) 6 एस. सी. सी. 770.

करते हुए संपुष्टि की है कि उसने अभियुक्त और मृतक को घटना के कुछ पूर्व एक साथ देखा था । अभियुक्त का प्रतिरक्षा में दिया गया वृत्तांत विश्वसनीय नहीं पाया गया है । निचले न्यायालयों द्वारा व्यक्त किया गया मत निश्चित रूप से एक ऐसा संभव मत है जिसके आधार पर अभियोजन पक्ष के वृत्तांत के समर्थन में उसके द्वारा दिए गए साक्ष्य को स्वीकार किया जा सकता है । इस प्रकार हमें अभियोजन वृत्तांत को खारिज करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । यह साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य है कि अभियुक्त-अपीलार्थी मृतक की मृत्यु कारित करने के लिए जिम्मेदार है ।

10. मात्र एक प्रश्न विचार के लिए शेष रह जाता है कि अपराध की प्रकृति कैसी है । अपीलार्थी की विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभियुक्त को भी क्षतियां पहुंची हैं जिससे यह दर्शित होता है कि यह दोनों ओर से अंधाधुंध हुई लड़ाई का मामला है । डा. डी. एम. काला (अभि. सा. 1) द्वारा अभियुक्त के शरीर पर निम्न क्षतियां पाई गईं :–

> "1. दायीं भौंह के ठीक ऊपर की ओर 3 सें. मी. × 2.5 सें. मी. माप का खरोंचदार गुमटा ।
>
> 2. चेहरे के दायीं ओर 8 सें. मी. × 2.5 सें. मी. माप का खरोंचदार गुमटा जो दाएं नेत्र के पार्श्व में ठीक नीचे की ओर है ।
>
> 3. मुख के समकोण पर 2 सें. मी. की दूरी पर दायीं ओर 4 सें. मी. × 1 सें. मी. माप का खरोंचदार गुमटा ।
>
> चिकित्सा अधिकारी की राय में, ये क्षतियां एक दिन पूर्व किसी कुंद वस्तु द्वारा रगड़ खाने से कारित हुई हैं और क्षति सं. 1 और 2 को संप्रेक्षणाधीन रखा गया है तथा क्षति सं. 3 साधारण क्षति है ।"

11. दूसरी ओर मृतक के शरीर पर पाई गई क्षतियां निम्न प्रकार हैं :–

> "1. चेहरा और सिर दोनों ओर से चपटे हो गए हैं । सभी जगह अनेक अनियमित विदीर्ण घाव हैं । चेहरा विकृत हो गया है और दायां नेत्र स्पष्ट नहीं हो रहा है । करोटि की सभी अस्थियां, करोटि का आधार और अद्योहनु चूर-चूर हो गए हैं और सभी घावों से मस्तिष्क का गूदा बाहर निकल रहा है । चिकित्सक की राय में, मृतक की मृत्यु मृत्युपूर्व होने वाले आघात और रक्तस्राव के कारण कारित हुई है । चिकित्सक ने यह भी राय दी है कि यह क्षति तारीख 1 अप्रैल, 1983

को 8.00 बजे अपराह्न से 9.00 बजे अपराह्न के बीच किसी पत्थर से वार करके कारित की गई है ।"

12. मृतक को पहुंची क्षतियों की प्रकृति से यह दर्शित नहीं होता है कि क्षति दुर्घटना के परिणामस्वरूप पहुंची है । शरीर पर कई घाव हैं और चेहरा विकृत पाया गया है । अस्थियां छिन्न-भिन्न पाई गई हैं । सभी घावों से मस्तिष्क का गूदा बाहर निकल रहा है । पिछली घटना से संबंधित हेतु के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अभियुक्त ने क्रूरतापूर्ण रीति में यह मृत्यु कारित की है । अचानक झगड़ा होने के अभिवाक् के संबंध में सबूत का भार अभियुक्त पर आता है कि वह यह साबित करे कि यह मामला दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद 4 के अधीन आता है । निस्संदेह सकारात्मक रूप से विचार किए बिना भी इस अभिवाक् को अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री से सिद्ध किया जा सकता है ।

13. वर्तमान मामले में, अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिससे अंधाधुंध लड़ाई का मामला साबित हो सके । अभियुक्त ने मिथ्या फंसाए जाने का अभिवाक् किया है । परिस्थितियों पर कुल मिलाकर विचार करने पर केवल यही संभव निष्कर्ष निकलता है कि अभियुक्त ने मृत्यु कारित करने के आशय से घातक क्षति पहुंचाई है । मृतक के सिर पर जो क्षतियां पाई गई हैं वे पूर्ण बल के साथ कारित की गई हैं । इस मामले में पुरानी शत्रुता चली आ रही थी । यह मामला अचानक लड़ाई या अचानक प्रकोपन या आवेश की तीव्रता का नहीं है ।

14. **अंकुश** (उपरोक्त) वाले मामले में दिया गया निर्णय अपीलार्थी के मामलों को लागू नहीं होगा । उक्त मामले में, अभियुक्त मृतक के खेत के निकट टहल रहे थे और उस समय उन पर कुत्ता भौंका था । अभियुक्तों ने लोहे के पाइप से कुत्ते पर वार किया और मृतक द्वारा आक्षेप किए जाने पर कहा-सुनी हो गई जिसके परिणामस्वरूप दोनों पक्ष गुत्थमगुत्था हो गए और इसी दौरान अभियुक्तों में से एक ने मृतक पर लोहे के पाइप से वार किया जो उसके पास पहले से ही था । इस प्रकार, यह अचानक झगड़ा होने का ही मामला है जो कि मृतक के कुत्ते के भौंकने के कारण घटित हुआ था । दोनों पक्षों के बीच पहले से ही कोई शत्रुता नहीं थी । कुत्ते के भौंकने से यह घटना घटित हुई और मृतक द्वारा हस्तक्षेप किए जाने पर झगड़ा आरंभ हो गया जिसके परिणामस्वरूप मृतक के नाजुक अंग पर घातक क्षति पहुंची ।

15. कोई मामला दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आता है या 304 के अधीन, यह प्रश्न प्रत्येक मामले के अपने संघटकों के आधार पर विनिश्चित किया जाना चाहिए जैसे वे परिस्थितियां जिनमें घटना घटित हुई है, हथियारों की प्रकृति और इस बात को भी ध्यान में रखते हुए विनिश्चित किया जाना चाहिए कि जिन हथियारों का अपराध में प्रयोग किया गया है वे पहले से अपराधियों के पास थे या घटनास्थल से प्राप्त किए गए थे तथा इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिए कि हमला शरीर के नाजुक अंगों पर किया गया है या नहीं ; हमला किए जाने में कितने बल का प्रयोग किया गया है ; मृतक ने अचानक हुई लड़ाई में भाग लिया है या नहीं ; दोनों पक्षों के बीच पहले से शत्रुता थी या नहीं ; अचानक प्रकोपन हुआ था या नहीं ; हमला आवेश की तीव्रता में किया गया था या नहीं ; क्षति कारित करने वाले व्यक्ति ने असम्यक् लाभ लिया है या नहीं या उसने क्रूर या असाधारण रीति में कृत्य किया है या नहीं । परिस्थितियों की यह सूची पूर्ण नहीं है और अन्य भी अनेक परिस्थितियां हो सकती हैं जो प्रत्येक मामले में भिन्न-भिन्न होती हैं । वर्तमान मामले को इस कसौटी पर परखते हुए हम अपीलार्थी की ओर से ली गई प्रतिरक्षा को स्वीकार नहीं कर सकते हैं । यह पुरानी शत्रुता का मामला है और क्षतियों की प्रकृति से मृत्यु कारित करने या शरीर के नाजुक अंग पर पूर्ण बल के साथ ऐसी घातक क्षति पहुंचाने का आशय स्पष्ट होता है जो मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो । इन परिस्थितियों में, हमें इस मामले में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है ।

तदनुसार अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

अस./अनू.

बदरु राम

बनाम

राजस्थान राज्य

26 फरवरी, 2015

न्यायमूर्ति सुधांशु ज्योति मुखोपाध्याय और न्यायमूर्ति रोहिन्टन फाली नरीमन

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और धारा 149 – हत्या – सामान्य उद्देश्य – अचानक प्रकोपन – मामले के दो क्षतिग्रस्त प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य और समग्र परिस्थितियों से यह स्पष्ट है कि घटना अचानक प्रकोपन से नहीं हुई और घटना के पीछे किसी आशय या हेतुक का अभाव था बल्कि उक्त हत्या सामान्य उद्देश्य के अग्रसरण में सोच-समझकर कारित की गई, अतः अभियुक्त हत्या के अपराध से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किए जाने के दायी हैं ।

यह अपील चार व्यक्तियों द्वारा फाइल की गई है जिन्हें भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और अनेक न्यून अपराधों के साथ प्रत्येक अपराधी को आजीवन कारावास भोगने और 500/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के लिए दंडादिष्ट किया गया है तथा सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलाए जाने का आदेश किया गया है । तारीख 11 नवंबर, 1999 को घटित एक दुर्घटना में दो व्यक्तियों अर्थात् कमल कुमार और ओम प्रकाश की मृत्यु हो गई । 11 व्यक्तियों को आरोपित किया गया जिनमें से शिव लाल की विचारण के दौरान ही मृत्यु हो गई । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश (त्वरित न्यायालय) सं. 2, झुंझुनू ने कमल कुमार और ओम प्रकाश की हत्या के लिए अन्य 10 अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया और सभी को आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया । इस अपील में आक्षेपित निर्णय में 6 व्यक्तियों को दोषमुक्त किया गया क्योंकि उन्हें पंच बयान के महत्वपूर्ण साक्षी राधे श्याम (अभि. सा. 3) द्वारा नामित नहीं किया गया था । तथापि, उच्च न्यायालय ने चार व्यक्तियों अर्थात् बदरु राम, सीताराम, रामावतार और लक्ष्मण को दोषी पाया और उन्हें दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभि. सा. 3 की मुख्य परीक्षा तथा प्रतिपरीक्षा का परिशीलन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह साक्षी न्यायालय को यह नहीं बता सका कि मृतकों को कितनी क्षतियां किन-किन हथियारों से पहुंची थीं, इस बात से यह साक्ष्य निर्बल नहीं हो जाता कि अभियुक्तों द्वारा आहतों की पिटाई की गई थी । यह स्पष्ट है कि रात्रि में यह पता लगाना बहुत कठिन होता है कि किस व्यक्ति ने किस पर वार किया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने बहुत सावधानी के साथ दो आहत प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों और चिकित्सक जिसने यह स्पष्ट किया है कि व्यक्तियों की मृत्यु मानव वध प्रकृति की है, सहित सभी 14 साक्षियों के साक्ष्य का परिशीलन किया है । अभि. सा. 7 और अन्वेषण अधिकारी ने अपराध में प्रयोग किए गए हथियारों की बरामदगी के संबंध में अभिसाक्ष्य दिया है । अन्वेषण अधिकारी ने यह कथन किया है कि अभियुक्त रामावतार द्वारा स्वेच्छया दी गई जानकारी के आधार पर एक कुल्हाड़ी अभिगृहीत करके मुहरबंद की गई । इसी प्रकार, अन्य अभियुक्तों से लाठियां बरामद की गईं जिनमें अभियुक्त बदरु राम से उसके मकान के पीछे पानी में से लाठियां बरामद की गईं, शिव लाल से उसके मकान के पीछे लगे पौधों और झाड़ियों में से लाठी बरामद की गई और अभियुक्त लक्ष्मण के कथनानुसार बैंगन के खेत में से गंडासी बरामद की गई थी । इसी प्रकार अभियुक्त सीताराम के कहने पर लाठी बरामद की गई है । निचले न्यायालयों ने साक्ष्य का बहुत सूक्ष्मता के साथ परिशीलन किया है और दो प्रत्यक्षदर्शी आहत साक्षियों के साक्ष्य का पूर्ण रूप से अवलंब लिया है और अन्वेषण अधिकारी तथा डा. जे. पी. बुगलिया के साक्ष्य का भी परिशीलन किया है, अभि. सा. 8 ने यह कथन किया है कि मस्तिष्क को पहुंची क्षति और आंतरिक और बाह्य रक्तस्राव होने के कारण मृतक कौमा की स्थिति में आ गया था जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई । अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् न्यायमित्र ने यह दलील दी है कि चूंकि उच्च न्यायालय ने 6 अभियुक्तों को दोषमुक्त किया है इसलिए समतुल्यता के सिद्धांत के आधार पर न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत अपीलार्थियों को भी दोषमुक्त किया जाना चाहिए । उच्च न्यायालय के निर्णय से न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि अन्य 6 अभियुक्तों की दोषमुक्ति का कारण केवल यह है कि उन्हें परचा बयान में राधे श्याम द्वारा नामित नहीं किया गया था । राज्य ने उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए इस निष्कर्ष के आधार पर न्यायालय के समक्ष अपील नहीं की है । समतुल्यता के सिद्धांत को ऊपर उल्लिखित ऐसे दो प्रत्यक्षदर्शी आहत साक्षियों के सारभूत साक्ष्य से प्रतिस्थापित नहीं किया जा

सकता जिन पर निचले न्यायालयों द्वारा एकमत रूप से विश्वास किया गया है । अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् न्यायमित्र द्वारा यह भी दलील दी गई है कि यह ऐसा मामला है जिसे दंड संहिता की धारा 304 भाग-II के अधीन हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध में परिवर्तित किया जाना चाहिए क्योंकि विद्वान् न्यायमित्र के अनुसार मामले की सम्पूर्ण परिस्थितियों का परिशीलन करने पर यह घटना अचानक प्रकोपन के कारण घटित हुई प्रतीत होती है जिसमें कोई कारण या हेतु दिखाई नहीं देता है । यह दलील केवल खारिज किए जाने के लिए ही दी गई है । दो प्रत्यक्षदर्शी आहत साक्षियों के साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि यह अचानक प्रकोपन का मामला नहीं है और हेतु के न होने से आरोप में कमी नहीं आ सकती । (पैरा 7, 8, 9 और 10)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 806.

2006 की दांडिक अपील सं. 833 में राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर की खंड न्यायपीठ के तारीख 29 नवंबर, 2007 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री विद्याधर गौड़ (ए. सी.) और जी. एस. मणि (ए. सी.)

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री शोवन मिश्रा, मिलिंद कुमार, जार्ज थॉमस और (सुश्री) हर्षा विनाय

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आर. एफ. नरीमन ने दिया ।

न्या. नरीमन – यह अपील चार व्यक्तियों द्वारा फाइल की गई है जिन्हें भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में "दंड संहिता" कहा गया है) की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और अनेक न्यून अपराधों के साथ प्रत्येक अपराधी को आजीवन कारावास भोगने और 500/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के लिए दंडादिष्ट किया गया है तथा सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलाए जाने का आदेश किया गया है । तारीख 11 नवंबर, 1999 को घटित एक दुर्घटना में दो व्यक्तियों अर्थात् कमल कुमार और ओम प्रकाश की मृत्यु हो गई । 11 व्यक्तियों को आरोपित किया गया जिनमें से शिव लाल की विचारण के दौरान ही मृत्यु हो गई । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश (त्वरित न्यायालय) सं. 2, झुंझुनू ने कमल कुमार और ओम प्रकाश की हत्या के लिए अन्य 10 अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया और सभी को आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया । इस

अपील में आक्षेपित निर्णय में 6 व्यक्तियों को दोषमुक्त किया गया क्योंकि उन्हें पंच बयान के महत्वपूर्ण साक्षी राधे श्याम (अभि. सा. 3) द्वारा नामित नहीं किया गया था । तथापि, उच्च न्यायालय ने चार व्यक्तियों अर्थात् बदरु राम, सीताराम, रामावतार और लक्ष्मण को दोषी पाया और उन्हें दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास से दंडादिष्ट किया ।

2. हमने अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् न्यायमित्र श्री विद्याधर गौड़ और श्री जी. एस. मणि तथा राज्य की ओर से श्री शोवन मिश्रा को सुना है ।

3. तारीख 12 नवंबर, 1999 को शिकायतकर्ता राधे श्याम (अभि. सा. 3) ने एक शिकायत दर्ज कराई कि वह उन 4 भाइयों में से एक है जिनमें से दो भाइयों की एक दिन पहले अर्थात् तारीख 11 नवंबर, 1999 को 11.15 बजे अपराह्न में हुई घटना में मृत्यु हो गई थी । इस साक्षी ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया है :–

> "यह घटना 11 नवंबर, 1999 को लगभग 11.15 बजे अपराह्न में घटित हुई थी । हम चार भाई थे, मैं राधे श्याम सबसे बड़ा हूं, ओम प्रकाश मुझसे छोटा है, कमल कुमार ओम प्रकाश से छोटा है और मतू राम सबसे छोटा भाई है । भगवान राम मेरे बड़े चाचा हैं । भगवान राम के पास कृषि भूमि है और हमारी धानी के निकट विद्युत नलकूप भी है । हमने भगवान राम की भूमि अध-बटाई पर ले रखी है । घटना के दिन 11.15 बजे अपराह्न में, मैं कुंए के निकट बैठा हुआ था और बिजली की देखरेख कर रहा था । हमने खेत में गोभी की फसल बोई हुई थी और मेरे भाई कमल कुमार और ओम प्रकाश खेतों में सिंचाई कर रहे थे । प्याऊ के निकट मंडरैला रोड की ओर से चीख-पुकार की आवाज सुनाई दी । मैं बाहर आया और मैंने देखा कि मेरे भाई कमल और ओम प्रकाश चिल्ला रहे थे, 'भाई, हमारे को बचाओ । हमारे को बदरु राम, उसके लड़के शिव लाल, सीताराम, रामावतार, लक्ष्मण, शीश राम, महेश और उनकी औरतें नन्ची, ननदी, जमुना और ललिता हमें मार रहे हैं । आकर के हमें जल्दी बचाओ ।' इसके पश्चात् मैंने राकेश, छाजू राम, गोपी राम, बाबू लाल, राम सिंह को पुकारा कि 'मेरे भाइयों को पीटा जा रहा है । जल्दी आओ' और मैं घटनास्थल पर अपने भाइयों के पास पहुंचा । वहां पहुंच कर मैंने देखा कि बदरु के हाथ में लाठी थी, शिव लाल के पास भी लाठी थी, सीताराम के हाथ में भी लाठी थी, रामावतार के हाथ में बरछी जैसी

कुल्हाड़ी थी, लक्ष्मण के हाथ में गंडासी थी, महेश और शीश राम के हाथों में लाठियां थीं और चारों औरतों अर्थात् नन्ची, ननदी, जमुना और ललिता के हाथों में लाठियां थीं । ये सभी मेरे भाइयों को पीट रहे थे । रामावतार और लक्ष्मण बरछी जैसी गंडासी और कुल्हाड़ी से वार कर रहे थे । मैंने कहा, 'तुम उनकी पिटाई क्यों कर रहे हो । उन्हें छोड़ दो' । शिव लाल, बदरु राम, नन्ची देवी, सीताराम ने कमल और ओम प्रकाश को छोड़ दिया और मुझ पर हमला करने लगे । मेरे सिर में कई क्षतियां पहुंचीं और मेरे हाथ में अस्थिभंग हो गया । इन व्यक्तियों ने मेरी हत्या करने के लिए अनेक हमले किए । जब मेरा भतीजा राकेश हमें बचाने के लिए वहां आया, तब ये लोग उस पर भी हमला करने लगे । इसी दौरान, गोपी राम, छाजू राम, बाबू लाल राम सिंह घटनास्थल पर पहुंचे । अभियुक्त उन्हें देखकर हमें छोड़कर वहां से भाग गए । इसके पश्चात् वहां से गोपी लाल, बाबू राम आदि महेन्द्र की जीप लेकर आए और मेरे साथ ओम प्रकाश, कमल और राकेश को वी. डी. अस्पताल ले गए । क्षतियों के कारण मेरे भाई कमल कुमार और ओम प्रकाश की मृत्यु रास्ते में ही हो गई । मुझे और राकेश को खेतान अस्पताल, झुंझुनू में भर्ती कराया गया । अभियुक्तों ने कुंए और प्याऊ के निकट मंडरैला रोड पर हमारे साथ मार-पीट की । लगभग 2.30 बजे पूर्वाह्न में पुलिस बी. डी. अस्पताल, झुंझुनू पहुंची । मेरा कथन अभिलिखित किया गया जो प्रदर्श पी-9 है । जब साक्षी को उसका कथन पढ़कर सुनाया गया तब उसने स्वयं यह कहा कि यह वही कथन है जो उसने पुलिस को दिया था । घटना में कारित हुई क्षतियों के कारण मैं हस्ताक्षर करने की स्थिति में नहीं था, इसलिए मैंने अपने कथन प्रदर्श पी-9 और पुलिस कार्रवाई के दौरान तैयार किए गए संबंधित कागजात पर अंगूठे की छाप लगाई । मेरी चिकित्सा परीक्षा कराई गई और एक्सरे भी कराया गया । पुलिस ने मेरे रक्तरंजित कपड़े अर्थात् एक पैंट और एक कमीज प्रदर्श पी-10 के अनुसार अभिगृहीत और मोहरबंद किए जिन पर मेरे अंगूठे की छाप एक्स बिन्दु पर लगाई गई । अभियुक्त हमारे चाचा भगवान राम की भूमि को हड़पना चाहते थे और वे हमसे खिन्न थे । अत:, उन्होंने मेरे और मेरे भाइयों के साथ मारपीट की । मैं अभियुक्तों को जानता हूं जिनमें से जमुना और ललिता न्यायालय में मौजूद हैं । मैं शेष अभियुक्तों को भी जानता हूं ।"

4. इसी प्रकार, राकेश (अभि. सा. 4) जो कि राधे श्याम का भतीजा

है और मृतक ओम प्रकाश का पुत्र है और दूसरा प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है जो कि इस घटना में आहत हुआ है, इस साक्षी ने भी अपने चाचा (अभि. सा. 3) के कथन की संपुष्टि करते हुए अभिसाक्ष्य दिया है । इस साक्षी का कथन इस प्रकार है :–

> "यह घटना तारीख 11 नवंबर, 1999 को घटित हुई थी । 11.15 बजे रात्रि में, घर पर पढ़ाई कर रहा था । मेरे पिता और चाचा तथा मेरे बाबा राधे श्याम सिंचाई करने के लिए कुंए पर गए हुए थे क्योंकि रात्रि में ही बिजली आया करती थी । 'मार दिया, बचाओ बचाओ', की आवाज सुनकर मैं कुंए की ओर दौड़ा । 'बचाओ बचाओ' की यह आवाज ओम प्रकाश, कमल और राधे श्याम की थी और इसके पश्चात् मैं कुंए की ओर दौड़ा जब मैं मंडरैला रोड के निकट प्याऊ पर पहुंचा, मैंने देखा कि बदरु राम, बदरु राम के पुत्र शिव लाल, सीताराम, रामावतार, लक्ष्मण, महेश शीश राम और उनकी महिलाएं अर्थात् नन्ची, ललिता और जमुना वहां मौजूद थे । इन व्यक्तियों में रामावतार के पास बरछी जैसी कुल्हाड़ी थी, लक्ष्मण के हाथ में गंडासी थी और सभी अभियुक्तों के हाथों में लाठियां थीं । सभी अभियुक्त मेरे पिता ओम प्रकाश, मेरे चाचा कमल कुमार और राधे श्याम पर तेज धार वाले हथियारों और लाठियों से हमला कर रहे थे ।
>
> मैं भी चिल्लाया 'बचाओ, बचाओ' और मैंने यह भी कहा कि अभियुक्त मेरे पिता और मेरे चाचाओं पर हमला कर रहे हैं और उनके साथ मारपीठ कर रहे हैं । मेरी चीख-पुकार की आवाज सुनकर, छाजू राम, बाबू लाल, श्याम सिंह, चंदगी राम और गोपी राम दौड़ते हुए वहां आए । जब मैं चिल्लाया 'बचाओ, बचाओ' सभी अभियुक्त मेरे साथ भी मारपीठ करने लगे । उपरोक्त सभी व्यक्तियों ने, जो मेरी चीख-पुकार सुनकर आए थे, हमें बचाया और अभियुक्त हमें छोड़कर वहां से चले गए । इसके पश्चात् राधे श्याम, कमल और ओम प्रकाश के साथ मुझे भी जीप द्वारा अस्पताल ले जाया गया । क्षतियों के कारण ओम प्रकाश की मृत्यु रास्ते में ही हो गई । मुझे और राधे श्याम को अस्पताल में भर्ती कराया गया । मैं हमलावरों को जानता हूं जिनमें से ललिता और जमुना आज न्यायालय में मौजूद हैं और मैं शेष अभियुक्तों को भी जानता हूं । मेरी चिकित्सा परीक्षा और एक्सरे झुंझुनू अस्पताल में कराया गया ।"

5. इन दो प्रत्यक्षदर्शी आहत साक्षियों ने न केवल एक दूसरे के साक्ष्य की संपुष्टि की है अपितु उनका साक्ष्य प्रतिपरीक्षा के दौरान स्थिर भी बना रहा है । राधे श्याम (अभि. सा. 3) ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है :–

> "मैं यह नहीं बता सकता कि मेरे वहां पहुंचने के पूर्व कमल को कितनी क्षतियां पहुंचीं और मैं यह भी नहीं बता सकता कि ओम प्रकाश को कितनी क्षतियां पहुंची थीं किन्तु इन दोनों व्यक्तियों के साथ मार-पीट की गई थी क्योंकि मैंने यह नहीं देखा था कि किसको किस हथियार से पीटा गया था । अत: मैं यह नहीं कह सकता कि बरछी और कुल्हाड़ी से कितनी क्षतियां कारित हुईं । जब मैं वहां पहुंचा था, लड़ाई हो रही थी । मुझे वहां पहुंचने का समय पता नहीं और मुझे यह भी पता नहीं है कि यह लड़ाई कितनी देर तक चली । मैंने भूमि पर पड़ा हुआ रक्त नहीं देखा । मुझे यह नहीं मालूम है कि जीप में रक्त पड़ा हुआ था या नहीं । सभी अभियुक्तों ने राकेश पर हमला किया था और मैं यह नहीं बता सकता किस अभियुक्त ने कितनी क्षतियां कारित कीं । यह सुझाव गलत है कि मैं घटनास्थल पर मौजूद नहीं था और यह कि इसीलिए मैं अनेक क्षतियों के बारे में बताने में असमर्थ हूं ।"

6. इसी प्रकार राकेश कुमार (अभि. सा. 4) ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है :–

> "हम लगभग 1.30 बजे पूर्वाह्न में अस्पताल पहुंचे । पुलिस लगभग 2.00 बजे पूर्वाह्न में अस्पताल आई । कुछ समय पश्चात् मैं सो गया और मुझे नहीं मालूम कि पुलिस वहां कितनी देर मौजूद रही । मैं प्रात:काल में जागा । मैं 2.00 बजे पूर्वाह्न तक नहीं सोया था । मेरा कथन 2.00 बजे पूर्वाह्न में अभिलिखित किया गया था और इसके पश्चात् पुलिस मेरे पास नहीं आई । जमुना का विवाह सीकर में हुआ था । मुझे यह नहीं मालूम कि उसका विवाह इस घटना के कितने दिन पूर्व हुआ था । पुलिस को दिए गए कथन (प्रदर्श डी-3) में मैंने घर पर पढ़ाई करने के बारे में उल्लेख नहीं किया था, मुझे यह नहीं मालूम कि पुलिस ने यह बात उस कथन में क्यों लिखी । प्रदर्श डी-3 में मैंने यह लिखवाया था कि मैंने मंडरैला रोड पर स्थित प्याऊ की ओर से शोर आता हुआ सुना था और इसके पश्चात् मैं वहां पहुंचा, मुझे यह नहीं मालूम कि पुलिस को दिए गए कथन प्रदर्श डी-3

में यह बात क्यों नहीं लिखी गई है । मैंने उन अभियुक्तों के बारे में अभिकथन किया था जिनके पास भिन्न-भिन्न हथियार थे किन्तु मुझे यह नहीं मालूम कि यह बात प्रदर्श डी-3 में क्यों नहीं लिखी गई है । मैंने अपने पिता और चाचा पर तेज धार वाले हथियारों से अलग-अलग वार किए जाने के बारे में बताया था, मुझे नहीं मालूम कि प्रदर्श डी-3 में यह बात क्यों नहीं लिखी गई है । मैंने प्रदर्श डी-3 में यह कथन किया था कि मैंने हमला किए जाने के बारे में शोर मचाया था । यह कहना गलत है कि मैं इसलिए मिथ्या अभिसाक्ष्य दे रहा हूं कि मेरे चाचा और पिता इस घटना में आहत हुए थे । मैंने इस घटना में अभियुक्तों को पहुंची कोई क्षति नहीं देखी । यह कहना गलत है कि मैं मिथ्या साक्ष्य दे रहा हूं ।

7. अभि. सा. 3 की मुख्य परीक्षा तथा प्रतिपरीक्षा का परिशीलन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह साक्षी न्यायालय को यह नहीं बता सका कि मृतकों को कितनी क्षतियां किन-किन हथियारों से पहुंची थीं, इस बात से यह साक्ष्य निर्बल नहीं हो जाता कि अभियुक्तों द्वारा आहतों की पिटाई की गई थी । यह स्पष्ट है कि रात्रि में यह पता लगाना बहुत कठिन होता है कि किस व्यक्ति ने किस पर वार किया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने बहुत सावधानी के साथ दो आहत प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों और चिकित्सक (अभि. सा. 8) जिसने यह स्पष्ट किया है कि व्यक्तियों की मृत्यु मानव वध प्रकृति की है, सहित सभी 14 साक्षियों के साक्ष्य का परिशीलन किया है । अभि. सा. 7 और अन्वेषण अधिकारी ने अपराध में प्रयोग किए गए हथियारों की बरामदगी के संबंध में अभिसाक्ष्य दिया है । अन्वेषण अधिकारी (अभि. सा. 13) ने यह कथन किया है कि अभियुक्त रामावतार द्वारा स्वेच्छया दी गई जानकारी के आधार पर एक कुल्हाड़ी अभिगृहीत करके मुहरबंद की गई । इसी प्रकार, अन्य अभियुक्तों से लाठियां बरामद की गईं जिनमें अभियुक्त बदरु राम से उसके मकान के पीछे पानी में से लाठियां बरामद की गईं, शिव लाल से उसके मकान के पीछे लगे पौधों और झाड़ियों में से लाठी बरामद की गई और अभियुक्त लक्ष्मण के कथनानुसार बैंगन के खेत में से गंडासी बरामद की गई थी । इसी प्रकार अभियुक्त सीताराम के कहने पर लाठी बरामद की गई है ।

8. निचले न्यायालयों ने साक्ष्य का बहुत सूक्ष्मता के साथ परिशीलन किया है और दो प्रत्यक्षदर्शी आहत साक्षियों के साक्ष्य का पूर्ण रूप से अवलंब लिया है और अन्वेषण अधिकारी तथा डा. जे. पी. बुगलिया (अभि.

सा. 8) के साक्ष्य का भी परिशीलन किया है, अभि. सा. 8 ने यह कथन किया है कि मस्तिष्क को पहुंची क्षति और आंतरिक और बाह्य रक्तस्राव होने के कारण मृतक कौमा की स्थिति में आ गया था जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई ।

9. अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् न्यायमित्र ने यह दलील दी है कि चूंकि उच्च न्यायालय ने 6 अभियुक्तों को दोषमुक्त किया है इसलिए समतुल्यता के सिद्धांत के आधार पर हमारे समक्ष प्रस्तुत अपीलार्थियों को भी दोषमुक्त किया जाना चाहिए । उच्च न्यायालय के निर्णय से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अन्य 6 अभियुक्तों की दोषमुक्ति का कारण केवल यह है कि उन्हें परचा बयान में राधे श्याम द्वारा नामित नहीं किया गया था । राज्य ने उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए इस निष्कर्ष के आधार पर हमारे समक्ष अपील नहीं की है । समतुल्यता के सिद्धांत को ऊपर उल्लिखित ऐसे दो प्रत्यक्षदर्शी आहत साक्षियों के सारभूत साक्ष्य से प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता जिन पर निचले न्यायालयों द्वारा एकमत रूप से विश्वास किया गया है ।

10. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् न्यायमित्र द्वारा यह भी दलील दी गई है कि यह ऐसा मामला है जिसे दंड संहिता की धारा 304 भाग-II के अधीन हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध में परिवर्तित किया जाना चाहिए क्योंकि विद्वान् न्यायमित्र के अनुसार मामले की सम्पूर्ण परिस्थितियों का परिशीलन करने पर यह घटना अचानक प्रकोपन के कारण घटित हुई प्रतीत होती है जिसमें कोई कारण या हेतु दिखाई नहीं देता है । यह दलील केवल खारिज किए जाने के लिए ही दी गई है । दो प्रत्यक्षदर्शी आहत साक्षियों के साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि यह अचानक प्रकोपन का मामला नहीं है और हेतु के न होने से आरोप में कमी नहीं आ सकती ।

11. हमारा यह निष्कर्ष है कि किसी भी निचले न्यायालयों के निर्णयों में कोई भी कमी नहीं है और उनकी पुष्टि की जाती है । तद्नुसार अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

अस./पा.

[2015] 2 उम. नि. प. 126

पवन कुमार उर्फ **मोनू मित्तल**

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य

तथा

राकेश आनंद और एक अन्य

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य

तथा

शिवकेश गिरी उर्फ **लाला**

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

तथा

देवेश अग्निहोत्री

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

तथा

राजेश वर्मा

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

11 मार्च, 2015

न्यायमूर्ति सुधांशु ज्योति मुखोपाध्याय और न्यायमूर्ति एन. वी. रमना

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 25 और 27 – अभियुक्तों द्वारा पुलिस को की गई संस्वीकृति – ग्राह्यता – पुलिस गश्ती दल द्वारा अभियुक्तों को अपनी कार में मृतक का शव ले जाते हुए पकड़ा जाना – उनके संस्वीकृति कथन के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज

किया जाना और उनके बताने पर अन्य अभियुक्तों और अपराध में आलिप्त करने वाली विभिन्न सामग्री की बरामदगी होना – निर्दोषिता को साबित करने के लिए कोई स्पष्टीकरण न दिया जाना – अपराध में अंतर्ग्रस्तता सिद्ध होने पर दोषसिद्ध किया जाना – विधि का यह स्थिर सिद्धांत है कि अभियुक्त द्वारा पुलिस के समक्ष किए गए कथन, जो संस्वीकृति की कोटि में आते हैं धारा 25 के अधीन वर्जित हैं तथापि, धारा 27 के अधीन कुछ सीमा तक इस वर्जना को हटाया गया है और अभियुक्तों द्वारा दी गई जानकारी के परिणामस्वरूप पता चले तथ्यों के बारे में स्पष्टीकरण न देने के कारण धारा 25 का आश्रय नहीं ले सकते हैं और निचले न्यायालयों द्वारा की गई उनकी दोषसिद्धि उचित है ।

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 300 – हत्या – पारिस्थितिक साक्ष्य – हेतु – इंडियन आयल कारपोरेशन के विक्रय अधिकारी (मृतक) द्वारा अभियुक्त के पेट्रोल पम्प का निरीक्षण – अनियमितताएं पाए जाने पर पेट्रोल पम्प को सीलबंद किया जाना और जुर्माने का संदाय करने पर विक्रय और आपूर्ति प्रत्यावर्तित किया जाना – मृतक द्वारा घटना की तारीख को पुनः निरीक्षण के लिए पेट्रोल पम्प पर जाना – अनियमितताएं पाए जाने पर अनुज्ञप्ति रद्द होने की आशंका के कारण पेट्रोल पम्प के मालिक-अभियुक्त द्वारा अन्य अभियुक्तों की सहायता से मृतक की निर्ममतापूर्वक हत्या – अभियुक्तों के बताने पर अपराध में आलिप्त करने वाली सामग्री बरामद होना – अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्तों की सांठगांठ और अपराध कारित करने में उनकी संलिप्तता को सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किए जाने और घटनाओं की शृंखला पूर्ण होने पर निचले न्यायालयों द्वारा की गई उनकी दोषसिद्धि और दिए गए दंडादेश में किसी प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

मृतक मंजूनाथ गोला में इंडियन आयल कारपोरेशन में विक्रय अधिकारी के रूप में कार्यरत था । मृतक ने तारीख 13 सितम्बर, 2005 को अभियुक्त सं. 1 के पेट्रोल पम्प (मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स) का निरीक्षण किया और कुछ अनियमितताएं पाए जाने पर इंडियन आयल कारपोरेशन द्वारा उसकी प्रेरणा पर पेट्रोल पम्प का विक्रय और प्रदाय निलंबित कर दिए गए । तथापि, पेट्रोल पम्प के स्वामी द्वारा 75,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के पश्चात् तारीख 19 अक्तूबर, 2005 को विक्रय और प्रदाय प्रत्यावर्तित कर दिए गए । मृतक ने पुनः तारीख 19 नवम्बर, 2005 को अभियुक्त सं. 1 द्वारा अभी भी किए जा रहे अनाचार का संदेह होने पर

पेट्रोल पम्प का निरीक्षण किया । तारीख 20 नवम्बर, 2005 को पुलिस थाना माहौली, जिला सीतापुर का गश्ती दल जब गश्त पर था तो पूर्वाह्न में लगभग 8.00 बजे एक मारुति कार मैगलगंज की दिशा से आ रही थी और पुलिस जीप को देखकर वह मारुति कार अचानक वापस मुड़ी और उस स्थान से भागने की कोशिश की । संदेह होने पर उस मारुति कार का पीछा किया गया और उन्हें पकड़ लिया गया । कार अपीलार्थी-अभियुक्त सं. 7 चला रहा था और एक अन्य अपीलार्थी (अपीलार्थी-अभियुक्त सं. 4) साथ था जो पीछे की सीट पर एस. मंजूनाथ (मृतक) के रक्तरंजित शव के साथ बैठा हुआ था । परिप्रश्न करने पर दोनों अभियुक्त सं. 4 और 7 ने संस्वीकार किया कि मृतक को पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल (अभियुक्त सं. 1), देवेश अग्निहोत्री (अभियुक्त सं. 2), संजय अवस्थी (अभियुक्त सं. 3), लाला गिरी (अभियुक्त सं. 5), हरीश मिश्रा (अभियुक्त सं. 6) द्वारा मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स पर गोली मारी गई थी और वे मृतक के शव को अपनी कार में इसे किसी अज्ञात स्थान पर ठिकाने लगाने के लिए ले जा रहे थे । दोनों अभियुक्तों (सं. 4 और 7) को अभिरक्षा में लिया गया और सभी अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 147, 148, 149, 302 और 201 के अधीन मामला दर्ज किया गया । अन्वेषक अधिकारी ने अन्वेषण के पश्चात् आरोप पत्र प्रस्तुत किया और मामला विचारण के लिए सुपुर्द किया । विचारण न्यायालय ने सभी अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 149, 201 के साथ पठित धारा 147, 148, 302 और 120ख के अधीन आरोप विरचित किए । विचारण न्यायालय ने पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और मृत्यु दंडादेश तथा जुर्माने से दंडादिष्ट किया । अन्य अभियुक्तों को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया और आजीवन कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । इससे व्यथित होकर अभियुक्त-अपीलार्थियों ने उच्च न्यायालय में अपीलें फाइल कीं । उच्च न्यायालय ने तारीख 11 दिसम्बर, 2009 के आक्षेपित निर्णय द्वारा पवन कुमार (अभियुक्त सं. 1) की अपील को भागतः मंजूर किया और भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन उसके मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में उपांतरित किया किंतु अन्य अपराधों, जिनके लिए उन्हें आरोपित किया गया था, के लिए दोषसिद्धियों को मान्य ठहराया । तथापि, उच्च न्यायालय

द्वारा अभियुक्त देवेश अग्निहोत्री (अभियुक्त 2), राकेश आनंद (अभियुक्त 4), शिवकेश गिरी **उर्फ** लाला गिरी (अभियुक्त 5), विवेक शर्मा (अभियुक्त 7) और राजेश वर्मा (अभियुक्त 8) की अपीलें खारिज कर दी गईं । अन्य सह-अभियुक्त हरीश मिश्रा (अभियुक्त 6) और संजय अवस्थी (अभियुक्त 3) की अपीलें उन्हें संदेह का फायदा देते हुए मंजूर की गईं और उन्हें सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया । उच्च न्यायालय द्वारा पारित उक्त निर्णय के विरुद्ध अभियुक्त सं. 1, 2, 4, 5, 7 और 8 ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपीलें फाइल कीं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में, अभियुक्त सं. 4 और 7 ने अपने सह-अभियुक्तों के नाम उजागर किए और उनके बताने पर अपराध में आलिप्त करने वाली विभिन्न सामग्री बरामद की गई, जिनमें पिस्तौल, कारतूस, गोलियां, रक्तरंजित वस्तुएं सम्मिलित हैं । अपराध में आलिप्त करने वाली इन सामग्रियों के बारे में जानकारी के संबंध में उचित स्पष्टीकरण दिए बिना अपनी भूमिका से केवल इनकार करने से अभियुक्तों की अपराध में अंतर्ग्रस्तता के लिए निचले न्यायालयों द्वारा की गई उपधारणा न्यायोचित हो जाती है । निचले न्यायालयों द्वारा अभियुक्तों को उनकी संस्वीकृति के आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया गया है, अपितु यह दांडिक विधि को लागू करने के लिए जानकारी का केवल एक स्रोत है । इसलिए अभियुक्त साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के अधीन आश्रय नहीं ले सकते हैं । अपीलार्थियों की अगली दलील यह है कि अभियोजन पक्ष अपराध कारित करने के लिए अभियुक्तों के हेतु को साबित नहीं कर सका । न्यायालय यह महसूस करता है कि मृतक की निर्मम हत्या के लिए हेतु, जो अभियोजन पक्ष द्वारा सामने लाया गया है, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री को ध्यान में रखते हुए विश्वसनीय है । अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करते हुए न्यायालय के मस्तिष्क में कोई संदेह नहीं है कि मृतक मंजूनाथ ने मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स का तारीख 13 सितम्बर, 2005 को निरीक्षण किया था और अनियमितताएं पाए जाने पर उसने इनके बारे में इंडियन आयल कारपोरेशन को रिपोर्ट दी थी और उसकी प्रेरणा पर अभियुक्त सं. 1 के पेट्रोल पम्प के विक्रय और आपूर्ति निलंबित कर दिए गए थे । इंडियन आयल कारपोरेशन ने इसके पश्चात् अभियुक्त सं. 1 के पिता को कारण बताओ सूचना जारी की । उसके पिता ने अपने उत्तर में यह स्वीकार किया कि पेट्रोल पम्प की देखरेख उसके पुत्र पवन कुमार मित्तल द्वारा की जा रही थी । अभिलेख से

यह दर्शित होता है कि अभियुक्त सं. 1 ने 50,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय तारीख 17 अक्तूबर, 2005 के डी. डी. सं. 083226 और 25,000/- रुपए का एक अन्य संदाय तारीख 17 अक्तूबर, 2005 के डी. डी. सं. 083227 द्वारा किया था । यद्यपि विक्रय और आपूर्ति तारीख 19 अक्तूबर, 2005 को फिर से चालू कर दिए गए थे, तो भी मृतक ने तारीख 19 नवम्बर, 2005 को, उसके मृत पाए जाने से एक दिन पूर्व, पेट्रोल पम्प का पुनः निरीक्षण किया था । यह आशंका करते हुए कि मृतक फिर से इंडियन आयल कारपोरेशन को आपूर्ति में की अनियमितताओं का अभिकथन करते हुए रिपोर्ट देगा और उस स्थिति में अभियुक्त सं. 1 को या तो जुर्माने का संदाय करने के लिए कहा जाएगा या उसकी अनुज्ञप्ति निलंबित की जा सकती है, इसलिए उसे उसके प्रति विद्वेष हो गया और उसने अन्य अभियुक्तों की सहायता से मृतक की हत्या कर दी । यह तथ्य कि दुर्भाग्यशाली दिन मृतक ने अभियुक्त सं. 1 के पेट्रोल पम्प का दौरा किया था, जहां उसकी निर्ममतापूर्वक हत्या कर दी गई, मैसर्स अग्रवाल ब्रदर्स पेट्रोल पम्प के प्रबंधक अभि. सा. 4-अशोक कुमार अग्रवाल के साक्ष्य से स्पष्ट होता है, जिसने अपने साक्ष्य में यह अभिसाक्ष्य दिया कि अभियुक्त सं. 1 अभिकथित घटना से पूर्व तारीख 19 नवम्बर, 2005 को मृतक के अवस्थान और गतिविधि के बारे में पूछताछ कर रहा था । मैसर्स अग्रवाल ब्रदर्स के अभि. सा. 5-अनुराग अग्रवाल और मैसर्स अलंकार होटल के प्रबंधक अभि. सा. 8-रमेश चन्द्र पांडेय ने भी यह अभिसाक्ष्य दिया कि मृतक घटना के दिन गोला में था । अभि. सा. 5 ने भी यह अभिसाक्ष्य दिया कि मृतक उसके पम्प से अपराह्न में 9.30 बजे मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स पर गया था । मृतक के व्यवहित ज्येष्ठ अधिकारी अभि. सा. 17-आर. के. जुस्ती ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि मृतक तारीख 19 नवम्बर, 2005 को निरीक्षण के लिए मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स पर गया था । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि उसकी मौजूदगी में मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के टैंक से तीन कारतूस बरामद किए गए थे । इस साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि दुर्भाग्यशाली दिन मृतक मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स पर गया था और उसके पश्चात् वह मृत पाया गया । इस तथ्य पर विचार करते हुए कि मृतक की प्रेरणा पर इंडियन आयल कारपोरेशन ने ईंधन के वितरण में पाई गई अनियमितताओं के लिए अभियुक्त सं. 1 पर जुर्माना अधिरोपित किया था और इस वजह से उसे जुर्माने का संदाय करना पड़ा था, इसलिए इस बात की पूरी संभाव्यता है कि मृतक के प्रति अभियुक्त सं. 1 को विद्वेष था और जब मृतक ने तारीख 19 नवम्बर, 2005 को उसके पम्प का

दौरा किया तो यह आशंका करते हुए कि मृतक फिर से पम्प का निरीक्षण करेगा और अनियमितताओं की रिपोर्ट देगा और उस स्थिति में या तो उसे जुर्माने का संदाय करना पड़ेगा या इसके परिणामस्वरूप उसकी अनुज्ञप्ति रद्द कर दी जाएगी, अभियुक्त सं. 1 ने अन्य अभियुक्तों की सहायता से मृतक को समाप्त करने के लिए षड्यंत्र किया और तद्नुसार उसकी हत्या कर दी । यह न्यायालय निचले न्यायालयों से पूरी तरह से सहमत है कि अभियुक्तों ने मृतक की हत्या का अपराध कारित करने के लिए षड्यंत्र किया था । मृतक को समाप्त करने के लिए अभियुक्तों के बीच सांठगांठ को अभियोजन पक्ष द्वारा सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है । अभियुक्त सं. 1-पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल, पम्प जहां घटना घटित हुई, का स्वामी/भारसाधक होने के कारण मृतक को समाप्त करने के अपराध में हितबद्ध पक्षकार है, क्योंकि उसकी प्रेरणा पर आपूर्ति निलंबित की गई थी और जुर्माने का संदाय करने के उपरांत ही आपूर्ति प्रत्यावर्तित की गई थी । अभियुक्त सं. 4-राकेश आनंद और अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा को अभि. सा. 1-हैड कांस्टेबल और एक अन्य पुलिस कांस्टेबल द्वारा उस समय पकड़ा गया था जब वे अपनी कार में मृतक के शव को ठिकाने लगाने की कोशिश कर रहे थे । उन्होंने अभियुक्त सं. 5-लाला गिरी की अंतर्ग्रस्तता के बारे में संस्वीकृति की । लाला गिरी (अभि.-5) पवन कुमार (अभि.-1) का भूतपूर्व कर्मचारी है और उसके बताने पर पेट्रोल पम्प से तीन गोलियां बरामद की गई थीं और इससे घटनास्थल पर और घटना के समय उसकी मौजूदगी साबित होती है । अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री की अंतर्ग्रस्तता इस तथ्य से अभिनिश्चित होती है कि उसने संजय अवस्थी के मामा के मकान से चार कारतूसों की बरामदगी कराई थी । देवेश अग्निहोत्री (अभि.-2) का पूर्व में अभियुक्त सं. 4-राकेश आनंद के साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन एक मामले में विचारण किया गया था, जिससे षड्यंत्रकारियों के साथ उसकी पूर्ववर्ती सहचारिता साबित होती है, हालांकि यह बात दोषसिद्धि का आधार नहीं हो सकती । अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री के बताने पर अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा को अभियुक्त सं. 1-मोनू मित्तल के साथ उस समय गिरफ्तार किया गया था जब वह उसे अपनी कार में ले जा रहा था और इससे मुख्य अभियुक्त के साथ उसकी सहचारिता साबित होती है । उसकी गिरफ्तारी के समय एक रिवाल्वर दो जिंदा कारतूसों के साथ बरामद की गई थी । अभियुक्त सं. 1-पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल की एक राइफल (प्रदर्श क-18) भी अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा के मकान से बरामद की गई थी । इस प्रकार, अभियुक्तों

के बीच सांठगांठ तथा अपराध में उनकी भागीदारी युक्तियुक्त संदेह के परे पूरी तरह साबित होती है और हम अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं पाते हैं जिससे यह सुझाव दिया जा सके कि पुलिस द्वारा अभियुक्तों को अनावश्यक रूप से फंसाया गया है । (पैरा 28, 29 और 30)

घटनास्थल के विषय में भी न्यायालय के मस्तिष्क में कोई संदेह नहीं है । अभियुक्त की ओर से हाजिर होने वाले काउंसेल द्वारा घटनास्थल के विषय में इस आधार पर संदेह पैदा करने का प्रयास किया गया कि अपराध करने में प्रयोग की गई गोलियों की संख्या मृतक को लगी गोलियों की संख्या के अनुपात में नहीं हैं । अभिलेख पर मैसर्स अग्रवाल ब्रदर्स पेट्रोल पम्प के अनुराग अग्रवाल-अभि. सा. 5 के साक्ष्य में यह बात आई है कि मृतक ने तारीख 19 नवम्बर, 2005 को अपराह्न में 9.30 बजे उसे यह सूचित किया था कि वह मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के पास अपने मापन उपकरण लेने जा रहा है जिन्हें वह वहां भूल आया है । मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के टैंक से और उनके पेट्रोल पम्प के पीछे से गोलियों के साथ-साथ रक्तरंजित कपड़ों की बरामदगी संचयी रूप से मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के घटनास्थल होने की बात सिद्ध होती है । बंदूक से गोली चलाने के प्रत्येक मामले में यह अपेक्षित नहीं है कि प्रत्येक गोली निशाने पर लगे । मृतक या विपदग्रस्त द्वारा अपने आप को बरस रही गोलियों से बचाने का प्रयास किया जा सकता है और उस दशा में गोलियां निशाने पर न लगें । केवल इस कारण कि बंदूक से चलाई गई सभी गोलियां निशाने पर नहीं लगी थीं और घटनास्थल से बरामद नहीं हुई थीं, यह निष्कर्ष निकालने का आधार नहीं है कि घटना घटित नहीं हुई थी । जहां तक अभियोजन साक्षियों के कथनों में विरोधाभास होने के अभिकथन का संबंध है, न्यायालय ऐसा कोई बड़ा विरोधाभास नहीं पाता है, जिस पर इस न्यायालय को ध्यान देना या विचार करना आवश्यक हो । जब किसी साक्षी की विस्तारपूर्वक परीक्षा की जाती है, तो उससे कुछ फर्क हो जाना संभव सी बात है । सच्चे से सच्चा साक्षी का कुछ न कुछ अनमेल ब्यौरे देने से बच पाना संभव नहीं है । किंतु न्यायालयों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि किसी साक्षी के साक्ष्य में आए फर्कों को केवल तभी नकारना चाहिए जब वे उसके बयान की सत्यता से इतने बेमेल हों कि न्यायालय उसके साक्ष्य को नकारने में न्यायोचित हो । इस बात में कोई संदेह नहीं है कि जब दो मत संभव हों, तो वह मत अपनाया जाना चाहिए जो अभियुक्त के पक्ष में हो और अभियुक्त को संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त किया

जाना चाहिए । किंतु प्रस्तुत मामले में अभिलेख पर का साक्ष्य विश्वसनीय और संगत है और केवल एक ही मत है, जो अभियुक्त की दोषिता को इंगित करता है । यद्यपि अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने साक्षियों के साक्ष्य में छुट-पुट फर्कों का उल्लेख किया है, किंतु न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि ऐसे छुट-पुट फर्क ऐसे अन्य ठोस पारिस्थितिक साक्ष्य के आड़े नहीं आने चाहिएं जिन पर संचयी रूप से एकसाथ विचार करने पर घटनाओं की पूर्ण शृंखला बनती है और अपराध कारित करने में अभियुक्तों की दोषिता इंगित होती है । ऐसे मामलों में, जहां प्रत्यक्ष साक्ष्य मिलना दुर्लभ है, वहां अभियोजन का पक्षकथन साबित करने का भार हेतु और पारिस्थितिक साक्ष्य पर टिका होता है । घटनाओं की शृंखला का ऐसे मामलों में प्रमुख महत्व रहता है । तथ्यात्मक पहलुओं का विश्लेषण करने से पूर्व यह उल्लेख किया जा सकता है कि किसी अपराध को साबित किए जाने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि अपराध को अवश्य ही कारित करते हुए देखा गया होना चाहिए और, सभी परिस्थितियों में, अवश्य ही उन व्यक्तियों की न्यायालय के समक्ष परीक्षा करके, जिन्होंने इसे कारित होते हुए देखा था, प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य द्वारा साबित किया जाना चाहिए । अपराध को पारिस्थितिक साक्ष्य से भी साबित किया जा सकता है । मुख्य तथ्य या सिद्ध तथ्य को अप्रत्यक्ष रूप से साक्ष्यिक तथ्यों से निकाले गए विभिन्न निष्कर्षों के माध्यम से साबित किया जा सकता है । दूसरे शब्दों में, पारिस्थितिक साक्ष्य का विवाद्यक प्रश्न से सीधा संबंध नहीं होता है किंतु ऐसे विभिन्न अन्य तथ्यों का साक्ष्य अंतर्विष्ट होता है जो विवाद्यक तथ्य से इतने गहरे रूप से संबद्ध होते हैं कि एक साथ विचार करने पर उनसे परिस्थितियों की एक ऐसी शृंखला बनती है जिससे मुख्य तथ्य की विद्यमानता का विधिक रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है या उपधारणा की जा सकती है । प्रस्तुत मामले में, अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से, जैसी कि ऊपर चर्चा की गई है, घटनाओं की शृंखला साबित होती है जो अभियुक्तों को अपराध कारित करने के दोष से जोड़ती है । अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर लाया गया संपूर्ण साक्ष्य विश्वासप्रद ही नहीं अपितु भरोसेमंद भी है । यदि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के समक्ष की गई अभियुक्त सं. 4 और 7 की संस्वीकृति को, जो कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 द्वारा वर्जित है, विचार में न लिया जाए तो भी अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया अन्य साक्ष्य अभियुक्तों को अपराध का दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त है । (पैरा 31, 32 और 33)

इस न्यायालय ने सतत् रूप से यह मत अपनाया है कि जहां कोई मामला पूरी तरह से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित हो, वहां दोषिता का निष्कर्ष केवल तभी न्यायोचित हो सकता है जब अपराध में आलिप्त करने वाले सभी तथ्य और परिस्थितियां अभियुक्त की निर्दोषिता या किसी अन्य व्यक्ति की दोषिता के बेमेल पाए जाते हैं । वर्तमान मामले में, अभिलेख पर के साक्ष्य की संवीक्षा करने के पश्चात् न्यायालय विश्वस्त है कि अभियोजन पक्ष ने घटनाओं की पूर्ण शृंखला को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है जो अभियुक्तों की दोषिता को इंगित करती है । इस प्रकार, उपरोक्त परिस्थितियों के साथ-साथ घटनाओं की पूर्ण शृंखला को ध्यान मे रखते हुए इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में तनिक भी संदेह नहीं है कि अभियोजन पक्ष अभियुक्तों के विरुद्ध अपने पक्षकथन को सभी युक्तियुक्ति संदेह के परे साबित करने में सफल रहा है । (पैरा 34 और 35)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	(2009) 17 एस. सी. सी. 273 : **मणी** बनाम **तमिलनाडु राज्य** ;	15
[2002]	(2002) 8 एस. सी. सी. 45 : **बोधराज** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य** ;	33
[2000]	(2000) 6 एस. सी. सी. 269 : **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **दामू** ;	26
[1999]	(1999) 8 एस. सी. सी. 649 : **रम्मी** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	32
[1980]	(1980) 2 एस. सी. सी. 465 : **शिवनारायण लक्ष्मीनारायण जोशी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	24
[1977]	[1977] 3 उम. नि. प. 489 = (1976) 4 एस. सी. सी. 158 : **दलबीर कौर** बनाम **पंजाब राज्य** ;	24
[1966]	[1966] 1 एस. सी. आर. 134 : **अघनू नागेसिया** बनाम **बिहार राज्य** ;	8

[1962] [1962] 3 एस. सी. आर. 338 :
पंजाब राज्य बनाम **बरकत राम** । 8

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 2194. (इसके साथ 2011 की दांडिक अपील सं. 2195-2196, 2198, 2199 और 2200)

2007 की दांडिक अपील सं. 1250 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय (लखनऊ पीठ) के तारीख 11 दिसम्बर, 2009 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री एस. के. अग्रवाल, पी. सी. अग्रवाल, ज्येष्ठ अधिवक्तागण और उनके साथ जितेन्द्र सरीन, प्रदीप अग्रवाल, राम निवास, सरद कुमार सिंघानिया (सुश्री) रूचि कोहली, लाल प्रताप सिंह, निर्मल गोयनका, (सुश्री) निधि जसवाल, अनिरूद्ध शर्मा, महेश श्रीवास्तव, वैभव एम. श्रीवास्तव, पी. एन. पुरी, शिवम शर्मा और गौतम अवस्थी

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री गौरव भाटिया, अपर महाधिवक्ता, कुणाल वर्मा, (सुश्री) कामिनी जायसवाल, (सुश्री) शिल्पी डे, प्रगति नीखरा और उत्कर्ष जायसवाल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एन. वी. रमना ने दिया ।

न्या. रमना – ये अपीलें इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ न्यायपीठ के तारीख 11 फरवरी, 2009 के उस आक्षेपित सामान्य निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई हैं, जिसके द्वारा इस अपील में के अपीलार्थियों, जो मंजूनाथ नामक व्यक्ति की हत्या के अभियुक्त हैं, की अपीलें खारिज कर दी गई थीं ।

2. अभियोजन पक्ष के अनुसार, मामले के तात्विक तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी मोनू मित्तल (अभियुक्त सं. 1) का पिता लखीमपुर खीरी, उत्तर

प्रदेश के गोला में स्थित मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स नामक पेट्रोल पम्प का स्वामी था । मृतक मंजूनाथ गोला में इंडियन आयल कारपोरेशन में विक्रय अधिकारी के रूप में कार्यरत था । मृतक ने तारीख 13 सितम्बर, 2005 को अभियुक्त सं. 1 के पेट्रोल पम्प का निरीक्षण किया और कुछ अनियमितताएं पाए जाने पर इंडियन आयल कारपोरेशन द्वारा उसकी प्रेरणा पर पेट्रोल पम्प का विक्रय और प्रदाय निलंबित कर दिए गए । तथापि, पेट्रोल पम्प के स्वामी द्वारा 75,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के पश्चात् तारीख 19 अक्तूबर, 2005 को विक्रय और प्रदाय प्रत्यावर्तित कर दिए गए । मृतक ने पुनः तारीख 19 नवम्बर, 2005 को अभियुक्त सं. 1 द्वारा अभी भी किए जा रहे अनाचार का संदेह होने पर पेट्रोल पम्प का निरीक्षण किया ।

3. तारीख 20 नवम्बर, 2005 को पुलिस थाना माहौली, जिला सीतापुर का हैड कांस्टेबल (राम भवन सिंह) जब कांस्टेबल आशा राम (अभि. सा. 2) और ड्राइवर बृज किशोर के साथ राष्ट्रीय राजमार्ग पर गश्त ड्यूटी पर था तो पूर्वाह्न में लगभग 8.00 बजे एक मारुति कार, जिसका संख्यांक यू पी 51 ई 5176 था, मैगलगंज की दिशा से आ रही थी और पुलिस जीप को देखकर वह मारुति कार अचानक वापस मुड़ी और उस स्थान से भागने की कोशिश की । संदेह होने पर उस मारुति कार का पीछा किया गया और पूर्वाह्न में लगभग 8.30 बजे ग्रीन गोल्ड ढाब्बे के निकट पकड़ ली गई । विवेक शर्मा (अपीलार्थी-अभियुक्त सं. 7) कार चला रहा था और एक अन्य अपीलार्थी राकेश कुमार आनंद (अपीलार्थी-अभियुक्त सं. 4) साथ था जो पीछे की सीट पर एस. मंजूनाथ (मृतक) के रक्तरंजित शव के साथ बैठा हुआ था । परिप्रश्न करने पर दोनों अभियुक्तों सं. 4 और 7 ने संस्वीकार किया कि मृतक को पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल (अभियुक्त सं. 1), देवेश अग्निहोत्री (अभियुक्त सं. 2), संजय अवस्थी (अभियुक्त सं. 3), लाला गिरी (अभियुक्त सं. 5), हरीश मिश्रा (अभियुक्त सं. 6) द्वारा मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स पर गोली मारी गई थी और वे मृतक के शव को अपनी कार में इसे किसी अज्ञात स्थान पर ठिकाने लगाने के लिए ले जा रहे थे । दोनों अभियुक्तों सं. 4 और 7 को अभिरक्षा में लिया गया और एक बरामदगी ज्ञापन (प्रदर्श क-1) तैयार किया गया और सभी अभियुक्तों के विरुद्ध तारीख 20 नवम्बर, 2005 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 147, 148, 149, 302 और 201 के अधीन मामला दर्ज किया गया ।

4. श्री पी. एन. सक्सेना, उप निरीक्षक ने अन्वेषण का कार्य संभाला और धन राज साहनी (अभि. सा. 3, मृतक का मकान-मालिक) की मौजूदगी में मृत्यु-समीक्षा की । उसने मृतक की कई अन्य चीजों के अतिरिक्त मारुति कार से रक्तरंजित सीट कवर और पायदान (प्रदर्श क-9) एकत्रित किए, स्थल नक्शा (प्रदर्श क-8) तैयार किया और शव मरणोत्तर परीक्षा के लिए भेजा । उसके पश्चात् उसने अन्वेषण को पुलिस थाना, गोला के पास अंतरित किया और प्रमेश शुक्ला, थाना अधिकारी (अभि. सा. 21), जिसने आगे का अन्वेषण कार्य संभाला, ने तारीख 22 नवम्बर, 2005 को शिवकेश गिरी **उर्फ** लाला गिरी (अभियुक्त सं. 5) को गिरफ्तार किया । उसने पेट्रोल पम्प के पीछे से एक गीला रक्तरंजित कपड़ा भी बरामद किया, जिसे अभिकथित रूप से अभि. सा. 5 के कहने पर हत्या के स्थल की सफाई करने के लिए प्रयुक्त किया गया था । इस अभियुक्त के बताने पर पेट्रोल पम्प के पीछे से 32 बोर के तीन कारतूस (प्रदर्श क-16) भी बरामद किए गए । उसने लाला गिरी (अभियुक्त सं. 5) की संस्वीकृति के आधार पर रेलवे क्रासिंग के निकट से एक कार संख्यांक यू पी 31 एफ 4629 में अपराह्न 6.50 बजे अन्य अभियुक्तों पवन कुमार, संजय अवस्थी, राजेश वर्मा, और हरीश मिश्रा को गिरफ्तार किया । कार के स्वामी अभियुक्त राजेश वर्मा से एक रिवाल्वर बरामद की गई और अभियुक्त पवन कुमार से एक पिस्तौल (प्रदर्श क-17) बरामद की गई । अन्वेषक अधिकारी ने तारीख 23 नवम्बर, 2005 को पूर्वाह्न में 8.30 बजे पुनेरभू जंगल, खेरी से अभियुक्त पवन कुमार की कार, उसकी रक्तरंजित पेंट बरामद की । अन्वेषक अधिकारी ने अभियुक्त सं. 1 मोनू मित्तल के बताने पर तारीख 24 नवम्बर, 2005 को पूर्वाह्न में 9.30 बजे पेट्रोल पम्प के डीजल टेंक से तीन खाली कारतूस बरामद किए । टी. एन. त्रिपाठी, उप निरीक्षक (अभि. सा. 19) द्वारा उसी दिन अपराह्न में 6.00 बजे भीरा से अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री को गिरफ्तार किया गया और उसके बताने पर अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा की रिवाल्वर से दागे गए चार खाली कारतूस (प्रदर्श क-20) संजय अवस्थी (अभियुक्त-3) के चाचा जितेन्द्र मिश्रा के मकान से बरामद किए गए ।

5. अन्वेषण के पश्चात् अन्वेषक अधिकारी ने आरोप पत्र प्रस्तुत किया और मामला विचारण के लिए सुपुर्द किया । विचारण न्यायालय ने सभी अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 149, 201 के साथ पठित धारा 147, 148, 302 और 120ख के अधीन आरोप विरचित किए ।

अभियुक्त सं. 1-पवन कुमार के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 404 और 411 तथा आयुध अधिनियम की धारा 30 के अधीन और अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 212 और आयुध अधिनियम की धारा 25/30 के अधीन अतिरिक्त आरोप विरचित किए गए । अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा और अभियुक्त सं. 4-राकेश कुमार आनंद के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 411 के अधीन भी आरोप विरचित किए गए ।

6. विचारण न्यायालय ने पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल को भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और मृत्यु तथा 10,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय करने में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया । उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन अपराध के लिए भी दो वर्ष का कठोर कारावास भोगने और 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का साधारण कारावास भोगने और आयुध अधिनियम की धारा 30 के अधीन छह माह का कारावास भोगने का दंडादेश दिया । अन्य अभियुक्त अर्थात् अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री, अभियुक्त सं. 3-संजय अवस्थी, अभियुक्त सं. 4-राकेश कुमार आनंद, अभियुक्त सं. 5-शिवकेश गिरी **उर्फ** लाला गिरी, अभियुक्त सं. 6-हरीश मिश्रा, अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा और अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया और आजीवन कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अधीन एक वर्ष का कठोर कारावास, धारा 201 के अधीन पांच वर्ष का कठोर कारावास और धारा 120ख के अधीन पांच वर्ष का कठोर कारावास भोगने का भी दंडादेश दिया गया । अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 212 के अधीन दोषसिद्ध किया गया और तीन वर्ष का कठोर कारावास भोगने और 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर छह माह का साधारण कारावास भोगने, आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन एक वर्ष का कठोर कारावास भोगने और 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर तीन माह का साधारण कारावास भोगने और आयुध अधिनियम की धारा 30 के अधीन छह माह का कठोर कारावास भोगने का

दंडादेश दिया । अभियुक्त राकेश आनंद, विवेक शर्मा और पवन कुमार को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 411 के अधीन दो वर्ष का कठोर कारावास भोगने का दंडादेश दिया गया । तथापि, सभी दंडादेशों को साथ-साथ चलने का निदेश दिया गया ।

7. इससे व्यथित होकर अभियुक्त-अपीलार्थियों ने उच्च न्यायालय में अपीलें फाइल कीं । उच्च न्यायालय ने तारीख 11 दिसम्बर, 2009 के आक्षेपित निर्णय द्वारा पवन कुमार (अभियुक्त सं. 1) की अपील को भागतः मंजूर किया और भारतीय दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के अधीन उसके मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में उपांतरित किया किंतु अन्य अपराधों, जिनके लिए उन्हें आरोपित किया गया है, के लिए दोषसिद्धियों को मान्य ठहराया । तथापि, उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त देवेश अग्निहोत्री (अभियुक्त-2), राकेश आनंद (अभियुक्त-4), शिवकेश गिरी **उर्फ** लाला गिरी (अभियुक्त-5), विवेक शर्मा (अभियुक्त-7) और राजेश वर्मा (अभियुक्त-8) की अपीलें खारिज कर दी गईं । अन्य सह-अभियुक्त हरीश मिश्रा (अभियुक्त-6) और संजय अवस्थी (अभियुक्त-3) की अपीलें उन्हें संदेह का फायदा देते हुए मंजूर की गईं और उन्हें सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया । उच्च न्यायालय द्वारा पारित उक्त निर्णय के विरुद्ध अभियुक्त सं. 1, 2, 4, 5, 7 और 8 ने इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान अपीलें फाइल कीं ।

8. अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले काउंसेल ने यह दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अपीलार्थियों को उसी साक्ष्य के आधार पर जिसके द्वारा उन्होंने सह-अभियुक्त हरीश मिश्रा और संजय अवस्थी को सभी आरोपों से दोषमुक्त किया है, दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके गंभीर गलती कारित की है । उच्च न्यायालय ने एकमात्र रूप से अभियुक्त-अपीलार्थियों द्वारा पुलिस को किए गए उन संस्वीकृति कथनों का अवलंब लिया है जो भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के अधीन साक्ष्य में अग्राह्य हैं । विद्वान् काउंसेल ने **अघनू नागेसिया** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी कि "किसी पुलिस अधिकारी को किसी भी परिस्थिति में की गई कोई संस्वीकृति अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य में ग्राह्य नहीं है । इसके अंतर्गत ऐसी संस्वीकृति, जो तब की गई हो जब अभियुक्त स्वतंत्र था और पुलिस

[1] [1966] 1 एस. सी. आर. 134.

अभिरक्षा में नहीं था, आने के साथ-साथ ऐसी संस्वीकृति भी आती है जो कोई अन्वेषण आरंभ होने से पूर्व की गई हो ।" दुर्भाग्यवश, उच्च न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 पर इसके वास्तविक भावार्थ में विचार नहीं किया और यह अभिनिर्धारित करके गलती की कि पुलिस अधिकारी को किया गया अभियुक्त का संस्वीकृति कथन ग्राह्य है, क्योंकि यह कथन अन्वेषक अधिकारी के समक्ष नहीं किया गया था अपितु किसी अन्य पुलिस अधिकारी के समक्ष किया गया था । विद्वान् काउंसेल ने **पंजाब राज्य** बनाम **बरकत राम**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए यह दलील दी कि पुलिस के किसी भी सदस्य को की गई संस्वीकृति, उसका रैंक कोई भी हो और किसी भी समय पर की गई हो, साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के अनुसार साक्ष्य में अग्राह्य है ।

9. विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि आक्षेपित निर्णय केवल अटकलबाजी और कल्पना पर आधारित है न कि किसी सटीक और विश्वसनीय साक्ष्य पर । घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं था और अभियोजन का पक्षकथन केवल पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । अभियोजन पक्ष अपराध कारित करने में अभियुक्त-अपीलार्थियों को जोड़ने वाली घटनाओं की शृंखला को साबित करने में पूर्णतया असफल रहा है । मृतक की हत्या करने के लिए अभियुक्तों के हेतु को सिद्ध करने के लिए अपीलार्थियों के विरुद्ध कोई प्रत्यक्ष साक्षी या अपराध में आलिप्त करने वाला साक्ष्य नहीं है । निचले न्यायालयों ने इस तथ्य की अनदेखी की है कि न तो प्राक्षेपिकी विज्ञानी की रिपोर्ट और न ही सीरम विज्ञानी की रिपोर्ट से अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन होता है । प्राक्षेपिकी विज्ञानी की रिपोर्ट में कोई विशेष विशिष्टताएं नहीं पाई गई थीं और कोई निश्चायक राय नहीं दी गई थी कि गोलियां अभियुक्तों की बंदूक से चलाई गई थीं । प्राक्षेपिकी विज्ञानी ने रिपोर्ट (प्रदर्श क-61) में स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया है कि निश्चित राय देने के लिए "व्यक्तिगत विशिष्टताओं" का अभाव है । विशेषज्ञ की ठोस राय के अभाव में निश्चायक रूप से यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि घटनास्थल के आस-पास से बरामद की गई गोलियां अभियुक्त सं. 1 पवन कुमार की बंदूक से चलाई गई थीं ।

10. विद्वान् काउंसेल की यह दलील है कि सीरम विज्ञानी की रिपोर्ट

---

[1] [1962] 3 एस. सी. आर. 338.

(प्रदर्श क-60) के अनुसार पेट्रोल पम्प के पीछे से बरामद किए गए उस कपड़े पर, जो अभिकथित रूप से घटनास्थल को साफ करने के लिए प्रयुक्त किया गया था और अभियुक्त सं. 1 पवन कुमार की पेंट, जो अभिकथित रूप से उसकी कार (प्रदर्श क-62 और 62ए) से बरामद की गई थी, पर भी कोई रक्त नहीं पाया गया था । एक अन्य महत्वपूर्ण खामी जो अभियोजन के वृत्तांत में स्पष्ट है, यह है कि मृतक का शरीर रक्त से सना था, किंतु अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा और अभियुक्त सं. 4-राकेश कुमार आनंद के कपड़ों पर कोई रक्त का धब्बा पाया जाना नहीं बताया गया है, जो अभिकथित रूप से शव को अपनी कार में इसे ठिकाने लगाने के लिए ले जा रहे थे । एक अन्य संदिग्ध परिस्थिति जिसे अभियोजन पक्ष द्वारा साबित किया जाना चाहिए था, यह भी है कि जब कार, जिसमें अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा और अभियुक्त सं. 4-राकेश कुमार आनंद मृतक के शव को ले जा रहे थे, पकड़ी गई थी, तब मृतक का मकान मालिक अभि. सा. 3-धनराज साहनी भीड़ से निकलकर आया था और शव की शनाख्त की थी । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि मकान मालिक उस स्थल से काफी दूर रह रहा था जहां से अभियुक्त गिरफ्तार किए गए थे, और अभियोजन पक्ष द्वारा उस स्थल पर उसके मौजूद होने का कोई कारण नहीं दिया गया है जहां से शव को ले जा रही कार पकड़ी गई थी । इस बात से मकान मालिक की उस समय पर मौजूदगी के बारे में अभियोजन के वृत्तांत पर संदेह पैदा होता है ।

11. विद्वान् काउंसेल ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि एक अन्य पहलू जो अपीलार्थियों को अपराध में फंसाने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा मामले में छलसाधन करने के तथ्य को अधिसंभाव्य बनाता है, यह है कि अभियोजन पक्षकथन के अनुसार मृतक पर कुल ग्यारह गोलियां चलाई गई थीं, किंतु मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श क-14) के अनुसार मृतक को छह अग्न्यायुध क्षतियां पहुंची थीं जिनमें से उसके शरीर पर दो निकास घाव थे और चार गोलियां उसके शरीर से बरामद की गई थीं । अन्य गोलियां न पाए जाने की बाबत अभियोजन पक्ष की ओर से कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है । यह कल्पना करना संभव नहीं है कि अन्य सात गोलियां घटनास्थल पर कहीं न लगी हों । इस तथ्य से स्पष्ट रूप से यह सिद्ध होता है कि अभियोजन पक्ष ने अन्वेषण में छलसाधन किया है । इस प्रकार अभियोजन पक्ष घटना के स्थल को साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा है और घटनास्थल से अभिकथित रूप से की गई बरामदगियां मामले

के प्रयोजन के लिए गढ़ी गई थीं ।

12. विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि निचले न्यायालय अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने से पूर्व महत्वपूर्ण तात्विक विरोधाभासों पर विचार करने में पूरी तरह से असफल रहे हैं । अभि. सा. 21-परमेश कुमार शुक्ला, थाना अधिकारी ने कथित रूप से तारीख 20 नवम्बर, 2005 को सायंकाल में मामले को अपने नियंत्रण में लिया था और उसे घटनास्थल के बारे में जानकारी 21 नवम्बर, 2005 को मिली, यह बात अनधिसंभाव्य प्रतीत होती है । इस बात की इस तथ्य से पुष्टि हो जाती है कि रोजनामचा (साधारण डायरी सं. 38, तारीख 21 नवम्बर, 2005) के अनुसार इस साक्षी ने घटनास्थल अर्थात् पेट्रोल पम्प का दौरा तारीख 21 नवम्बर, 2005 को किया था । जबकि विचारण न्यायालय के समक्ष अपने अभिसाक्ष्य में उसने तारीख 21 नवम्बर, 2005 को वहां जाने की बात से इनकार किया और उसने यह भी कथन किया कि वह घटनास्थल पर पहली बार तारीख 22 नवम्बर, 2005 को दोपहर में गया था । इसलिए यह स्पष्ट है कि अन्वेषण दूषित हैं तथा महत्वपूर्ण और तात्विक भाग जानबूझकर छिपाया गया है । अभि. सा. 21 का घटनास्थल पर तारीख 22 नवम्बर, 2005 को जाने के अभिसाक्ष्य को निचले न्यायालयों द्वारा नामंजूर किया जाना चाहिए था । अन्वेषक अधिकारी के साक्ष्य का तात्विक भाग जब मिथ्या पाया गया है, तो उसके कथन का कोई अवलंब नहीं लिया जा सकता था । ऐसे तात्विक विरोधाभासों से उसके साक्ष्य पर न केवल संदेह पैदा होता है, अपितु अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन अविश्वसनीय बन जाता है । विद्वान् काउंसेल द्वारा अभियोजन के वृत्तांत में बताई गई एक अन्य विसंगति यह है कि अभियोजन पक्षकथन के अनुसार अभियुक्त सं. 5 लाला गिरी को अभि. सा. 21 द्वारा तारीख 22 नवम्बर, 2005 को रेलवे स्टेशन से गिरफ्तार किया गया था, जबकि तारीख 21 नवम्बर, 2005 को अपराह्न में लगभग 3.15 बजे लाला गिरी (अभि.-5) की माता ने उप महानिरीक्षक, लखनऊ को एक तार (प्रदर्श ख-2) यह शिकायत करते हुए भेजा था कि पुलिस थाना, गोला द्वारा उसके पुत्र को तारीख 20 नवम्बर, 2005 से गलत रूप से परिरुद्ध किया हुआ है । यह निर्विवाद तथ्य उसकी गिरफ्तारी की बात को झुठलाता है और इस प्रकार अभिकथित रूप से उसके बताने पर की गई बरामदगियों का अवलंब नहीं लिया जा सकता है ।

13. विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अपराध के हेतु को गलत रूप से आरोपित किया है क्योंकि मृतक द्वारा

मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स को अभिकथित अनाचार के कारण सीलबंद किया गया था । यह स्वीकृत तथ्य है कि मित्तल आटोमोबाइल्स के अतिरिक्त मृतक द्वारा उसी दिन एक और पेट्रोल पम्प एल. डी. सर्विस स्टेशन का भी निरीक्षण किया गया था और लिए गए नमूने अपमिश्रित पाए गए थे, किंतु इस बाबत कोई अन्वेषण नहीं किया गया । वास्तव में, मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स से एकत्रित किए गए नमूने में कोई अपमिश्रण होना नहीं पाया गया था । वस्तुतः, बाट और माप विभाग ने जून, 2005 से 13 सितम्बर, 2005 तक एचएसडी (1150 लीटर) का परीक्षण किया था । यद्यपि मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के स्टाक रजिस्टर में प्रविष्टियां की गई थीं, किंतु मुख्य स्टाक रजिस्टर में तत्संबंधी प्रविष्टि नहीं की गई थी जिसके फलस्वरूप पेट्रोल पम्प को सीलबंद किया गया था । जब मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स ने तारीख 18 अक्तूबर, 2005 के उत्तर द्वारा इस बात को स्पष्ट किया तो पेट्रोल पम्प को पुनः चालू कर दिया गया । तकनीकी दोष की बाबत 75,000/- रुपए का जुर्माना संदत्त किया गया था जिससे कि आपूर्ति का प्रत्यावर्तन सुनिश्चित किया जा सके । इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत हेतु वाला भाग साबित नहीं होता है और निचले न्यायालयों ने इस तथ्य का मूल्यांकन न करके गलती की है ।

14. अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अपीलार्थी को अपराध में गलत रूप से आलिप्त किया गया है । अपीलार्थी की मुख्य अभियुक्त मोनू मित्तल के साथ पहले से कोई सहचारिता नहीं थी । अपीलार्थी-अभियुक्त सं. 2 सुसंगत समय पर घटनास्थल पर मौजूद ही नहीं था क्योंकि वह जिला ऐटा में अपने साले के विवाह में सम्मिलित था जो कि घटनास्थल से बहुत दूर है । इसके अतिरिक्त, अभियुक्त सं. 2 के विरुद्ध अपराध में आलिप्त करने वाला कोई साक्ष्य नहीं है ।

15. अभियुक्त सं. 5-लाला गिरी की ओर से विनिर्दिष्ट रूप से यह दलील दी गई कि विचारण न्यायालय द्वारा उसे केवल इस कारण कि वह पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल (अभियुक्त सं. 1) का भूतपूर्व कर्मचारी था, गलत रूप से दोषसिद्ध किया गया है । इस अपीलार्थी-अभियुक्त के बताने पर खाली कारतूसों की बरामदगी मात्र का तब कोई महत्व नहीं है जब ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जो उसे अपराध में भाग लेने की बात से जोड़ता हो । इसके अतिरिक्त, घटनास्थल से खाली कारतूसों की बरामदगी ही अत्यंत संदेहास्पद है क्योंकि उन्हें आसानी से नष्ट किया जा सकता था ।

विद्वान् काउंसेल ने इस दलील के समर्थन में कि किसी शृंखलाबद्ध साक्ष्य के अभाव में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध नहीं किया जा सकता है, **मणी** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया । विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि अपीलार्थी के विरुद्ध मामला अधिक से अधिक भारतीय दंड संहिता की धारा 201 के परे नहीं हो सकता है जिसके लिए अधिकतम दंडादेश दस वर्ष है । अपीलार्थी पहले ही 9½ वर्ष का कारावास भुगत चुका है ।

16. अभियुक्त सं. 4-राकेश आनंद और अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अभियोजन पक्ष अभियुक्त सं. 4 और 7 के संबंध में उनकी सदोषिता को सिद्ध करने के लिए घटनाओं की शृंखला को पूर्ण करने में असफल रहा है । दोनों निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करके गंभीर गलती की है कि मृतक का शव तारीख 20 नवम्बर, 2005 को पूर्वाह्न में 8.00 बजे इन अपीलार्थियों के कब्जे से बरामद किया गया था । अभियोजन पक्ष के अनुसार, इन अपीलार्थियों की गिरफ्तारी के समय मृतक के शव से रक्त बह रहा था, किंतु स्वीकृत रूप से उनके कपड़ों पर कोई रक्त नहीं पाया गया था । उनके कब्जे से कोई आयुध, चालन अनुज्ञप्ति, धन इत्यादि नहीं पाया गया था । इन दोनों अभियुक्तों और अन्य अभियुक्तों के बीच कोई सांठगांठ साबित नहीं की गई है । इसके अतिरिक्त, अभियोजन के इस वृत्तांत का समर्थन करने के लिए कि मृतक का शव इन दोनों अभियुक्तों के कब्जे से बरामद किया गया था, किसी स्वतंत्र साक्षी की परीक्षा नहीं कराई गई थी । अभिकथित रूप से, उस सुसंगत समय पर 100 से 150 लोगों की भीड़ थी, किंतु अभियोजन के वृत्तांत को साबित करने के लिए किसी स्वतंत्र साक्षी की परीक्षा नहीं कराई गई है, और किसी स्वतंत्र साक्षी की परीक्षा न कराने के कारण संस्वीकृति कथन और उसके परिणामस्वरूप की गई बरामदगी पर विश्वास नहीं किया जा सकता है । इसलिए विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि न्याय के हित में ये अपीलें मंजूर की जाएं, अन्यथा अपीलार्थियों को अपूरणीय अन्याय, हानि और क्षति झेलने पड़ेंगे ।

17. अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अपीलार्थी अर्बन को-आपरेटिव बैंक में मात्र एक कर्मचारी था और मृतक से उसकी पहले से कोई दुश्मनी नहीं थी और उसकी हत्या करने का कोई हेतु नहीं था क्योंकि पेट्रोल पम्प के कारबार में

---

[1] (2009) 17 एस. सी. सी. 273.

उसका कोई हित नहीं था । उसका नाम न तो संस्वीकृति कथन और न ही प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में आया है । अभियोजन पक्ष के अनुसार, अभियुक्त सं. 8 की लाइसेंसशुदा रिवाल्वर तारीख 22 नवम्बर, 2005 को बरामद की गई थी, किंतु अन्वेषक अधिकारी को इसके प्रयोग के बारे में विनिर्दिष्ट ज्ञान होने के बावजूद इसे घटनास्थल पर मुद्राबंद तक नहीं किया गया था । इसे मुद्राबंद किए जाने की तारीख, समय और स्थल को सिद्ध करने के लिए कोई विनिर्दिष्ट साक्ष्य नहीं है । अन्वेषक अधिकारी के केवल इस मौखिक प्रकथन से कि आयुध उसके द्वारा कुछ दिन बाद मुद्राबंद किया गया था, रिवाल्वर या गोली बदले जाने और तद्द्वारा अभियुक्त को अपराध में गलत रूप से आलिप्त किए जाने की संभाव्यता दर्शित होती है । षड्यंत्र करने के बारे में भी इस अपीलार्थी के विरुद्ध कोई साक्ष्य नहीं है और न ही आशय, ज्ञान या अपराध कारित करने के लिए अन्य अभियुक्तों के साथ इस अपीलार्थी की मुलाकात का कोई साक्ष्य है । अन्वेषक अधिकारी ने प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया कि अपीलार्थी ने न तो अपनी रिवाल्वर का प्रयोग किया था और न ही घटना के समय मौजूद था । अपीलार्थी द्वारा मुख्य अभियुक्त को अपनी रिवाल्वर देने का भी कोई आत्यंतिक साक्ष्य नहीं है । अपीलार्थी राजनैतिक दल का सक्रिय कार्यकर्ता था और उसके राजनैतिक विरोधियों की उसके प्रति दुश्मनी होने के कारण उसे मिथ्या रूप से फंसाया गया, किंतु निचले न्यायालय इस पहलू पर विचार करने में असफल रहे हैं ।

18. सभी अभियुक्त-अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि निचले न्यायालयों ने अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके गंभीर गलती की है । आक्षेपित निर्णय विधि के ठीक सिद्धांतों पर आधारित नहीं है । यह न केवल पूरी तरह से गलत है, अपितु अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के विरुद्ध भी है । अभिकथित परिस्थितियों से घटनाओं की पूर्ण शृंखला का गठन नहीं होता है जो अपराध कारित करने में अभियुक्तों को जोड़ती हो, और अभियोजन पक्ष द्वारा अपराध में आलिप्त करने वाली परिस्थितियों को विधि के अनुसार साबित नहीं किया गया है, इसलिए आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाना चाहिए ।

19. दूसरी ओर, राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अपर महाधिवक्ता श्री गौरव भाटिया ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया और यह दलील दी कि यह एक ऐसा दुर्भाग्यशाली मामला है जिसमें अभियुक्तों

द्वारा इंडियन आयल कारपोरेशन के एक अधिकारी की ईमानदारीपूर्वक अपने कर्तव्यों का पालन करने के कारण नृशंसतापूर्वक हत्या कर दी गई । इस घटना से संपूर्ण राष्ट्र को सदमा पहुंचा है और हजारों महत्वाकांक्षी अधिकारियों का विश्वास ढगमगाया है । उसने यह दलील दी कि अभियुक्त सं. 1 पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल को मृतक के प्रति विद्वेष हो गया था क्योंकि उसने उसके द्वारा चलाए जा रहे पेट्रोल पम्प का तारीख 13 सितम्बर, 2005 को निरीक्षण किया था और कतिपय अनियमितताएं उजागर की थीं, और इंडियन आयल कारपोरेशन को दी गई उसकी सूचना (प्रदर्श क-34) के आधार पर पम्प के विक्रय और आपूर्ति निलंबित कर दी गई थीं । तथापि, तारीख 19 अक्तूबर, 2005 को जुर्माने का संदाय करने के पश्चात् ही आपूर्ति प्रत्यावर्तित की गई थीं । मृतक ने पुनः तारीख 19 अक्तूबर, 2005 को निरीक्षण करने के लिए अभियुक्त के पेट्रोल पम्प का दौरा किया था और उसके पश्चात् उसे जीवित नहीं देखा गया ।

20. अभियोजन पक्ष की ओर से विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने यह दलील दी कि अपराध में आलिप्त करने वाली वस्तुओं में अभियुक्त सं. 1 की लाइसेंसशुदा पिस्तौल से चलाए गए कारतूसों के खोल (प्रदर्श 13), अभियुक्त सं. 1 के पेट्रोल पम्प से बरामद की गई रक्तरंजित मिट्टी (प्रदर्श क-60) सम्मिलित हैं और उसके बताने पर मृतक का मोबाइल उपकरण (प्रदर्श क-21) जंगल से बरामद किया गया था । प्राक्षेपिकी विज्ञानी ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया है कि मृतक के शरीर में पाई गई गोलियां अभियुक्त सं. 1 की लाइसेंसशुदा पिस्तौल से चलाई गई थीं । पेट्रोल पम्प द्वारा कारित की गई अनियमितताएं एकदम स्पष्ट थीं क्योंकि कतिपय महत्वपूर्ण कागजात और अन्य सामग्री, जिन्हें आवश्यक रूप से शोरूम में रखा जाना अपेक्षित था, उस समय वहां नहीं पाई गईं जब पुलिस ने इंडियन आयल कारपोरेशन के पदधारी तथा बाट और माप विभाग के पदधारी के साथ वहां निरीक्षण किया । इसके अतिरिक्त, वहां मशीनों और टैंक की मुद्राओं के साथ छेड़छाड़ करने के लिए प्रयुक्त की गई कुछ वस्तुएं पाई गई थीं ।

21. विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने यह दलील दी कि अभियुक्त राकेश आनंद (अभियुक्त सं. 4) और विवेक शर्मा (अभियुक्त सं. 7) की अन्तर्ग्रस्तता सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित की गई है क्योंकि वे गश्ती दल के पुलिस पदधारियों अभि. सा. 1-हैड कांस्टेबल राम भवन, अभि. सा. 2-कांस्टेबल आशा राम द्वारा उस समय पकड़े गए थे जब वे

मृतक के शव को अपनी कार में ले जा रहे थे । इस तथ्य की संपुष्टि स्वतंत्र साक्षी धनराज साहनी-अभि. सा. 3, मृतक के मकान मालिक द्वारा की गई है । अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री की अंतर्ग्रस्तता सह-अभियुक्त अर्थात् अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा और अभियुक्त सं. 4-राकेश कुमार आनंद के साथ-साथ अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा की भी संस्वीकृति से स्पष्ट है, जिसने यह संस्वीकृति की है कि अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री द्वारा अपराध कारित करने के लिए उसकी रिवाल्वर प्रयुक्त की गई थी । उसकी गिरफ्तारी के पश्चात् उसने अपराध कारित की संस्वीकृति की थी और अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा की रिवाल्वर से चलाए गए चार कारतूसों के खोल की बरामदगी कराई थी । अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री को अभियुक्त सं. 4-राकेश कुमार आनंद के साथ वर्ष 1988 में भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध के लिए भी आरोप-पत्रित किया गया था और यह बात उनके संबंधों को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है । अभियुक्त सं. 5-लाला गिरी की अंतर्ग्रस्तता अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा और अभियुक्त सं. 4-राकेश कुमार आनंद द्वारा की गई संस्वीकृति से उजागर हुई, जिनके बताने पर अभियुक्त सं. 5-लाला गिरी को तारीख 22 नवम्बर, 2005 को रेलवे स्टेशन से उस समय गिरफ्तार किया गया जब वह फरार होने की कोशिश कर रहा था । अभियुक्त सं. 5-लाला गिरी ने पेट्रोल पम्प के पीछे से तीन कारतूसों और पेट्रोल पम्प के टैंक से तीन और कारतूसों की बरामदगी कराई । इससे यह बात पूरी तरह से स्पष्ट होती है कि अभियुक्त सं. 5-लाला गिरी ने षड्यंत्र करने और अपराध कारित करने में सक्रिय भूमिका निभाई थी । अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा को अभियुक्त सं. 1-पवन कुमार और अन्य अभियुक्तों के साथ उस समय गिरफ्तार किया गया था जब वह तारीख 22 नवम्बर, 2005 को उन्हें अपनी कार में ले जा रहा था और उसके कब्जे से एक रिवाल्वर के साथ-साथ दो जिंदा और चार अनदगे कारतूस बरामद किए गए थे । ये चार कारतूस अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री के बताने पर बरामद किए गए थे । इस प्रकार, अभियुक्तों के संस्वीकृति कथनों और उनके बताने पर की गई बरामदगियों को ध्यान में रखते हुए, अपराध में उनकी अंतर्ग्रस्तता को अभियोजन पक्ष द्वारा सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है । इसलिए विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य के मूल्यांकन करने के पश्चात् निकाले गए एक जैसे निष्कर्षों में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

22. विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने **दलबीर कौर** बनाम **पंजाब राज्य**[1] और **शिवनारायण लक्ष्मीनारायण जोशी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] वाले मामलों का अवलंब लेकर अंततः यह दलील दी कि जब अभियुक्तों के विरुद्ध साक्ष्य का संचयी प्रभाव विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के लिए इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पर्याप्त रूप से विश्वसनीय रहा है कि जिस अपराध से अभियुक्त आरोपित किए गए थे, वे उनके विरुद्ध सभी युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध होते हैं, इसलिए जब विधि का सारवान् प्रश्न अंतर्वलित न हो इस न्यायालय को निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए तथ्य के एक जैसे निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने से प्रवरित रहना चाहिए ।

23. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना और अभिलेख पर की सामग्री का सावधानीपूर्वक परिशीलन किया ।

24. राज्य की ओर से विद्वान् अपर महाधिवक्ता की यह दलील कि विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित और उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट तथ्य विषयक समवर्ती निष्कर्षों को देखते हुए इस न्यायालय को ऐसे निष्कर्षों में तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि विधि का सारवान् प्रश्न अंतर्वलित न हो । उपरोक्त दलील पर विचार करने से पूर्व, **दलबीर कौर** बनाम **पंजाब राज्य** (उपरोक्त) और **शिवनारायण लक्ष्मीनारायण जोशी** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** (उपरोक्त) वाले मामलों में के निर्णयों को निर्दिष्ट करना उचित है, जिनमें इस न्यायालय ने मार्गदर्शक सिद्धांत अधिकथित किए हैं । **दलबीर कौर** (उपरोक्त) वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "8. इस प्रकार, विशेष इजाजत लेकर की गई दांडिक अपील में इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किए जाने को लागू होने वाले सिद्धांतों को संक्षेप में इस प्रकार कथित किया जा सकता है –
>
> (1) यह न्यायालय तथ्य विषयक समवर्ती निष्कर्ष में विशुद्ध साक्ष्य की विवेचना के आधार पर हस्तक्षेप नहीं करेगा, भले ही उसे साक्ष्य के बारे में भिन्न मत अपनाना हो ;
>
> (2) न्यायालय मामूली तौर पर साक्ष्य का पुनः अवधारण या पुनर्विलोकन तभी करेगा जब कि उच्च न्यायालय का

---

[1] [1977] 3 उम. नि. प. 489 = (1976) 4 एस. सी. सी. 158.

[2] (1980) 2 एस. सी. सी. 465.

मूल्यांकन विधि या प्रक्रिया संबंधी किसी गलती के कारण दूषित हो या अभिलेख की किसी गलती या साक्ष्य के बारे में भ्रम पर आधारित हो या साक्ष्य से विसंगत हो, उदाहरणार्थ, जहां आंखों देखा साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से पूर्णतया विसंगत हो और इसी प्रकार की अन्य बातों के कारण दूषित हो ;

(3) यह न्यायालय उच्च् न्यायालय के मत के स्थान पर अपना मत प्रतिस्थापित करने की दृष्टि से साक्ष्य की विश्वसनीयता पर विचार नहीं करेगा ;

(4) यह न्यायालय उस दशा में हस्तक्षेप करेगा जब कि उच्च न्यायालय ने न्यायिक पद्धति, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों या निष्पक्ष सुनवाई की अवहेलना करते हुए तथ्य विषयक निष्कर्ष निकाला हो या विधि या प्रक्रिया के आज्ञापक उपबंधों के उल्लंघन में कार्य किया हो जिसके परिणामस्वरूप अभियुक्त पर गंभीर प्रभाव पड़ा हो या उसके प्रति गंभीर अन्याय किया गया हो ;

(5) यह न्यायालय उस दशा में भी हस्तक्षेप कर सकता है जब कि साबित तथ्यों के आधार पर विधि संबंधी गलत अनुमान लगाया गया हो या जहां उच्च न्यायालय के निष्कर्ष प्रकट रूप से अनुचित हों और किसी साक्ष्य पर आधारित न हों ।

ऐसा नियम अधिकथित करना अति कठिन है जो सामान्य रूप से लागू हो, किंतु ऊपर उल्लिखित सिद्धांत और इस न्यायालय की ऊपर उद्धृत नज़ीरों में वर्णित सिद्धांत विशेष इजाजत लेकर की गई दांडिक अपील में सुनवाई के समय यह न्यायालय साक्ष्य और उच्च न्यायालय के निर्णय की जांच यह अभिनिर्धारित करने के परिसीमित प्रयोजन से करता है कि क्या उच्च न्यायालय ने ऊपर प्रतिपादित सिद्धांतों का अनुसरण किया है या नहीं । जहां न्यायालय यह देखता है कि उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विभिन्न सिद्धांतों का कोई उल्लंघन नहीं किया है और सही दृष्टिकोण अपनाया था तथा साक्ष्य में की उस महत्वपूर्ण बातों की उपेक्षा या अवहेलना नहीं की है जो कि अभियोजन पक्ष के मामले को विनष्ट कर देती है वहां मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए साक्ष्य के अधिमूल्यन के आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए तथ्य

विषयक निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा ।

9. यदि ऊपर प्रतिपादित सिद्धांतों का पक्षकारों के काउंसेलों द्वारा कड़ाई से अनुपालन किया जाए और वे अपने तर्कों को उन्हीं सिद्धांतों के भीतर सीमित रखें तथा इस न्यायालय के विनिश्चयों द्वारा तथ्य विषयक समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने की उसकी शक्ति पर अधिरोपित परिसीमाओं का उल्लंघन किए बिना इस सुस्थित और युक्तिपूर्ण न्यायिक पद्धति में सहयोग दें तो काफी समय, शक्ति और व्यय बचाया जा सकता है ।"

शिवनारायण लक्ष्मीनारायण जोशी (उपरोक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है :–

".....अभिलेख और उच्च न्यायालय के निर्णय का परिशीलन करने पर हमारी स्पष्ट रूप से यह राय है कि इन अपीलों को तथ्य विषयक निष्कर्षों द्वारा तय किया गया है । यह सुस्थिर है कि यह न्यायालय विशेष इजाजत लेकर की गई दांडिक अपील में तथ्य विषयक समवर्ती निष्कर्षों में तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि निष्कर्ष विधि की किसी गंभीर त्रुटि या किसी ऐसी त्रुटि से दूषित न हों, जिससे न्याय की गंभीर और सारवान् हानि हुई हो । निचले न्यायालयों के निर्णय का परिशीलन करने के पश्चात् हम उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से पूर्णतः सहमत हैं और ऐसी कोई विशेष परिस्थितियां नहीं पाते हैं जिससे कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आदेश में हमारा हस्तक्षेप अपेक्षित हो ।"

इसलिए इन अपीलों में जो मूल्यांकन किया जाना है यह है कि क्या कोई निष्कर्ष विधि की गंभीर त्रुटि या ऐसी त्रुटि से दूषित है जिससे न्याय की गंभीर और सारवान् हानि हुई है और इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक है ।

25. इस मामले के तथ्यों पर विचार करते हैं । घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं है । अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा और अभियुक्त सं. 4-राकेश कुमार आनंद द्वारा हैड कांस्टेबल राम भवन सिंह-अभि. सा. 1 को किए गए संस्वीकृति कथन के आधार पर दर्ज की गई थी । उन्होंने अपराध करने और अन्य अभियुक्तों के अंतर्ग्रस्त होने के बारे में अभि. सा. 1 के समक्ष उस समय संस्वीकृति की थी जब उसने एक

अन्य पुलिस कांस्टेबल के साथ कार को पकड़ा था जब वे मृतक के शव को ठिकाने लगाने के लिए ले जा रहे थे । अपराध करने और अन्य अभियुक्तों के अंतर्ग्रस्त होने के बारे में उनके द्वारा किए गए संस्वीकृति कथन के आधार पर अभियुक्त गिरफ्तार किए गए और उनके बताने पर बरामदगियां की गईं । अपीलार्थियों की ओर से दी गई दलील यह है कि पुलिस को की गई संस्वीकृति साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के अनुसार साक्ष्य में ग्राह्य नहीं है । विधि का यह स्थिर सिद्धांत है कि अभियुक्त द्वारा पुलिस के समक्ष किए गए कथन, जो संस्वीकृति की कोटि में आते हैं, साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के अधीन वर्जित हैं । तथापि, इस प्रतिषेध को कुछ सीमा तक धारा 27 द्वारा हटाया गया है । यह धारा निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "27. **अभियुक्त से प्राप्त जानकारी में से कितनी साबित की जा सकेगी** – परंतु जब किसी तथ्य के बारे में यह अभिसाक्ष्य दिया जाता है कि किसी अपराध के अभियुक्त व्यक्ति से, जो पुलिस आफिसर की अभिरक्षा में हो, प्राप्त जानकारी के परिणामस्वरूप उसका पता चला है, तब ऐसी जानकारी में से उतनी, चाहे वह संस्वीकृति की कोटि में आती हो या नहीं, जितनी तद्द्वारा पता चले हुए तथ्य से स्पष्टतया संबंधित है, साबित की जा सकेगी ।"

26. साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 को ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त द्वारा दी गई केवल उतनी जानकारी, जिसके परिणामस्वरूप किसी तथ्य का पता चलता है, साक्ष्य में ग्राह्य होगी, चाहे ऐसी जानकारी संस्वीकृति की कोटि में आती है या नहीं । साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 में सन्निहित मूल धारणा पश्चात्वर्ती घटनाओं द्वारा पुष्टि का सिद्धांत है । यह धारणा इस सिद्धांत पर आधारित है कि यदि किसी कैदी से अभिप्राप्त किसी जानकारी के आधार पर की गई तलाशी में किसी तथ्य का पता चलता है, तो ऐसा प्रकटीकरण इस बात की गांरटी है कि कैदी द्वारा दी गई जानकारी सत्य है । ऐसी जानकारी संस्वीकृति या निर्दोषिता की प्रकृति की हो सकती है, किंतु यदि इसके परिणामस्वरूप किसी तथ्य का पता चलता है तो यह विश्वसनीय जानकारी बन जाती है (**महाराष्ट्र राज्य** बनाम **दामू**[1] वाला मामला देखें) ।

27. साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन यथा अनुध्यात "पता

---

[1] (2000) 6 एस. सी. सी. 269.

चले तथ्य'' का उस स्थल से गहरा संबंध होता है जहां से वस्तु निकालकर दी जाती है और अभियुक्त को उसकी जानकारी होना, किंतु दी गई जानकारी सुभिन्न रूप से अवश्य उसी आशय से संबंधित होनी चाहिए ।

28. वर्तमान मामले में, अभियुक्त सं. 4 और 7 ने अपने सह-अभियुक्तों के नाम उजागर किए और उनके बताने पर अपराध में आलिप्त करने वाली विभिन्न सामग्री बरामद की गईं, जिनमें पिस्तौल, कारतूस, गोलियां, रक्तरंजित वस्तुएं सम्मिलित हैं । अपराध में आलिप्त करने वाली इन सामग्रियों के बारे में जानकारी के संबंध में उचित स्पष्टीकरण दिए बिना अपनी भूमिका से केवल इनकार करने से अभियुक्तों की अपराध में अंतर्ग्रस्तता के लिए निचले न्यायालयों द्वारा की गई उपधारणा न्यायोचित हो जाती है । निचले न्यायालयों द्वारा अभियुक्तों को उनकी संस्वीकृति के आधार पर दोषसिद्ध नहीं किया गया है, अपितु यह दांडिक विधि को लागू करने के लिए जानकारी का केवल एक स्रोत है । इसलिए अभियुक्त साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के अधीन आश्रय नहीं ले सकते हैं ।

29. अपीलार्थियों की अगली दलील यह है कि अभियोजन पक्ष अपराध कारित करने के लिए अभियुक्तों के हेतु को साबित नहीं कर सका । हम यह महसूस करते हैं कि मृतक की निर्मम हत्या के लिए हेतु, जो अभियोजन पक्ष द्वारा सामने लाया गया है, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री को ध्यान में रखते हुए विश्वसनीय है । अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करते हुए हमारे मस्तिष्क में कोई संदेह नहीं है कि मृतक मंजूनाथ ने मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स का तारीख 13 सितम्बर, 2005 को निरीक्षण किया था और अनियमितताएं पाए जाने पर उसने इनके बारे में इंडियन आयल कारपोरेशन को रिपोर्ट दी थी और उसकी प्रेरणा पर अभियुक्त सं. 1 के पेट्रोल पम्प के विक्रय और आपूर्ति (प्रदर्श क-34) निलंबित कर दिए गए थे । इंडियन आयल कारपोरेशन ने इसके पश्चात् अभियुक्त सं. 1 के पिता को कारण बताओ सूचना जारी की । उसके पिता ने अपने उत्तर (प्रदर्श 29 और 30) में यह स्वीकार किया कि पेट्रोल पम्प की देखरेख उसके पुत्र पवन कुमार मित्तल द्वारा की जा रही थी । अभिलेख से यह दर्शित होता है कि अभियुक्त सं. 1 ने 50,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय तारीख 17 अक्तूबर, 2005 के डी. डी. सं. 083226 और 25,000/- रुपए का एक अन्य संदाय तारीख 17 अक्तूबर, 2005 के डी. डी. सं. 083227 (प्रदर्श क-29-30) द्वारा किया था । यद्यपि विक्रय और आपूर्ति तारीख 19 अक्तूबर, 2005 को फिर से चालू कर दिए गए थे, तो भी मृतक ने तारीख 19 नवम्बर, 2005 को, उसके

मृत पाए जाने से एक दिन पूर्व, पेट्रोल पम्प का पुनः निरीक्षण किया था । यह आंशका करते हुए कि मृतक फिर से इंडियन आयल कारपोरेशन को आपूर्ति में की अनियमितताओं का अभिकथन करते हुए रिपोर्ट देगा और उस स्थिति में अभियुक्त सं. 1 को या तो जुर्माने का संदाय करने के लिए कहा जाएगा या उसकी अनुज्ञप्ति निलंबित की जा सकती है, इसलिए उसे उसके प्रति विद्वेष हो गया और उसने अन्य अभियुक्तों की सहायता से मृतक की हत्या कर दी । यह तथ्य कि दुर्भाग्यशाली दिन मृतक ने अभियुक्त सं. 1 के पेट्रोल पम्प का दौरा किया था, जहां उसकी निर्ममतापूर्वक हत्या कर दी गई, मैसर्स अग्रवाल ब्रदर्स पेट्रोल पम्प के प्रबंधक अभि. सा. 4-अशोक कुमार अग्रवाल के साक्ष्य से स्पष्ट होता है, जिसने अपने साक्ष्य में यह अभिसाक्ष्य दिया कि अभियुक्त सं. 1 अभिकथित घटना से पूर्व तारीख 19 नवम्बर, 2005 को मृतक के अवस्थान और गतिविधि के बारे में पूछताछ कर रहा था । मैसर्स अग्रवाल ब्रदर्स के अभि. सा. 5-अनुराग अग्रवाल और मैसर्स अलंकार होटल के प्रबंधक अभि. सा. 8-रमेश चन्द्र पांडेय ने भी यह अभिसाक्ष्य दिया कि मृतक घटना के दिन गोला में था । अभि. सा. 5 ने भी यह अभिसाक्ष्य दिया कि मृतक उसके पम्प से अपराह्न में 9.30 बजे मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स पर गया था । मृतक के व्यवहित ज्येष्ठ अधिकारी अभि. सा. 17-आर. के. जुस्ती ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि मृतक तारीख 19 नवम्बर, 2005 को निरीक्षण के लिए मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स पर गया था । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि उसकी मौजूदगी में मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के टैंक से तीन कारतूस बरामद किए गए थे । इस साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि दुर्भाग्यशाली दिन मृतक मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स पर गया था और उसके पश्चात् वह मृत पाया गया । इस तथ्य पर विचार करते हुए कि मृतक की प्रेरणा पर इंडियन आयल कारपोरेशन ने ईंधन के वितरण में पाई गई अनियमितताओं के लिए अभियुक्त सं. 1 पर जुर्माना अधिरोपित किया था और इस वजह से उसे जुर्माने का संदाय करना पड़ा था, इसलिए इस बात की पूरी संभाव्यता है कि मृतक के प्रति अभियुक्त सं. 1 को विद्वेष था और जब मृतक ने तारीख 19 नवम्बर, 2005 को उसके पम्प का दौरा किया तो यह आशंका करते हुए कि मृतक फिर से पम्प का निरीक्षण करेगा और अनियमितताओं की रिपोर्ट देगा और उस स्थिति में या तो उसे जुर्माने का संदाय करना पड़ेगा या इसके परिणामस्वरूप उसकी अनुज्ञप्ति रद्द कर दी जाएगी, अभियुक्त सं. 1 ने अन्य अभियुक्तों की सहायता से मृतक को समाप्त करने के लिए षड्यंत्र किया और तद्नुसार उसकी हत्या कर दी ।

30. हम निचले न्यायालयों से पूरी तरह से सहमत हैं कि अभियुक्त ने मृतक की हत्या का अपराध कारित करने के लिए षड्यंत्र किया था । मृतक को समाप्त करने के लिए अभियुक्तों के बीच सांठगांठ को अभियोजन पक्ष द्वारा सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया गया है । अभियुक्त सं. 1-पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल पम्प, जहां घटना घटित हुई, का स्वामी/भारसाधक होने के कारण मृतक को समाप्त करने के अपराध में हितबद्ध पक्षकार है, क्योंकि उसकी प्रेरणा पर आपूर्ति निलंबित की गई थीं और जुर्माने का संदाय करने के उपरांत ही आपूर्ति प्रत्यावर्तित की गई थीं । अभियुक्त सं. 4-राकेश आनंद और अभियुक्त सं. 7-विवेक शर्मा को अभि. सा. 1-हैड कांस्टेबल और एक अन्य पुलिस कांस्टेबल द्वारा उस समय पकड़ा गया था जब वे अपनी कार में मृतक के शव को ठिकाने लगाने की कोशिश कर रहे थे । उन्होंने अभियुक्त सं. 5-लाला गिरी की अंतर्ग्रस्तता के बारे में संस्वीकृति की । लाला गिरी (अभि.-5) पवन कुमार (अभि.-1) का भूतपूर्व कर्मचारी है और उसके बताने पर पेट्रोल पम्प से तीन गोलियां बरामद की गई थीं और इससे घटनास्थल पर और घटना के समय उसकी मौजूदगी साबित होती है । अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री की अंतर्ग्रस्तता इस तथ्य से अभिनिश्चित होती है कि उसने संजय अवस्थी के मामा के मकान से चार कारतूसों की बरामदगी कराई थी । देवेश अग्निहोत्री (अभि.-2) का पूर्व में अभियुक्त सं. 4-राकेश आनंद के साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन एक मामले में विचारण किया गया था, जिससे षड्यंत्रकारियों के साथ उसकी पूर्ववर्ती सहचारिता साबित होती है, हालांकि यह बात दोषसिद्धि का आधार नहीं हो सकती । अभियुक्त सं. 2-देवेश अग्निहोत्री के बताने पर अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा को अभियुक्त सं. 1-मोनू मित्तल के साथ उस समय गिरफ्तार किया गया था जब वह उसे अपनी कार में ले जा रहा था और इससे मुख्य अभियुक्त के साथ उसकी सहचारिता साबित होती है । उसकी गिरफ्तारी के समय एक रिवाल्वर दो जिंदा कारतूसों के साथ बरामद की गई थी । अभियुक्त सं. 1-पवन कुमार **उर्फ** मोनू मित्तल की एक राइफल (प्रदर्श क-18) भी अभियुक्त सं. 8-राजेश वर्मा के मकान से बरामद की गई थी । इस प्रकार, अभियुक्तों के बीच सांठगांठ तथा अपराध में उनकी भागीदारी युक्तियुक्त संदेह के परे पूरी तरह साबित होती है और हम अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं पाते हैं जिससे यह सुझाव दिया जा सके कि पुलिस द्वारा अभियुक्तों को अनावश्यक रूप से फंसाया गया है ।

31. घटनास्थल के विषय में भी हमारे मस्तिष्क में कोई संदेह नहीं है । अभियुक्त की ओर से हाजिर होने वाले काउंसेल द्वारा घटनास्थल के विषय में इस आधार पर संदेह पैदा करने का प्रयास किया गया कि अपराध करने में प्रयोग की गई गोलियों की संख्या मृतक को लगी गोलियों की संख्या के अनुपात में नहीं हैं । अभिलेख पर मैसर्स अग्रवाल ब्रदर्स पेट्रोल पम्प के अनुराग अग्रवाल-अभि. सा. 5 के साक्ष्य में यह बात आई है कि मृतक ने तारीख 19 नवम्बर, 2005 को अपराह्न में 9.30 बजे उसे यह सूचित किया था कि वह मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के पास अपने मापन उपकरण लेने जा रहा है जिन्हें वह वहां भूल आया है । मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के टैंक से और उनके पेट्रोल पम्प के पीछे से गोलियों के साथ-साथ रक्तरंजित कपड़ों की बरामदगी संचयी रूप से मैसर्स मित्तल आटोमोबाइल्स के घटनास्थल होने की बात सिद्ध होती है । बंदूक से गोली चलाने के प्रत्येक मामले में यह अपेक्षित नहीं है कि प्रत्येक गोली निशाने पर लगे । मृतक या विपदग्रस्त द्वारा अपने आप को बरस रही गोलियों से बचाने का प्रयास किया जा सकता है और उस दशा में गोलियां निशाने पर न लगें । केवल इस कारण कि बंदूक से चलाई गई सभी गोलियां निशाने पर नहीं लगी थीं और घटनास्थल से बरामद नहीं हुई थीं, यह निष्कर्ष निकालने का आधार नहीं है कि घटना घटित नहीं हुई थी ।

32. जहां तक अभियोजन साक्षियों के कथनों में विरोधाभास होने के अभिकथन का संबंध है, हम ऐसा कोई बड़ा विरोधाभास नहीं पाते हैं जिस पर हमारे लिए ध्यान देना या विचार करना आवश्यक हो । जब किसी साक्षी की विस्तारपूर्वक परीक्षा की जाती है, तो उससे कुछ फर्क हो जाना संभव सी बात है । सच्चे से सच्चा साक्षी का कुछ न कुछ अनमेल ब्यौरे देने से बच पाना संभव नहीं है । किंतु न्यायालयों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि किसी साक्षी के साक्ष्य में आए फर्कों को केवल तभी नकारना चाहिए जब वे उसके बयान की सत्यता से इतने बेमेल हों कि न्यायालय उसके साक्ष्य को नकारने में न्यायोचित हो (**रम्मी** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाला मामला देखें) । इस बात में कोई संदेह नहीं है कि जब दो मत संभव हों, तो वह मत अपनाया जाना चाहिए जो अभियुक्त के पक्ष में हो और अभियुक्त को संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त किया जाना चाहिए । किंतु प्रस्तुत मामले में अभिलेख पर का साक्ष्य विश्वसनीय और संगत है और केवल एक ही मत है, जो अभियुक्त की दोषिता को इंगित करता है ।

---

[1] (1999) 8 एस. सी. सी. 649.

यद्यपि अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने साक्षियों के साक्ष्य में छुट-पुट फर्कों का उल्लेख किया है, किंतु इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णय को ध्यान में रखते हुए हमारी यह सुविचारित राय है कि ऐसे छुट-पुट फर्क ऐसे अन्य ठोस पारिस्थितिक साक्ष्य के आड़े नहीं आने चाहिएं जिन पर संचयी रूप से एकसाथ विचार करने पर घटनाओं की पूर्ण शृंखला बनती है और अपराध कारित करने में अभियुक्तों की दोषिता इंगित होती है ।

33. ऐसे मामलों में, जहां प्रत्यक्ष साक्ष्य मिलना दुर्लभ है, वहां अभियोजन का पक्षकथन साबित करने का भार हेतु और पारिस्थितिक साक्ष्य पर टिका होता है । घटनाओं की शृंखला का ऐसे मामलों में प्रमुख महत्व रहता है । तथ्यात्मक पहलुओं का विश्लेषण करने से पूर्व यह उल्लेख किया जा सकता है कि किसी अपराध को साबित किए जाने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि अपराध को अवश्य ही कारित करते हुए देखा गया होना चाहिए और सभी परिस्थितियों में, अवश्य ही उन व्यक्तियों की न्यायालय के समक्ष परीक्षा करके, जिन्होंने इसे कारित होते हुए देखा था, प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य द्वारा साबित किया जाना चाहिए । अपराध को पारिस्थितिक साक्ष्य से भी साबित किया जा सकता है । मुख्य तथ्य या सिद्ध तथ्य को अप्रत्यक्ष रूप से साक्ष्यिक तथ्यों से निकाले गए विभिन्न निष्कर्षों के माध्यम से साबित किया जा सकता है । दूसरे शब्दों में, पारिस्थितिक साक्ष्य का विवाद्यक प्रश्न से सीधा संबंध नहीं होता है किंतु ऐसे विभिन्न अन्य तथ्यों का साक्ष्य अंतर्विष्ट होता है जो विवाद्यक तथ्य से इतने गहरे रूप से संबद्ध होते हैं कि एक साथ विचार करने पर उनसे परिस्थितियों की एक ऐसी शृंखला बनती है जिससे मुख्य तथ्य की विद्यमानता का विधिक रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है या उपधारणा की जा सकती है (**बोधराज** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य**[1] वाला मामला देखें) । प्रस्तुत मामले में, अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से, जैसी कि ऊपर चर्चा की गई है, घटनाओं की शृंखला साबित होती है जो अभियुक्तों को अपराध कारित करने के दोष से जोड़ती है । अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर लाया गया संपूर्ण साक्ष्य विश्वासप्रद ही नहीं अपितु भरोसेमंद भी है । यदि अभि. सा. 1 और अभि. सा. 2 के समक्ष की गई अभियुक्त सं. 4 और 7 की संस्वीकृति को, जो कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 द्वारा वर्जित है, विचार में न लिया जाए तो भी अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया अन्य साक्ष्य अभियुक्तों को अपराध का

---

[1] (2002) 8 एस. सी. सी. 45.

दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त है ।

34. इस न्यायालय ने सतत रूप से यह मत अपनाया है कि जहां कोई मामला पूरी तरह से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित हो, वहां दोषिता का निष्कर्ष केवल तभी न्यायोचित हो सकता है जब अपराध में आलिप्त करने वाले सभी तथ्य और परिस्थितियां अभियुक्त की निर्दोषिता या किसी अन्य व्यक्ति की दोषिता के बेमेल पाए जाते हैं । वर्तमान मामले में, अभिलेख पर के साक्ष्य की संवीक्षा करने के पश्चात् हम विश्वस्त हैं कि अभियोजन पक्ष ने घटनाओं की पूर्ण शृंखला को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया है जो अभियुक्तों की दोषिता को इंगित करती है ।

35. इस प्रकार, उपरोक्त परिस्थितियों के साथ-साथ घटनाओं की पूर्ण शृंखला को ध्यान मे रखते हुए इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में तनिक भी संदेह नहीं है कि अभियोजन पक्ष अभियुक्तों के विरुद्ध अपने पक्षकथन को सभी युक्तियुक्ति संदेह के परे साबित करने में सफल रहा है ।

36. संपूर्ण मामले की समग्रता पर विचार करते हुए हम इन अपीलों में ऐसा कोई गुणागुण नहीं पाते हैं जिससे हमारा हस्तक्षेप आवश्यक हो । परिणामतः, ये अपीलें असफल हैं और खारिज की जाती हैं ।

अपीलें खारिज की गईं ।

जस.

[2015] 2 उम. नि. प. 158

लक्ष्मी

बनाम

भारत संघ

10 अप्रैल, 2015

न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर और न्यायमूर्ति उदय उमेश ललित

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 21 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 357ग] – प्रतिकर स्कीम – ऐसिड आक्रमण का पीड़ित सरकारी और प्राइवेट अस्पतालों से निःशुल्क चिकित्सीय उपचार, अनुरक्षण, दवा, भोजन, बिस्तरा और पुनर्रचित शल्य चिकित्सा प्राप्त करने का हकदार है तथा वह न्यूनतम 3,00,000/- रुपए (तीन लाख रुपए केवल) का प्रतिकर राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र सरकार से पाने का भी हकदार है ।

न्यायालय के आदेश तारीख 6 फरवरी, 2015 के अनुसरण में गृह मंत्रालय ने तारीख 8 अप्रैल, 2015 को शपथपत्र फाइल किया । शपथपत्र से 2014 के लिए अनंतिम आंकड़ों से यह उपदर्शित है कि सभी राज्यों में 282 ऐसिड आक्रमण हुए । अधिकांश ऐसिड आक्रमण उत्तर प्रदेश (185), मध्य प्रदेश (53) और गुजरात (11) राज्यों में हुए । दूसरा और तीसरा अनुरोध ऐसिड हमलों के पीड़ितों के उपचार की लागत और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 357ग के लागू होने के बारे में है जिसे 3 फरवरी, 2013 से 2013 के संशोधन अधिनियम द्वारा अंतःस्थापित किया गया था । तारीख 14 मार्च, 2015 को गृह मंत्रालय के सचिव और स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के सचिव द्वारा आयोजित बैठक में यह उल्लेख किया गया कि पीड़ित प्रतिकर स्कीम को पहले ही लगभग सभी राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों में अधिसूचित किया गया है । तथापि, न्यायालय को आज यह बताया गया कि पीड़ित प्रतिकर स्कीम को सभी राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों में अधिसूचित किया गया है । रिट याचिका का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने गृह मंत्रालय और स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा फाइल किए गए शपथपत्र के साथ उपाबद्ध चार्ट का परिशीलन किया । न्यायालय यह पाता है कि लक्ष्मी बनाम भारत संघ वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशों के बावजूद कुछ राज्यों/संघ राज्यक्षेत्रों में प्रति ऐसिड आक्रमण पीड़ित को न्यूनतम 3,00,000/- रुपए

(तीन लाख रुपए केवल) का प्रतिकर नियत नहीं किया गया है । न्यायालय की राय में यह उचित होगा यदि राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण के सदस्य-सचिव राज्य सरकार के साथ मुद्दा उठाएं जिससे कि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों का अनुपालन किया जा सके और 3,00,000/- (तीन लाख रुपए केवल) रुपए न्यूनतम ऐसिड आक्रमण के प्रत्येक पीड़ित को उपलब्ध कराया जा सके । उपरोक्त दिए गए आंकड़ों से न्यायालय यह पाता है कि रकम जहां तक राज्य सरकारों और संघ राज्यक्षेत्रों का संबंध है, कष्टकर नहीं होगी अतः न्यायालय ऐसा कोई कारण नहीं पाता कि इस न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशों को राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्रों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया क्योंकि इसमें कोई गंभीर वित्तीय विवक्षा अंतर्वलित नहीं है । न्यायालय राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण के सदस्य-सचिव को संबद्ध राज्य/संघ राज्यक्षेत्रों से पीड़ित प्रतिकर स्कीम की एक प्रति अभिप्राप्त करने का और राज्य/संघ राज्यक्षेत्र में व्यापक और पर्याप्त प्रचार करने का निदेश देता है जिससे कि राज्य/संघ राज्यक्षेत्रों के प्रत्येक ऐसिड आक्रमण पीड़ित को पीड़ित प्रतिकर स्कीम का फायदा मिल सके । जहां तक ऐसिड आक्रमण के पीड़ितों के उचित देखभाल, पश्चात् देखभाल और पुनर्वास का संबंध है, 14 मार्च, 2015 को आयोजित बैठक में एक मत से यह उल्लेख है कि ऐसिड आक्रमण के पीड़ितों को पूरी चिकित्सीय सहायता उपलब्ध कराई जाए और यह कि प्राइवेट अस्पतालों को भी ऐसे पीड़ितों को निःशुल्क चिकित्सा उपचार उपलब्ध कराना चाहिए । यह उल्लेख किया जाता है कि संभवतः निःशुल्क चिकित्सा उपचार कराने में कुछ प्राइवेट अस्पतालों की ओर से कुछ अनिच्छा जाहिर की जाए अतः राज्य सरकारों के संबद्ध अधिकारी प्राइवेट अस्पतालों से ऐसे विषय पर चर्चा करें जिससे कि वे ऐसिड आक्रमण के पीड़ितों को निःशुल्क चिकित्सा उपचार उपलब्ध कराएं । अतः न्यायालय यह निदेश देता है कि सभी राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्रों को अपनी संबद्ध राज्य/संघ राज्यक्षेत्र के सभी प्राइवेट अस्पतालों के साथ गंभीरता से चर्चा करनी चाहिए और विषय को इस तरह उठाना चाहिए कि प्राइवेट अस्पताल ऐसिड हमले के पीड़ित का उपचार करने से इनकार न करें और यह कि दवा, भोजन, बिस्तरा और पुनर्रचित शल्य-चिकित्सा सहित ऐसे पीड़ितों को पूरा उपचार उपलब्ध कराया जाए । न्यायालय यह भी निदेश देता है कि ऐसे अस्पताल जहां ऐसिड हमले के पीड़ित का प्राथमिक उपचार होता है, को यह प्रमाणपत्र देना चाहिए कि व्यक्ति ऐसिड आक्रमण का पीड़ित है । इस प्रमाणपत्र का उपयोग पीड़ित द्वारा उपचार और पुनर्रचित शल्य-चिकित्सा या किसी अन्य स्कीम के लिए

किया जा सकता है जिसका पीड़ित यथास्थिति राज्य सरकार या संघ राज्यक्षेत्र के समक्ष पाने का हकदार है । प्रत्येक काउंटर से ऐसिड के विक्रय पर रोक लगाने के बारे में न्यायालय गृह मंत्रालय और स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण मंत्रालय के सचिव को यह सुनिश्चित करने के लिए राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्रों से मामला उठाने का निदेश देता है कि आज से तीन मास की अवधि के भीतर इस आशय की समुचित अधिसूचना जारी की जाए । यह प्रतीत होता है कि कुछ राज्यों/संघ राज्यक्षेत्रों में पहले ही ऐसी अधिसूचना जारी की है किंतु न्यायालय की राय में सभी राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों को यथाशीघ्र ऐसी अधिसूचना जारी करनी चाहिए । न्यायालय की राय में यह मत बिल्कुल युक्तिसंगत है । अतः किसी ऐसिड हमला पीड़ित द्वारा किए गए किसी प्रतिकर दावे के मामले में विषय को जिला विधिक सेवा प्राधिकरण द्वारा विचारित किया जाएगा जो जिला न्यायाधीश और ऐसे अन्य सहयोजित व्यक्ति जिसे जिला न्यायाधीश सहायता के लिए उचित समझे, विशेषकर जिला मजिस्ट्रेट, पुलिस अधीक्षक और सिविल सर्जन या उस जिले का मुख्य चिकित्सा अधिकारी या उसका नामनिर्देशिती । यह निकाय सभी प्रयोजनों के लिए आपराधिक क्षति प्रतिकर बोर्ड के रूप में काम करेगा । (पैरा 10, 11, 12, 13, 17, 18, 20 और 22)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 4 एस. सी. सी. 427 : **लक्ष्मी** बनाम **भारत संघ** ।	10

आरंभिक (दांडिक) अधिकारिता : 2006 की रिट याचिका सं. 129.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री कोलीन कान्सेल्वेस, ज्येष्ठ अधिवक्ता, अपर्ना भट, पुखराम्बम्ब रमेश कुमार, (सुश्री) तनीमा किशोर, सुमीत कुमार, (सुश्री) शिवांगी सिंह, (सुश्री) सुमीता चौधरी और (सुश्री) ज्योति मेन्दिरत्ता, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री एस. पी. मिश्रा, अटार्नी जनरल, ए. मरियापुथम, (सुश्री) विभा दत्ता मखीजा, ज्येष्ठ अधिवक्ता, सी.

डी. सिंह, अरुण भारद्वाज, सूर्यनारायण सिंह, शंकर चिल्लारजे, जयंत के. सूद, एस. एस. शमशेर, ए. कादिर, गौरव शर्मा, (सुश्री) मीनाक्षी ग्रोवर, डी. एल. चिदानन्द, (सुश्री) सुनीता शर्मा, (सुश्री), रश्मि मल्होत्रा, एस. एन. तेरदल, अजय शर्मा, जैद अली, पार्थी के. गोस्वामी, बी. के. प्रसाद, एस. एस. रावत, डी. एस. मेहरा, बी. वी. बालाराम दास, (सुश्री) सुषमा सूरी, गुंतूर प्रभाकर, अनिल श्रीवास्तव, रीतूराज बिस्वास, रिकू शर्मा, (सुश्री) वर्तिका सहाय (कंपनी विधि समूह के लिए), गोपाल सिंह, (सुश्री) शुभ्रा राय, (सुश्री) रश्मि श्रीवास्तव, दर्पन भूयान, ए. पी. मायी, (सुश्री) चारुदत्ता महिन्द्रकार, ए. सेल्वीन राजा, प्रताप वेनुगोपाल, (सुश्री) सुप्रिया जैन, (सुश्री) निहारिका (मैसर्स के. जे. जॉन एंड कंपनी के लिए), (सुश्री) बांसूरी स्वराज, (सुश्री) श्रेया भटनागर, (सुश्री) हेमन्तिका वाही, (सुश्री) जेसाल वाही, (सुश्री) पूजा सिंह, किरण अहलावत, अश्वनी के. उपाध्याय, कमल मोहन गुप्ता, (सुश्री) प्रगती नीखरा, गोपाल प्रसाद, जयेश गौरव, तपेश कुमार सिंह, मो. वाकास, (सुश्री) शिल्पा दत्ता, परीक्षित अंगदी, वी. एन. रघुपथी, सोनिया शंकर चिल्लारजे, अनिरुद्ध पी. मायी, (सुश्री) आशा गोपालन नैयर, सी. डी. सिंह, सपम विश्वजीत मेत्रेय, अशोक के.

सिंह, जेड. एच. इशाक हैदिंग, के. एन. मधुसूधनन्, एम. जे. जॉर्ज, प्रज्ञान शर्मा, हेशु कयीना, (श्रीमती) के. एनतोली सेमा, अमित कुमार सिंह, बालाजी श्रीनिवासन, एस. एस. मिश्रा, नरहेश बक्शी, अमित शर्मा, संदीप सिंह, (सुश्री) अरुना माथुर, युसूफ खान, के. विजय कुमार (मैसर्स अर्पूथम अरुना एंड कंपनी के लिए), एम. योगेश खन्ना, (सुश्री) जे. जनानी, संता कुमारन, पी. वेंकट रेड्डी (मैसर्स वेंकट पल्वई विधि एसोसिएशन के लिए), एस. उदय कुमार सागर, कृष्णा कुमार सिंह, विक्रांत यादव, अभिस्थ कुमार, रानी पी. मेहरोत्रा, राजेश कुमार मौर्या, राजीव दूबे, जतिन्दर के. भाटिया, मुकेश वर्मा, (सुश्री) रचना श्रीवास्तव, उत्कर्ष शर्मा, अनीप सचथे, साकर सरदाना, (सुश्री) सुरभि सरदाना, अविजीत भट्टाचार्जी, (सुश्री) उपमा श्रीवास्तव, के. वी. जगदीशवर्मन, (श्रीमती) जी. इंदिरा, बालासुब्रह्मनियम, (सुश्री) विमला सिंह, गोपाल सिंह, वी. जी. प्रागसम, एस. जे. एरिस्टोटेल, प्रभू रामासुब्रामनियन, पी. परमेश्वरन, अजेय शर्मा, संजय आर. हेगड़े, एस. थानन्जयन, (श्रीमती) अनिल कतियार, डी. महेश बाबू, इरशाद अहमद, राधे श्यान जेना, गुन्नाम वेंकटेश्वरा राव, अरुण के. सिन्हा, वी. जी. प्रागसाम, सुनील

फर्नान्डेस, अनुवर्त शर्मा, रंजन मुखर्जी, संग्राम एस. सरण, श्री पाल सिंह, रमेश बाबू एम. आर., तपेश कुमार सिंह और (सुश्री) रुचि कोहली, अधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर ने दिया ।

न्या. लोकुर – हमारे आदेश तारीख 6 फरवरी, 2015 के अनुसरण में गृह मंत्रालय ने तारीख 8 अप्रैल, 2015 को शपथपत्र फाइल किया ।

2. हमने काफी विस्तार से पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

3. भारत सरकार के गृह मंत्रालय के सचिव और स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के सचिव द्वारा तारीख 14 मार्च, 2015 को राज्यों/संघ राज्यक्षेत्रों के सभी मुख्य सचिवों/उनके समकक्ष अधिकारियों के साथ एक बैठक की गई ।

4. शपथपत्र से 2014 के लिए अनंतिम आंकड़ों से यह उपदर्शित है कि सभी राज्यों में 282 ऐसिड आक्रमण हुए । अधिकांश ऐसिड आक्रमण उत्तर प्रदेश (185), मध्य प्रदेश (53) और गुजरात (11) राज्यों में हुए ।

5. जहां तक संघ राज्यक्षेत्रों का संबंध है दिल्ली एकमात्र ऐसा संघ राज्यक्षेत्र है जहां ऐसिड आक्रमण हुए और वर्ष 2014 में ऐसे आक्रमणों की कुल संख्या अनंतिम रूप से 27 है ।

6. अतः वर्ष 2014 में अनंतिम रूप से कुल 309 ऐसिड आक्रमणों का होना बताया गया है ।

7. हमारे आदेश तारीख 6 फरवरी, 2015 में भारतीय दंड संहिता के संशोधन के बारे में जैसा उल्लेख किया गया है याची द्वारा किए गए पहले अनुरोध में ऐसा कुछ नहीं है ।

8. दूसरा और तीसरा अनुरोध ऐसिड हमलों के पीड़ितों के उपचार की लागत और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 357ग के लागू होने के बारे में है जिसे 3 फरवरी, 2013 से 2013 के संशोधन अधिनियम द्वारा अंतःस्थापित किया गया था ।

9. तारीख 14 मार्च, 2015 को गृह मंत्रालय के सचिव और स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के सचिव द्वारा आयोजित बैठक में यह उल्लेख किया गया कि पीड़ित प्रतिकर स्कीम को पहले ही लगभग सभी

राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों में अधिसूचित किया गया है । तथापि, हमें आज यह बताया गया कि पीड़ित प्रतिकर स्कीम को सभी राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों में अधिसूचित किया गया है ।

10. हमने गृह मंत्रालय और स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा फाइल किए गए शपथपत्र के साथ उपाबद्ध चार्ट का परिशीलन किया । हम यह पाते हैं कि **लक्ष्मी** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशों के बावजूद कुछ राज्यों/संघ राज्यक्षेत्रों में प्रति ऐसिड आक्रमण पीड़ित को न्यूनतम 3,00,000/- रुपए (तीन लाख रुपए केवल) का प्रतिकर नियत नहीं किया गया है । हमारी राय में यह उचित होगा यदि राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण के सदस्य-सचिव राज्य सरकार के साथ मुद्दा उठाएं जिससे कि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों का अनुपालन किया जा सके और 3,00,000/- रुपए (तीन लाख रुपए केवल) न्यूनतम ऐसिड आक्रमण के प्रत्येक पीड़ित को उपलब्ध कराया जा सके ।

11. उपरोक्त दिए गए आंकड़ों से हम यह पाते हैं कि रकम जहां तक राज्य सरकारों और संघ राज्यक्षेत्रों का संबंध है, कष्टकर नहीं होगी अतः हम ऐसा कोई कारण नहीं पाते कि इस न्यायालय द्वारा दिए गए निदेशों को राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्रों द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता क्योंकि इसमें कोई गंभीर वित्तीय विवक्षा अंतर्वलित नहीं है ।

12. हम राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण के सदस्य-सचिव को संबद्ध राज्य/संघ राज्यक्षेत्रों से पीड़ित प्रतिकर स्कीम की एक प्रति अभिप्राप्त करने का और राज्य/संघ राज्यक्षेत्र में व्यापक और पर्याप्त प्रचार करने का निदेश देते हैं जिससे कि राज्य/संघ राज्यक्षेत्रों के प्रत्येक ऐसिड आक्रमण पीड़ित को पीड़ित प्रतिकर स्कीम का फायदा मिल सके ।

13. जहां तक ऐसिड आक्रमण के पीड़ितों के उचित देखभाल, पश्चात् देखभाल और पुनर्वास का संबंध है, 14 मार्च, 2015 को आयोजित बैठक में एक मत से यह उल्लेख है कि ऐसिड आक्रमण के पीड़ितों को पूरी चिकित्सीय सहायता उपलब्ध कराई जाए और यह कि प्राइवेट अस्पतालों को भी ऐसे पीड़ितों को निःशुल्क चिकित्सा उपचार उपलब्ध कराना चाहिए । यह उल्लेख किया जाता है कि संभवतः निःशुल्क चिकित्सा उपचार कराने में कुछ प्राइवेट अस्पतालों की ओर से कुछ अनिच्छा जाहिर की जाए अतः राज्य सरकारों के संबद्ध अधिकारी प्राइवेट

---

[1] (2014) 4 एस. सी. सी. 427.

अस्पतालों से ऐसे विषय पर चर्चा करें जिससे कि वे ऐसिड आक्रमण के पीड़ितों को निःशुल्क चिकित्सा उपचार उपलब्ध कराएं ।

14. बैठक में लिए गए विनिश्च इस प्रकार हैं :–

- राज्य/संघ राज्यक्षेत्र ऐसिड हमला पीड़ितों का उपचार करने और प्रतिकर का संदाय करने की बाबत उच्चतम न्यायालय के निदेशों पर गंभीरता से ध्यान देंगे और अपेक्षित आदेश/अधिसूचना जारी कर इन निदेशों का क्रियान्वयन करेंगे ।
- प्राइवेट अस्पतालों को भी अनुपालन के लिए निदेश दिया जाएगा और राज्य/संघ राज्यक्षेत्र इस बाबत आवश्यक उपाय का प्रयोग करेंगे ।
- कोई अस्पताल/औषधालय विशिष्ट सुविधाओं की कमी उद्धृत करते हुए उपचार से इनकार नहीं करेगा ।
- पीड़ित का प्राथमिक उपचार किया जाए और स्थिर होने के पश्चात् पीड़ित/रोगी को आगे उपचार के लिए जहां-कहीं अपेक्षित हो विशिष्ट सुविधा वाले स्थान पर ले जाया जाए ।
- दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 357ग के उपबंधों के उल्लंघन में ऐसिड हमलों और अन्य अपराधों के पीड़ितों का उपचार करने से इनकार करने के लिए अस्पताल/औषधालय के विरुद्ध कार्रवाई की जाए ।

15. हम प्राधिकारियों से इन विनिश्चयों का पालन करने की प्रत्याशा करते हैं ।

16. यद्यपि 14 मार्च, 2015 को हुई बैठक में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि निःशुल्क चिकित्सा उपचार से हम क्या समझते हैं, न केवल ऐसिड हमले के पीड़ित को भौतिक उपचार का उपबंध है बल्कि संबद्ध अस्पताल में दवा, बिस्तरा और भोजन की उपलब्धता भी है ।

17. अतः हम यह निदेश देते हैं कि सभी राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्रों को अपनी संबद्ध राज्य/संघ राज्यक्षेत्र के सभी प्राइवेट अस्पतालों के साथ गंभीरता से चर्चा करनी चाहिए और विषय को इस तरह उठाना चाहिए कि प्राइवेट अस्पताल ऐसिड हमले के पीड़ित का उपचार करने से इनकार न करें और यह कि दवा, भोजन, बिस्तरा और पुनर्रचित शल्य-चिकित्सा सहित ऐसे पीड़ितों को पूरा उपचार उपलब्ध कराया जाए ।

18. हम यह भी निदेश देते हैं कि ऐसे अस्पताल जहां ऐसिड हमले के पीड़ित का प्राथमिक उपचार होता है, को यह प्रमाणपत्र देना चाहिए कि व्यक्ति ऐसिड आक्रमण का पीड़ित है । इस प्रमाणपत्र का उपयोग पीड़ित द्वारा उपचार और पुनर्रचित शल्य-चिकित्सा या किसी अन्य स्कीम के लिए किया जा सकता है जिसका पीड़ित यथास्थिति राज्य सरकार या संघ राज्यक्षेत्र के समक्ष पाने का हकदार है ।

19. किसी प्राइवेट अस्पताल या सरकारी अस्पताल के विरुद्ध किसी विनिर्दिष्ट शिकायत की दशा में, ऐसिड हमला पीड़ित वस्तुतः आगे कार्रवाई करने के लिए स्वतंत्र होगा ।

20. प्रत्येक काउंटर से ऐसिड के विक्रय पर रोक लगाने के बारे में हम गृह मंत्रालय और स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण मंत्रालय के सचिव को यह सुनिश्चित करने के लिए राज्य सरकारों/संघ राज्यक्षेत्रों से मामला उठाने का निदेश देते हैं कि आज से तीन मास की अवधि के भीतर इस आशय की समुचित अधिसूचना जारी की जाए । यह प्रतीत होता है कि कुछ राज्यों/संघ राज्यक्षेत्रों में पहले ही ऐसी अधिसूचना जारी की है किंतु हमारी राय में सभी राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों को यथाशीघ्र ऐसी अधिसूचना जारी करनी चाहिए ।

21. अंतिम मुद्दा आपराधिक क्षति प्रतिकर बोर्ड के गठन के बारे में है । तारीख 14 मार्च, 2015 को हुई बैठक में इस बात पर सर्वसम्मति थी कि चूंकि जिला विधिक सेवा प्राधिकरण पहले ही प्रत्येक जिले में गठित है और ऐसिड हमला पीड़ितों से संबंधित समुचित सहायता उपलब्ध कराने में लगा हुआ है, संभवतः पृथक् आपराधिक क्षति प्रतिकर बोर्ड गठित करना आवश्यक नहीं होगा । दूसरे शब्दों में प्राधिकारियों की बहुलता सृजित करने की आवश्यकता नहीं है ।

22. हमारी राय में यह मत बिल्कुल युक्तिसंगत है । अतः किसी ऐसिड हमला पीड़ित द्वारा किए गए किसी प्रतिकर दावे के मामले में विषय को जिला विधिक सेवा प्राधिकरण द्वारा विचारित किया जाएगा जो जिला न्यायाधीश और ऐसे अन्य सहयोजित व्यक्ति जिसे जिला न्यायाधीश सहायता के लिए उचित समझे, विशेषकर जिला मजिस्ट्रेट, पुलिस अधीक्षक और सिविल सर्जन या उस जिले का मुख्य चिकित्सा अधिकारी या उसका नामनिर्देशिती । यह निकाय सभी प्रयोजनों के लिए आपराधिक क्षति प्रतिकर बोर्ड के रूप में काम करेगा ।

23. इस आदेश की प्रति गृह मंत्रालय के सचिव और स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के सचिव की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल को आगे पारेषण और सभी राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों के मुख्य सचिवों या उनके समतुल्य अधिकारियों को अनुपालन के लिए भेजी जाएगी ।

24. मुख्य सचिव यह सुनिश्चित करेगा कि आदेश सभी जिला मजिस्ट्रेटों को भेजी जाए और इस न्यायालय के आदेश का सम्यक् प्रचार किया जाए ।

25. इस आदेश की प्रति नाल्सा के सदस्य-सचिव को आगे पारेषण के लिए और सभी राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों के विधिक सेवा प्राधिकरण के सदस्य-सचिव को अनुपालन के लिए भेजी जाए । राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण का सदस्य-सचिव यह सुनिश्चित करेगा कि यह प्रत्येक जिला विधिक सेवा प्राधिकरण के सदस्य-सचिव को अग्रेषित की जाए जो यह सुनिश्चित करेगा कि इस न्यायालय के आदेश का सम्यक् प्रचार किया जाए ।

26. रिट याचिका का निपटान उपरोक्त निबंधनानुसार किया जाता है ।

रिट याचिका का निपटारा किया गया ।

पा.

[2015] 2 उम. नि. प. 167

पुलिस निरीक्षक और अन्य

बनाम

बट्टेनपाटला वेंकट रतनम और एक अन्य

13 अप्रैल, 2015

न्यायमूर्ति कुरियन जोसेफ और न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 197 – लोक सेवकों का अभियोजन – पूर्व मंजूरी – इस धारा का उद्देश्य लोक सेवकों की विद्वेषपूर्ण और तंग करने वाले अभियोजन से संरक्षा करना है और इसे

भ्रष्ट पदधारियों की संरक्षा करने के लिए कवच के रूप में नहीं माना जा सकता है ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 197 [सपठित दंड संहिता, 1860 की धारा 420, 463, 477 और 120ख/109] – लोक सेवकों का अभियोजन – पूर्व मंजूरी – प्रत्यर्थियों द्वारा उप रजिस्ट्रार के रूप में कार्य करते हुए अभिलेखों को गढ़ना, छल और दुर्विनियोग किया जाना – लोक सेवकों द्वारा अपने पदीय कर्तव्य का निर्वहन करते हुए आपराधिक षड्यंत्र करना, अभिलेख गढ़ना और दुर्विनियोग करना उनके पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में किया गया कार्य नहीं माना जा सकता है, अतः पूर्व मंजूरी के अभाव में उच्च न्यायालय द्वारा कार्यवाहियों को अभिखंडित करके उचित नहीं किया गया है ।

जिला रजिस्ट्रार, विजयवाड़ा ने तारीख 7 जुलाई, 1999 को पुलिस निरीक्षक, सीबीसीआईडी, विजयवाड़ा के पास एक शिकायत दर्ज कराई जिसमें प्रत्यर्थियों के विरुद्ध मुख्य अभिकथन यह किया गया कि जब वे आंध्र प्रदेश राज्य में विभिन्न कार्यालयों में उप रजिस्ट्रार के रूप में कार्यरत थे, तब उन्होंने धनीय फायदा प्राप्त करने के लिए स्टाम्प विक्रेताओं और अर्जी नवीसों तथा अन्य कर्मचारिवृंद के साथ षड्यंत्र किया और रजिस्टरों के साथ छलसाधन करके दस्तावेजों का रजिस्ट्रीकरण संपत्तियों के पुराने मूल्य पर किया जिसके परिणामस्वरूप स्वयं दोषपूर्ण अभिलाभ प्राप्त किया तथा सरकार को हानि कारित की और तद्द्वारा जनता तथा सरकार के साथ कपट किया । शिकायत के आधार पर अपीलार्थी द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई और अन्वेषण के पश्चात् प्रत्यर्थियों सहित 41 व्यक्तियों के विरुद्ध तृतीय अपर मुख्य मैट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, विजयवाड़ा के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन रिपोर्ट प्रस्तुत की गई । प्रत्यर्थियों ने यह आक्षेप किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अधीन मंजूरी नहीं ली गई है और इसलिए कार्यवाहियां आरंभ नहीं की जा सकती हैं । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि यदि मंजूरी के उक्त दृष्टिकोण पर कोई विचार किया जाना है, तो वह केवल विचारण के प्रक्रम पर किया जा सकता है । प्रत्यर्थियों ने व्यथित होकर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय में समावेदन किया और उच्च न्यायालय ने दांडिक कार्यवाहियों को मात्र इस आधार पर अभिखंडित कर दिया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अधीन मंजूरी नहीं ली गई थी । उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – निस्संदेह, जब प्रत्यर्थी अभिकथित आपराधिक आचरण में संलिप्त थे, तब वे लोक सेवक के रूप में कार्य कर रहे थे । प्रश्न यह नहीं है कि क्या वे सेवा में या ड्यूटी पर थे या नहीं थे, अपितु क्या उनके द्वारा अभिकथित अपराध "तब किए गए थे जब वे अपने पदीय कर्तव्य के निर्वहन में कार्य कर रहे थे या जब उनका ऐसे कार्य करना तात्पर्यित था" । यह प्रश्न अब अनिर्णीत नहीं है । वास्तव में, लोक सेवकों को विद्वेषपूर्ण और तंग करने वाले अभियोजन से उनकी संरक्षा करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अधीन विशेष प्रवर्ग के रूप में समझा गया है । उत्पीड़न से बचाने के लिए यह संरक्षा लोक हित में दी गई है और इस संरक्षा को भ्रष्ट पदधारियों की संरक्षा करने के लिए कवच के रूप में नहीं समझा जा सकता है । कपट करने, अभिलेख गढ़ने या दुर्विनियोग करने में अधिकारियों की अभिकथित संलिप्तता को उनके पदीय कर्तव्य का निर्वहन होना नहीं कहा जा सकता है । उनके पदीय कर्तव्य अभिलेख गढ़ना या शुल्क की रकम का अपवंचन करने की अनुज्ञा देना और राजस्व को हानि कारित करना नहीं है । दुर्भाग्यवश, उच्च न्यायालय इन निर्णायक पहलुओं पर विचार करने में असफल रहा है । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने ठीक ही यह दृष्टिकोण अपनाया कि यदि मंजूरी के उक्त दृष्टिकोण पर कोई विचार किया जाना है, तो यह केवल विचारण के प्रक्रम पर किया जा सकता है । (पैरा 7, 10 और 11)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2015] (2015) 1 एस. सी. सी. 513 :
राजीब रंजन और अन्य बनाम **आर. विजयकुमार** ; 9

[2012] (2012) 3 एस. सी. सी. 64 :
सुब्रमण्यन् स्वामी बनाम **मनमोहन सिंह और एक अन्य** ; 10

[2007] (2007) 1 एस. सी. सी. 1 :
प्रकाश सिंह बादल बनाम **पंजाब राज्य और अन्य** ; 8

[1997] (1997) 5 एस. सी. सी. 326 :
शंभू नाथ मिश्रा बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** । 7

दांडिक (अपीली) अधिकारिता : 2013 की दांडिक अपील सं. 129. (इसके साथ 2013 की दांडिक

अपील सं. 124, 125, 126, 127, 128, 130, 131 और 132)

2007 की दांडिक याचिका सं. 6213 में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय, हैदराबाद के तारीख 10 दिसम्बर, 2007 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से — सर्वश्री गुंटुर प्रभाकर, (सुश्री) प्रेरणा सिंह और महेश बाबू

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री के. मारुति राव, के. सुब्बा राव, अनिरुद्ध पी. मायी, वी. श्रीधर रेड्डी और वी. एन. रघुपति

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति कुरियन जोसेफ ने दिया ।

न्या. जोसेफ – इन मामलों में उद्भूत प्रश्न यह है कि क्या भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) की धारा 109 के साथ पठित धारा 420, 468, 477क और 120ख के अधीन अपराधों की बाबत दांडिक कार्यवाहियां आरंभ करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "संहिता" कहा गया है) की धारा 197 के अधीन मंजूरी अपेक्षित है या नहीं ।

2. जिला रजिस्ट्रार, विजयवाड़ा ने तारीख 7 जुलाई, 1999 को पुलिस निरीक्षक, सीबीसीआईडी, विजयवाड़ा के पास एक शिकायत दर्ज कराई । प्रत्यर्थियों के विरुद्ध मुख्य अभिकथन यह था कि जब वे आंध्र प्रदेश राज्य में विभिन्न कार्यालयों में उप रजिस्ट्रार के रूप में कार्यरत थे, तब उन्होंने धनीय फायदा प्राप्त करने के लिए स्टाम्प विक्रेताओं और अर्जी नवीसों तथा अन्य कर्मचारिवृंद के साथ षड्यंत्र किया और रजिस्टरों के साथ छलसाधन करके दस्तावेजों का रजिस्ट्रीकरण संपत्तियों के पुराने मूल्य पर किया जिसके परिणामस्वरूप स्वयं दोषपूर्ण अभिलाभ प्राप्त किया तथा सरकार को हानि कारित की और तद्द्वारा जनता तथा सरकार के साथ कपट किया ।

3. शिकायत के आधार पर अपीलार्थी द्वारा 1999 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 35 दर्ज की गई और अन्वेषण के पश्चात् इस अपील में के प्रत्यर्थियों सहित 41 व्यक्तियों के विरुद्ध तृतीय अपर मुख्य मैट्रोपोलिटन

मजिस्ट्रेट, विजयवाड़ा के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(2) के अधीन रिपोर्ट प्रस्तुत की गई । प्रत्यर्थियों ने यह आक्षेप किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अधीन मंजूरी नहीं ली गई है और इसलिए कार्यवाहियां आरंभ नहीं की जा सकती हैं ।

4. विद्वान् मजिस्ट्रेट ने तारीख 3 जुलाई, 2007 को यह अभिनिर्धारित करते हुए एक आदेश पारित किया :–

> "दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अधीन मंजूरी अपेक्षित है या नहीं, इस पर विचारण के दौरान विचार किया जाए और यह साबित करने का भार शिकायतकर्ता पर है कि अभियुक्तों ने अपने पदीय कर्तव्यों के निर्वहन के परे जाकर कृत्य किए हैं और कारित किए गए कृत्यों और उनके पदीय कर्तव्यों के बीच कोई संबंध नहीं है और इस प्रक्रम पर यह प्रश्न विनिश्चित नहीं किया जा सकता है कि अभियुक्तों ने अपने कर्तव्यों के भीतर रहकर कृत्य किए थे ।"

5. प्रत्यर्थियों ने व्यथित होकर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय में समावेदन किया और उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित किया जिसके द्वारा दांडिक कार्यवाहियों को मात्र इस आधार पर अभिखंडित कर दिया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अधीन मंजूरी नहीं ली गई थी और इसलिए ये अपीलें फाइल की गई हैं ।

6. अपीलार्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री गुंटुर प्रभाकर, सुश्री प्रेरणा सिंह और श्री डी. महेश बाबू तथा प्रत्यर्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री वी. एन. रघुपति को सुना ।

7. निस्संदेह, जब प्रत्यर्थी अभिकथित आपराधिक आचरण में संलिप्त थे, तब वे लोक सेवक के रूप में कार्य कर रहे थे । प्रश्न यह नहीं है कि क्या वे सेवा में या ड्यूटी पर थे या नहीं थे, अपितु क्या उनके द्वारा अभिकथित अपराध "तब किए गए थे जब वे अपने पदीय कर्तव्य के निर्वहन में कार्य कर रहे थे या जब उनका ऐसे कार्य करना तात्पर्यित था" । यह प्रश्न अब अनिर्णीत नहीं है । **शंभू नाथ मिश्रा** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने, पैरा 5 में, यह अभिनिर्धारित किया है :–

> "5. प्रश्न यह है कि जब अभिकथन यह है कि लोक सेवक ने

---

[1] (1997) 5 एस. सी. सी. 326.

अभिलेख गढ़ने या लोक निधि आदि के दुर्विनियोग का अपराध कारित किया है, क्या तब यह कहा जा सकता है कि उसने ऐसा कृत्य अपने पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में किया है । लोक सेवक का पदीय कर्तव्य यह नहीं कि वह अपने पदीय कर्तव्यों को अग्रसर करते हुए या निर्वहन करते हुए मिथ्या अभिलेख गढ़े या लोक निधियों आदि का दुर्विनियोग करे । पदीय हैसियत उसे केवल अभिलेख गढ़ने या लोक निधि आदि का दुर्विनियोग करने के लिए समर्थ तो बनाती है किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि यह बात उसी संव्यवहार के अनुक्रम में कारित किए गए अपराध से अभिन्न रूप से संसक्त है या अविभाज्य रूप से परस्पर संबद्ध है, जैसा कि विद्वान् न्यायाधीश द्वारा माना गया है । इन परिस्थितियों में, हमारी यह राय है कि मंजूरी के प्रश्न पर उच्च न्यायालय तथा विचारण न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया मत स्पष्ट रूप से अवैध है और टिक नहीं सकता है ।"

8. **प्रकाश सिंह बादल** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में पैरा 20 में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि :–

"20. उन्मुक्ति का सिद्धांत लोक सेवक के उन सभी कृत्यों की संरक्षा करता है जो उसे सरकार के कार्य करने में प्रयोग करते हुए करने होते हैं । वह प्रयोजन, जिसके लिए वे कृत्य किए जाते हैं, दांडिक अभियोजन से इन कृत्यों की संरक्षा करता है । तथापि, यहां एक अपवाद है । जहां कोई आपराधिक कृत्य प्राधिकार के नाम पर किया जाता है किंतु जो वास्तव में लोक सेवक के अपने भोग या फायदे के लिए है, तब ऐसे कृत्य राज्य उन्मुक्ति के सिद्धांत के अधीन संरक्षित नहीं होंगे ।"

और उसके पश्चात् पैरा 38 में यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि –

"38. संहिता की धारा 197 के अधीन मंजूरी की आवश्यकता संबंधी प्रश्न पर शिकायत दर्ज होते ही और उसमें अंतर्विष्ट अभिकथनों पर आवश्यक रूप से विचार किया जाना आवश्यक नहीं है । यह प्रश्न कार्यवाही के किसी प्रक्रम पर उद्भूत हो सकता है । यह प्रश्न कि क्या मंजूरी आवश्यक है या नहीं, एक प्रक्रम से अगले प्रक्रम पर अवधारित किया जा सकता है ।"

---

[1] (2007) 1 एस. सी. सी. 1.

9. **राजीब रंजन और अन्य** बनाम **आर. विजयकुमार**[1] वाले मामले में पैरा 18 में इस न्यायालय ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि :–

> "……यदि कोई लोक सेवक अपने पदीय कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए कोई आपराधिक षड्यंत्र करता है या आपराधिक आचरण में संलिप्त होता है, तो उसके द्वारा किया गया ऐसा उपापराध उसके पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में किया गया नहीं समझा जाएगा और इसलिए संहिता की धारा 197 के उपबंध लागू नहीं होंगे ।"

10. वास्तव में, लोक सेवकों को विद्वेषपूर्ण और तंग करने वाले अभियोजन से उनकी संरक्षा करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के अधीन विशेष प्रवर्ग के रूप में समझा गया है । उत्पीड़न से बचाने के लिए यह संरक्षा लोक हित में दी गई है और इस संरक्षा को भ्रष्ट पदधारियों की संरक्षा करने के लिए कवच के रूप में नहीं समझा जा सकता है । **सुब्रमण्यन् स्वामी** बनाम **मनमोहन सिंह और एक अन्य**[2] वाले मामले में पैरा 74 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 में उपबंधित उपबंधों का अर्थान्वयन ऐसी रीति में किया जाना चाहिए जिससे कि ईमानदारी, न्याय और सुशासन के प्रयोजन का उन्नयन हो सके । इसे नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "74. ……लोक सेवक उक्त संरक्षण का उपभोग करने के लिए एक विशेष वर्ग के रूप में समझे जाते हैं जिससे कि वे भय और पक्षपात के बिना और विद्वेषपूर्ण अभियोजन के भय के बिना अपने कर्तव्यों को पूरा कर सके । तथापि, विद्वेषपूर्ण अभियोजन के विरुद्ध यह संरक्षण, जो लोक हित में दिया गया है, भ्रष्ट पदधारियों को बचाने के लिए कवच नहीं बन सकता है । ये उपबंध अनुच्छेद 14 के समता के उपबंधों का अपवाद होने के कारण संरक्षात्मक विभेद के उपबंधों के समरूप हैं और इन संरक्षाओं का अर्थान्वयन अति संकुचित रूप से किया जाना चाहिए । मंजूरी से संबंधित ये प्रक्रियात्मक उपबंधों का अर्थान्वयन ऐसी रीति में किया जाना चाहिए जिससे कि भ्रष्टाचार में वृद्धि के विपरीत ईमानदारी और न्याय तथा सुशासन के प्रयोजनों का उन्नयन हो सके ।"

---

[1] (2015) 1 एस. सी. सी. 513.

[2] (2012) 3 एस. सी. सी. 64.

11. कपट करने, अभिलेख गढ़ने या दुर्विनियोग करने में अधिकारियों की अभिकथित संलिप्तता को उनके पदीय कर्तव्य का निर्वहन होना नहीं कहा जा सकता है । उनके पदीय कर्तव्य अभिलेख गढ़ना या शुल्क की रकम का अपवंचन करने की अनुज्ञा देना और राजस्व को हानि कारित करना नहीं है । दुर्भाग्यवश, उच्च न्यायालय इन निर्णायक पहलुओं पर विचार करने में असफल रहा है । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने ठीक ही यह दृष्टिकोण अपनाया कि यदि मंजूरी के उक्त दृष्टिकोण पर कोई विचार किया जाना है, तो यह केवल विचारण के प्रक्रम पर किया जा सकता है ।

12. परिणामतः, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाते हैं । अपीलें मंजूर की जाती हैं । दांडिक कार्यवाहियां वर्ष 1999 में चलाई गईं होने के कारण हम विचारण न्यायालय को निदेश देते हैं कि इन मामलों का निपटारा यथासम्भव शीघ्रता से तारीख 31 दिसम्बर, 2015 या इससे पूर्व किसी तारीख तक किया जाए ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

जस.

[2015] 2 उम. नि. प. 174

एम. नारायण

बनाम

कर्नाटक राज्य

17 अप्रैल, 2015

न्यायमूर्ति टी. एस. ठाकुर और न्यायमूर्ति अमितव राय

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 498क और 304ख [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3, 4 और 6 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113क और 113ख] – क्रूरता – दहेज मृत्यु – अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा की गई दहेज की मांग और क्रूरता से परेशान होकर मृतका द्वारा आत्महत्या – विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को दोषमुक्त किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा

दोषमुक्ति को उलटा जाना – तात्विक साक्षियों के परिसाक्ष्य से युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित होने पर कि मृतका को विवाह के कुछ माह पश्चात् से निरंतर इतना तंग किया गया, उस पर हमला किया गया और उसे अभित्रस्त किया गया कि उसने असहनीय क्रूरता सहन करने में असमर्थ होने पर अपने जीवन का अंत करने का आखिरी कदम उठाया, अतः अभियोजन पक्ष आरोपों के संबंध में अपीलार्थी की दोषिता को किसी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में सफल रहा है इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा की गई उसकी दोषसिद्धि और दिया गया दंडादेश उचित है ।

मृतका का विवाह अपीलार्थी के साथ तारीख 20 जून, 1991 को हुआ था । विवाह के लगभग छह माह पश्चात् तक पति-पत्नी प्रसन्नतापूर्वक रहे और उसके पश्चात् मृतका के पति (इस अपील में अपीलार्थी) के अभिकथित रूप से एक अन्य लड़की के साथ कतिपय अयुक्त संबंध हो गए और परिणामस्वरूप वह मृतका का तिरस्कार करने लगा और दहेज के रूप में 50,000/- रुपए की मांग करके उसे अभित्रस्त और तंग करने के अतिरिक्त नशे में धुत होकर अक्सर उस पर हमला करने लगा । मृतका ने तारीख 8 सितम्बर, 1993 को फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली । मृतका के मामा (इत्तिलाकर्ता) ने तारीख 10 सितम्बर, 1993 को पुलिस थाने में अपनी भांजी की मृत्यु होने के बारे में एक शिकायत दर्ज कराई । इस सूचना से यह प्रकट होता है कि विवाह के अवसर पर सोने के आभूषण और 20,000/- रुपए दहेज के मद्दे दिए गए थे । यह भी उल्लेख किया गया है कि मृतका अपनी मृत्यु से दो माह पूर्व इत्तिलाकर्ता के गांव आई थी और अपने पति द्वारा किए गए उत्पीड़न को सहन कर पाने में असमर्थ होने के कारण वहां एक माह ठहरी थी और उस दौरान मृतका ने उसे और उसकी पत्नी को अपीलार्थी-पति द्वारा की जा रही दहेज के रूप में 50,000/- रुपए की मांग और उसे तंग करने के बारे में बताया था । इस सूचना के आधार पर पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन आपराधिक रिपोर्ट दर्ज की । अन्वेषण किया गया और अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3, 4 और 6 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् अभियोजन के पक्षकथन पर विश्वास नहीं किया और परिणामस्वरूप सभी आरोपों के संबंध में अपीलार्थी की दोषमुक्ति का निष्कर्ष अभिलिखित किया । यह मत व्यक्त

किया गया कि अभि. सा. 3, 4 और 10 के परिसाक्ष्य में के विरोधाभासों से अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन अविश्वसनीय हो गया है । विचारण न्यायालय ने अभियोजन के पक्षकथन को इस आधार पर भी नामंजूर कर दिया कि दहेज की मांग के अभिकथन घटना के पश्चात् लगाए गए हैं न कि इससे पूर्व । अभियोजन पक्ष इस अभ्यारोपण के संबंध में कोई साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहा है कि अपीलार्थी के एक अन्य लड़की से अयुक्त संबंध हो गए थे । कर्नाटक राज्य द्वारा फाइल की गई दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में कर्नाटक उच्च न्यायालय ने इन सभी आरोपों को दोहराते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध दोषिता का निष्कर्ष निकाला और उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और 304ख तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3, 4 और 6 के अधीन दोषसिद्ध तथा दंडादिष्ट किया । अभियुक्त-अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस न्यायालय के आंकलन के अनुसार, तात्विक साक्षियों के परिसाक्ष्य से युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित होता है कि मृतका को विवाह के कुछ माह पश्चात् से निरंतर इतना तंग किया गया, उस पर हमला किया गया और उसे अभित्रस्त किया गया कि उसने असहनीय क्रूरता सहन करने में असमर्थ होने पर ऐसी शारीरिक और मानसिक यातना से छुटकारा पाने के लिए अपने जीवन का अंत करने का आखिरी कदम उठाया । विशिष्ट रूप से अभि. सा. 2, 3 और 10 दोनों पक्षों के नातेदार हैं और इसलिए अभिलेख पर इसके प्रतिकूल किसी प्रचुर सामग्री के अभाव में, उनके बयानों पर अविश्वास करने का किसी प्रकार का कोई ऐसा कारण नहीं है जो मृतका के विवाह के पूर्व से लेकर दुर्भाग्यपूर्ण अंत तक की घटनाओं के बढ़ते क्रम को कम करता हो । उल्लेखनीय रूप से, दहेज की मांग की शुरूआत विवाह के पूर्व से ही हुई और 40,000/- रुपए के "दावे" के विरुद्ध मृतका का परिवार नकदी के रूप में 25,000/- रुपए की व्यवस्था कर सका । जितना संभव हो सका उतने आभूषण भी दिए गए । दहेज की इस मांग का बीज विवाह के पूर्व से ही पड़ गया था, क्योंकि अभि. सा. 2, 3 और 10 द्वारा वर्णित उसके बाद की घटनाएं, जो कि मृतका द्वारा उनके सामने प्रकट की गईं थीं और वे इन घटनाओं की कुछ प्रस्तुतियों के भी साक्षी हैं, वह घृणास्पद भाग मानी जा सकती हैं जिनके परिणामस्वरूप मृतका की दयनीय मृत्यु हुई । अभि. सा. 2, 3 और 10 के परिसाक्ष्य का मुख्य सार उनकी प्रतिपरीक्षा में भी अडिग रहा है जो उन आवश्यक तथ्यों से संबंधित है जिनसे अपीलार्थी को आरोपित किए गए

अपराधों के संघटकों का गठन होता है । इस न्यायालय की राय में, उनके बयान में आई छुट-पुट और निरर्थक विसंगतियों से उनके वृत्तांत का वह सार नष्ट नहीं हो जाता है जिनसे अन्यथा धारा 304ख, 498क और अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन अपराधों की पूर्व-अपेक्षाओं का गठन करने के लिए भरपूर सामग्री प्रस्तुत होती है । इस न्यायालय की राय में, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् एक संभव दृष्टिकोण नहीं है । दूसरी ओर, इस न्यायालय का यह मत है कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष विद्यमान तथ्यों और परिस्थितियों में निकलने वाला एकमात्र संभव निष्कर्ष नहीं है । इस प्रकार, सुसंगत तथ्यात्मक और विधिक पहलुओं पर संचयी रूप से विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय की यह निःसंकोच राय है कि अभियोजन पक्ष आरोपों के संबंध में अपीलार्थी की दोषिता को किसी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में सफल रहा है । पुनरावृत्ति करते हुए, अभागी मृतका के विवाह के पूर्व से लेकर उसकी अस्वाभाविक मृत्यु तक की घटनाओं की निरंतरता न केवल परस्पर अटूट कड़ी प्रस्तुत करती है अपितु उसे दी गई असहनीय मानसिक और शारीरिक यातना को भी प्रदर्शित करती है जिसने उसे ऐसा कठोर कदम उठाने के लिए उत्प्रेरित किया । इस संबंध में अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य स्पष्ट रूप से आनुषंगिक, संगत और सुसम्बद्ध हैं । यद्यपि अभिलेख पर की सामग्री से यह उपदर्शित होता है कि मृतका ने अपने माता को यौवनकाल में ही खो दिया था और उसे उसके पिता से भी प्यार और स्नेह नहीं मिला जिसने दूसरा विवाह कर लिया था और मृतका थोड़ी संवेदनशील और आत्म-केंद्रित थी, तो भी यह सुझाव देने के लिए ऐसी कोई आकस्मिक घटना नहीं है कि वह किसी मानसिक असंतुलन या सनक से ग्रसित थी जिससे कि किसी बाध्यकारी कारण के बिना आत्महत्या करने की बात अधिसंभाव्य हो सके । दूसरी ओर, अभिलेख पर के साक्ष्य से स्पष्ट शब्दों में यह प्रदर्शित होता है कि वह अपीलार्थी की 50,000/- रुपए की अतिरिक्त रकम के रूप में दहेज की सतत और पीड़ादायक मांग और अपनी दयनीय स्थिति के बारे में शिकायत करती रही थी तथा उसे निरन्तर और क्रूर उत्पीड़न तथा दुर्व्यवहार करने के परिणामस्वरूप गंभीर शारीरिक और मानसिक यातना झेलनी पड़ी थी । उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए, यह न्यायालय तद्द्वारा उच्च न्यायालय द्वारा यथा अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडोदश की इसके पूर्ण रूप में अभिपुष्टि करता है । (पैरा 19, 30, 31 और 32)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2015]	2015 (3) स्केल 174 : **राजिन्द्र सिंह** बनाम **पंजाब राज्य** ;	10
[2015]	2015 (1) स्केल 250 : **शेर सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	29
[2014]	(2014) 4 एस. सी. सी. 129 : **सुरिन्द्र सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	29
[2014]	2014 (5) स्केल 641 : **दिनेश** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	29
[2000]	(2000) 5 एस. सी. सी. 207 : **कांस राज** बनाम **पंजाब राज्य** ।	29

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2012 की दांडिक अपील सं. 1207.

2000 की दांडिक अपील सं. 1076 में कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलोर के तारीख 15 फरवरी, 2007 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री राजेश महाले और क्रुटिन आर. जोशी

प्रत्यर्थी की ओर से — सुश्री अनीता शिनॉय

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अमितव राय ने दिया ।

न्या. राय – अपीलार्थी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और 304ख तथा दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 3, 4 और 6 के अधीन अपराध कारित करने के आरोप से उसकी दोषमुक्ति के निर्णय को उलटे जाने से व्यथित होकर 2000 की दांडिक अपील सं. 1076 में कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलोर द्वारा तारीख 15 फरवरी, 2007 को दिए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध यह चुनौती प्रस्तुत की है ।

2. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना ।

3. अभियोजन का पक्षकथन मृतका गंगालक्ष्मा (संक्षेप में "गंगा") की

पड़ोसिन श्रीमती शिवम्मा द्वारा दर्ज कराई गई इस मौखिक सूचना से प्रकट होता है कि वह तारीख 8 सितम्बर, 1993 को अपराह्न में लगभग 5.30 बजे जब अपने मकान पर लौटी तो उसने गंगा को गले में बंधी एक रस्सी द्वारा छत से लटकते हुए पाया । उसने यह भी उल्लेख किया कि चारपाई पर एक फोल्डिंग कुर्सी पाई गई थी । इत्तिलाकर्ता के अनुसार, यह दृश्य देखकर वह बेहोश हो गई और जब उसे होश आया तो उसने पाया कि तब तक छत की कुंडी से गंगा का शव हटा लिया गया था और मकान में रखा हुआ था । तथापि, उसने उस व्यक्ति या अभिकरण के बारे में अनभिज्ञता व्यक्त की जिसने शव नीचे उतारा था ।

4. यह सूचना प्राप्त होने पर हीब्बल पुलिस थाना, बंगलोर शहर ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 174 के अधीन 1993 के यूडीआर सं. 34 के रूप में इसे दर्ज किया । तारीख 9 सितम्बर, 1993 को एम. एस. रम्मया चिकित्सा महाविद्यालय, बंगलोर में शव की शव-परीक्षा की गई, जहां यह पुष्टि की गई कि मृत्यु फांसी लगाने के परिणामस्वरूप श्वासोवरुद्ध होने के कारण हुई थी । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट से भी प्रकट होता है कि मृतका की गर्दन पर सामने, दोनों ओर तथा पीछे बंधने का चिह्न था । बांधने वाली सामग्री एक हल्की हरी नाइलॉन की रस्सी पाई गई जिसकी लंबाई 286 से. मी. और व्यास 4 से. मी. था । डा. जे. किरन ने, जिसने मरणोत्तर परीक्षा की थी, रिपोर्ट में यह उल्लेख किया कि रस्सी बंधे हुए चिह्न में पूरी-पूरी आ रही है और शरीर का भार सहन करने योग्य है ।

5. चाहे जो भी स्थिति हो, मृतका के मामा श्री सिद्दागंगैया ने तारीख 10 सितम्बर, 1993 को उसी पुलिस थाने में तारीख 8 सितम्बर, 1993 को अपनी भांजी की मृत्यु होने के बारे में एक शिकायत दर्ज कराई । इस सूचना से यह प्रकट होता है कि तारीख 20 जून, 1991 को मृतका का विवाह अपीलार्थी के साथ हुआ था और इस अवसर पर सोने के आभूषण और 20,000/- रुपए दहेज के मद्दे दिए गए थे । यह अभिकथन किया गया है कि विवाह के लगभग छह माह पश्चात् तक पति-पत्नी प्रसन्नतापूर्वक रहे और उसके पश्चात् मृतका के पति (इस अपील में अपीलार्थी) के नायक समुदाय की एक अन्य लड़की के साथ कतिपय अयुक्त संबंध हो गए और परिणामस्वरूप वह मृतका का तिरस्कार करने लगा और दहेज के रूप में 50,000/- रुपए की मांग करके उसे अभित्रस्त और तंग करने के अतिरिक्त नशे में धुत होकर अक्सर उस पर हमला करता था । यह भी उल्लेख किया गया है कि मृतका अपनी मृत्यु से दो

माह पूर्व इत्तिलाकर्ता के गांव आई थी और अपने पति द्वारा किए गए उत्पीड़न को सहन कर पाने में असमर्थ होने के कारण वहां एक माह ठहरी थी । इत्तिलाकर्ता ने यह प्रकथन किया कि उस दौरान मृतका ने उसे और उसकी पत्नी को अपीलार्थी-पति द्वारा की जा रही दहेज के रूप में 50,000/- रुपए की मांग के बारे में बताया था । इत्तिलाकर्ता ने लगभग उसी समय की अर्थात् घटना के दो माह पूर्व की उस एक घटना के बारे में भी उल्लेख किया जब अपीलार्थी-पति मध्यरात्रि में नशे की हालत में हाथ में चाकू लिए हुए दासनपुरा गांव में उनके घर आया था । इत्तिलाकर्ता के अनुसार, अपीलार्थी ने धमकी दी कि यदि मृतका ने 50,000/- रुपए का प्रबंध नहीं किया तो वह उसे (मृतका को) और उसके परिवार के सदस्यों को जान से मार देगा । इत्तिलाकर्ता ने उसके पश्चात् इस एक और घटना का उल्लेख किया कि जब मृतका उनके घर आई थी तो उसने कहा था कि उसके पति ने उसकी हत्या करने की कोशिश की थी और उसने उन्हें अपने शरीर पर हमले के चिह्न भी दिखाए थे । इत्तिलाकर्ता ने यह भी कथन किया कि मृतका ने उन्हें यह बताया था कि यदि उसके पति द्वारा मांगे गए 50,000/- रुपए संदत्त नहीं किए जाते हैं, तो वह उसकी हत्या कर देगा । इत्तिलाकर्ता के अनुसार, वह इसके पश्चात् अपीलार्थी के मकान पर गया था और तब फिर मृतका ने अपनी यह आशंका दोहराई थी कि यदि 50,000/- रुपए संदत्त नहीं किए गए, तो उसे तंग और अभित्रस्त किया जाता रहेगा । इत्तिलाकर्ता ने यह भी उल्लेख किया कि तारीख 9 सितम्बर, 1993 को अपराह्न में लगभग 5.00 बजे उसके एक नातेदार सीनप्पा द्वारा उसकी भांजी (गंगा) की फांसी लगाने से हुई मृत्यु का समाचार देने पर वह और उसके माता-पिता अपराह्न में लगभग 12.30 बजे मृतका के मकान पर गए और वहां शव पड़ा हुआ देखा । यह अभिवाक् करते हुए उपयुक्त विधिक कार्यवाही की ईप्सा की गई कि उन सभी ने मृतका की गर्दन के चारों ओर बंधने के चिह्न देखे थे और उसकी मृत्यु लगातार की जा रही दहेज की मांग और उसे तंग और दुर्व्यवहार करने से संबंधित होने के कारण संदिग्ध परिस्थितियों में हुई है । इस सूचना के आधार पर पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन 1993 की आपराधिक रिपोर्ट सं. 318 दर्ज की ।

6. अन्वेषण किया गया और अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क तथा अधिनियम की धारा 3, 4 और 6 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया गया । आरोपों से

सामना कराए जाने पर अपीलार्थी ने उनसे इनकार किया और जिनके लिए उसका विचारण किया गया । अभियोजन पक्ष ने कई साक्षियों की परीक्षा कराई जिनमें अभि. सा. 1 के रूप में डा. जे. किरन, जिसने मरणोत्तर परीक्षा की थी, अभि. सा. 2 के रूप में इत्तिलाकर्ता सिद्दागंगप्पा, अभि. सा. 3 के रूप में मृतका के दादा गोविंदय्या, अभि. सा. 4 के रूप में अभि. सा. 3 के भतीजे गोविंदप्पा, अभि. सा. 10 के रूप में मृतका की भतीजी यशोधा तथा अन्वेषक अधिकारी सम्मिलित हैं । अन्य के साथ-साथ, मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श पी-1) और इसमें ऊपर उल्लिखित सूचना/शिकायत को विचारण में साबित किया गया । अपीलार्थी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपनी परीक्षा के दौरान अपने प्रत्याख्यान पर कायम रहा किंतु प्रतिरक्षा में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया ।

7. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् अभियोजन के पक्षकथन पर विश्वास नहीं किया और परिणामस्वरूप सभी आरोपों के संबंध में अपीलार्थी की दोषमुक्ति का निष्कर्ष अभिलिखित किया । यह मत व्यक्त किया गया कि अभि. सा. 3, 4 और 10 के परिसाक्ष्य में के विरोधाभासों से अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन अविश्वसनीय हो गया है । विचारण न्यायालय ने अभियोजन के पक्षकथन को इस आधार पर भी नामंजूर कर दिया कि दहेज की मांग के अभिकथन घटना के पश्चात् लगाए गए हैं न कि इससे पूर्व । अभियोजन पक्ष इस अभ्यारोपण के संबंध में कोई साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहा है कि अपीलार्थी के एक अन्य लड़की से अयुक्त संबंध हो गए थे । ये बातें भी आरोपों से उसकी दोषमुक्ति के समर्थन में उल्लिखित हैं ।

8. कर्नाटक राज्य द्वारा फाइल की गई दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में कर्नाटक उच्च न्यायालय ने इन सभी आरोपों को दोहराते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध दोषिता का निष्कर्ष निकाला और इस प्रकार उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 498क और 304ख तथा अधिनियम की धारा 3, 4 और 6 के अधीन दोषसिद्ध किया । चुनौती दिए गए विनिश्चय द्वारा अपीलार्थी को (क) भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध के लिए सात वर्ष के कारावास और 5,000/- रुपए के जुर्माने ; (ख) भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन तीन वर्ष के कारावास और 5,000/- रुपए के जुर्माने ; (ग) अधिनियम की धारा 3 के अधीन पांच वर्ष के कारावास और 25,000/- रुपए के जुर्माने ; और (घ) अधिनियम की धारा 4 के अधीन छह माह के कारावास और 1,000/- रुपए के जुर्माने का दंडादेश दिया । जुर्माने

के संदाय में व्यतिक्रम करने की दशा में अतिरिक्त कारावास भोगने का भी उपबंध किया गया । तथापि, सभी दंडादेश साथ-साथ चलने का आदेश किया गया । तथापि, अपीलार्थी को उसके द्वारा विचारण के समय अभिरक्षा में भोगी गई अवधि का अधिनिर्णीत कारावास से मुज़रा करने का अनुतोष प्रदान किया गया ।

9. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा यह पुरजोर दलील दी गई कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलेख पर के साक्ष्य का उचित मूल्यांकन करने के पश्चात् दोषमुक्ति का आदेश अभिलिखित किया गया था, इसलिए उच्च न्यायालय ने इस आदेश को उलटकर गंभीर गलती की है । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, यद्यपि मृत्यु मृतका द्वारा आत्महत्या करने के परिणामस्वरूप और विवाह के केवल दो वर्ष के उपरांत ही हुई थी और क्योंकि जिन अपराधों के लिए अपीलार्थी को आरोपित किया गया था उनके आवश्यक संघटक साबित नहीं हुए थे, इसलिए विद्वान् विचारण न्यायालय ने ठीक ही उसे दोषमुक्त किया था । विद्वान् काउंसेल ने, विशिष्ट रूप से अभि. सा. 2, 3, 4 और 10 के परिसाक्ष्य के प्रतिनिर्देश करते हुए, इस बात पर जोर दिया कि तात्विक बातों पर प्रकटतः विरोधाभासों के आधार पर अभियोजन के वृत्तांत को पूरी तरह से अविश्वसनीय ठहराया गया था और उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषमुक्ति को उलटकर विधि और तथ्य की भूल की है । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि दहेज की मांग करने और मृतका को तंग तथा उसके साथ क्रूरता करने के संबंध में किसी भरोसेमंद और विश्वासप्रद साक्ष्य के अभाव में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया प्रतिकूल दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से गलत है और यदि आक्षेपित निर्णय और आदेश को कायम रखा जाता है तो इसके परिणामस्वरूप न्याय की हानि होगी । उपरोक्त बात पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलेख पर के साक्ष्य के सिहांवलोकन के आधार पर व्यक्त किया गया मत, आश्वस्त रूप से एक न्यायसंगत मत होने के कारण, यह दोषमुक्ति को उलटे जाने का मामला नहीं है, जैसा कि अनेक न्यायिक निर्णयों द्वारा निश्चायक रूप से प्रतिपादित किया गया है, और इस प्रकार इस आधार पर भी आक्षेपित निर्णय और आदेश में हस्तक्षेप किया जाना चाहिए ।

10. इसके उत्तर में, राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल ने आक्षेपित विनिश्चय की संधार्यता का समर्थन करते हुए जोरदार रूप से यह दलील दी

कि अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी के विरुद्ध आरोपों को यथेष्ट रूप में साबित किया है । विद्वान् काउंसेल ने अभि. सा. 2, 3, 4 और 10 के परिसाक्ष्य में छुट-पुट विसंगतियां होने की बात को, पूर्णतः अप्रासंगिक होने के कारण, खारिज करते हुए यह प्रकथन किया कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण एक संभाव्य दृष्टिकोण नहीं था और इसलिए अपील में उसे न्याय के हित में ठीक ही उलटा गया है । राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल के अनुसार, अभिलेख पर के साक्ष्य से अपीलार्थी पर आरोपित अपराधों के सभी संघटक असंदिग्ध रूप से सिद्ध होते हैं और उच्च न्यायालय द्वारा निकाला गया दोषिता का निष्कर्ष एकमात्र संभव निष्कर्ष है । मृतका से सतत रूप से दहेज की मांग करने, उसे तंग करने और उसके साथ दुर्व्यवहार करने से संबंधित अभियोजन साक्षियों द्वारा यथा प्रमाणित तथ्यों का उल्लेख करते हुए विद्वान् काउंसेल ने इस बात पर जोर दिया कि अपीलार्थी को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों के लिए ठीक ही दोषसिद्ध किया गया है । विद्वान् काउंसेल ने यह आग्रह किया कि यह ऐसा मामला नहीं है जहां विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण अभिलेख पर की सामग्री के आधार पर अपनाए जा सकने वाले दो दृष्टिकोणों में से एक हो, और इसमें हस्तक्षेप करने के विरुद्ध दी गई दलील, दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में साक्ष्य की संवीक्षा करने के मानदंडों को अधिकथित करने वाले पूर्ववर्ती निर्णयों के आधार पर, पूर्णतः भ्रामक है और इसलिए अमान्य है । उपरोक्त दलीलों की पुष्टि के लिए **राजिन्द्र सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया गया ।

11. इस न्यायालय के समक्ष यथा प्रस्तुत सामग्री और विरोधी प्रकथनों का सम्यक् रूप से विश्लेषण किया गया । घटनाओं के यथा स्वीकृत क्रम को देखते हुए संदेह की कोई गुंजाइश नहीं है कि दुर्भाग्यपूर्ण घटना, जिसमें गंगा की मृत्यु हुई, अपीलार्थी के साथ उसका विवाह होने के मुश्किल से दो वर्ष उपरांत घटित हुई थी । यह बात भी असंदिग्ध है कि मृत्यु सामान्य परिस्थितियों से भिन्न परिस्थितियों में हुई थी ।

12. प्रस्तुत अपील में, यह न्यायालय यद्यपि साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए आबद्धकर नहीं है, किंतु प्रस्तुत मामला दोषमुक्ति को उलटे जाने का मामला होने के कारण हमने यह उचित समझा कि यह कवायद

---

[1] 2015 (3) स्केल 174.

करना, यद्यपि आवश्यक सीमा तक, समीचीन होगा । उन अपराधों, जिनसे अपीलार्थी को आरोपित किया गया है और अंततोगत्वा उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया गया है, के अनन्य संघटकों पर विचार करते हुए यह और भी समीचीन हो जाता है ।

13. अतः, अपराधों को गठित करने वाले अभ्यारोपणों से विशिष्ट रूप से अभि. सा. 2, 3, 4 और 10 के परिसाक्ष्य का महत्वपूर्ण सरोकार है इसलिए उनका पुनर्मूल्यांकन करना होगा । अभि. सा. 2, सिद्दागंगप्पा द्वारा शपथ पर किया गया कथन उसके द्वारा शिकायत में विवाह, अपीलार्थी की दहेज की मांग, उसके द्वारा मृतका को तंग, हमला और अभित्रस्त करने और मृतका द्वारा इसके परिणामस्वरूप आत्महत्या करने से संबंधित तथ्यों की बाबत दिए गए वृत्तांत की सारभूत पुनरावृत्ति है । इस साक्षी ने अपीलार्थी को उसके चचेरे भाई का पुत्र होने के कारण अपीलार्थी के मौसा के रूप में अपना परिचय कराया था । यह साक्षी मृतका का भी मामा है । उसका यह दावा है कि मृतका की माता की मृत्यु हो जाने के पश्चात् उसने उसका पालन-पोषण किया था । इस साक्षी के अनुसार, अपीलार्थी ने विवाह से लगभग तीन या चार माह पूर्व दहेज के रूप में 40,000/- रुपए नकद और आभूषण की भी मांग की थी, जिस पर वह 25,000/- रुपए नकद और आभूषण देने के लिए सहमत हुआ था । इस साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि विवाह के अनुष्ठापन से लगभग बीस दिन पूर्व उसने अपीलार्थी को 25,000/- रुपए दिए थे । इस साक्षी ने यह साक्ष्य दिया कि विवाह के छह माह पश्चात् अपीलार्थी ने मृतका पर उससे (इस साक्षी से) 50,000/- रुपए उसकी डेयरी की गायों को बेचकर लाने के लिए हमला करना और उसे प्रपीड़ित करना आरंभ कर दिया । इस साक्षी ने यह कथन किया कि अपीलार्थी ने उसके पश्चात् लगभग 10-12 बार ऐसा ही आचरण दोहराया और मृतका को इस साक्षी से रकम लाने के लिए भी भेजा । इस साक्षी ने शपथ पर अभिव्यक्त रूप से यह कथन किया है कि ये तथ्य उसे मृतका द्वारा प्रकट किए गए थे । इस साक्षी ने यह कथन किया कि उसके पश्चात् मृतका को ऐसे ही तंग करना और उस पर हमले करना लगभग एक से डेढ़ वर्ष तक गंगा के आत्महत्या करने तक जारी रहा क्योंकि उसके लिए स्थिति असहनीय हो गई थी । इस साक्षी ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि वह मृतका की मृत्यु की सूचना प्राप्त होने पर अपने माता-पिता के साथ मृतका की ससुराल गया था । इस साक्षी द्वारा यह कथन किया गया है कि उसने उसी तारीख को हीब्बल पुलिस थाने में एक शिकायत

दर्ज कराई थी ।

14. इस साक्षी ने प्रतिपरीक्षा में यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसने 80,000/- रुपए में अपनी भूमि बेची थी, जिसमें से 40,000/- रुपए सोने के आभूषण बनवाने में खर्च किए थे । यह भी कथन किया गया कि विवाह का खर्च उठाने के लिए परिवार ने लगभग 15,000/- रुपए के खड़े वृक्ष बेचे थे । तथापि, इस साक्षी ने यह उपदर्शित किया कि मृतका ने हालांकि बचपन में ही पढ़ाई छोड़ दी थी और कुछ संवेदनशील प्रकृति की थी तथा आस-पड़ोस में इस बात की जानकारी थी । इस साक्षी द्वारा यह भी कथन किया गया कि गर्भ धारण न करने के कारण भी वह कुछ परेशान रहती थी ।

15. अभि. सा. 3, गोविंदय्या नातेदारी में अभियुक्त का दूर का चाचा है । वह मृतका का भी दादा है । उसने शपथ पर यह दोहराया कि अपीलार्थी ने विवाह से पूर्व दहेज के रूप में 40,000/- रुपए की मांग की थी और इस मांग के बदले 25,000/- रुपए दिए गए थे । इस साक्षी ने यह भी कथन किया कि इन रुपयों के अतिरिक्ति विवाह में आभूषण भी दिए गए थे । इस साक्षी के अनुसार, विवाह की तारीख से लगभग एक वर्ष के पर्यवसान से पूर्व मृतका उसके घर आई थी और यह बताया था कि उसे उसके पति द्वारा तंग किया जाता है और वह अपना डेयरी का कारबार बढ़ाने के लिए दहेज के रूप में और 50,000/- रुपए की मांग कर रहा है । इस साक्षी ने, उत्तर में, अपनी वित्तीय असमर्थता व्यक्त की । तथापि, इस साक्षी ने यह कथन किया कि मृतका के लगभग एक सप्ताह तक उसके पास ठहरने के दौरान अपीलार्थी उनके मकान पर आया था और शराब के नशे में हंगामा खड़ा किया था और अपनी 50,000/- रुपए की मांग दोहराते हुए उस पर और मृतका पर हमला करने की धमकी दी थी । इस साक्षी के अनुसार, यह सब गंगप्पा, गोविंदप्पा और सीनप्पा की मौजूदगी में घटित हुआ था । इस साक्षी ने आगे यह कथन किया कि उक्त घटना के आठ दिन पश्चात् अपीलार्थी उसके मकान पर आया और मृतका को अपने साथ ले गया और उसके पश्चात् एक सप्ताह के भीतर गंगा ने आत्महत्या कर ली । इस साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसने अपीलार्थी के मकान में मृतका का शव देखा था । उसने इस बात की अभिपुष्टि की कि अभि. सा. 2 ने घटना के संबंध में एक शिकायत दर्ज कराई थी । उसने यह भी राय व्यक्त की कि गंगा ने आत्महत्या अपीलार्थी की और दहेज लाने की अवैध मांग को पूरा करने में असफल रहने पर उसके द्वारा उसे असहनीय रूप से तंग और दुर्व्यवहार करने के कारण की थी ।

16. अभि. सा. 4, गोविंदप्पा अभि. सा. 3, गोविंदय्या का भतीजा है । उसकी प्रतिपरीक्षा मृतका की मृत्यु की सूचना प्राप्त होने के पश्चात् उसकी ससुराल में जाने तक सीमित है । इस साक्षी को पक्षद्रोही घोषित किया गया था और उसकी प्रतिपरीक्षा की गई थी जिसके अनुक्रम में उसने अपीलार्थी पर दोषारोपण करते हुए अन्वेषण के दौरान किए गए अपने कथनों से साधारणतया इनकार किया ।

17. अभि. सा. 10, यशोधा, सिद्दागंगप्पा (अभि. सा. 2) की पत्नी होने के अतिरिक्त मृतका की चाची है । उसने अपीलार्थी तथा उसके माता-पिता द्वारा विवाह से पूर्व 40,000/- रुपए के साथ-साथ आभूषणों की मांग करने के बारे में अभि. सा. 2 और 3 द्वारा किए गए कथनों की अभिपुष्टि की । उसने यह भी कथन किया कि अंतिम रूप से तय हुए अनुसार 25,000/- रुपए नकद और आभूषण विवाह से लगभग एक सप्ताह पूर्व अपीलार्थी और उसके माता-पिता को सौंपे गए थे । इस साक्षी ने यह कथन किया कि विवाह के पश्चात् चार माह उपरांत जब गंगा अपने घर आई, तब उसने यह बताया कि अपने डेयरी कारबार को बढ़ाने के लिए अपीलार्थी द्वारा और 50,000/- रुपए की मांग के संबंध में उसे तंग किया जा रहा है और हमला किया जाता है । इस साक्षी ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि उसके पश्चात् 7-8 माह के पश्चात् गंगा पुनः उसके पास आई थी और उसने इसी कारण को लेकर अपीलार्थी द्वारा उसे तंग करने, गाली देने और हमला करने की बात दोहराई थी । इस साक्षी के अनुसार, उसी दिन अपीलार्थी देर रात्रि में उनके घर आया था और वहां से गंगा को ले गया था । इस साक्षी ने यह कथन किया कि घटना से लगभग दो माह पूर्व गंगा पुनः उनके घर आई थी और उसे यह बताया था कि वैसा ही यातनापूर्ण व्यवहार किया जा रहा है । इस साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि उसके पश्चात् एक माह से थोड़े समय बाद अपीलार्थी उनके घर आया और 50,000/- रुपए की अपनी मांग के संबंध में हंगामा किया और रकम न देने पर गोविंदय्या (अभि. सा. 3) को मारने की भी धमकी दी । इस साक्षी ने यह कथन किया कि यह सब गंगप्पा (अभि. सा. 2), गोविंदप्पा (अभि. सा. 4) और श्रीनिवास नामक व्यक्ति की मौजूदगी में घटित हुआ था । इस साक्षी के अनुसार, उसके लगभग एक माह पश्चात् गंगा की अस्वाभाविक मृत्यु हो गई । इस साक्षी ने यह भी कथन किया कि जब वे मृतका की ससुराल में गए तो उन्होंने उसकी गर्दन पर बंधने का चिह्न देखा था ।

18. जैसा कि इसमें ऊपर उल्लेख किया गया है, चिकित्सीय राय में

स्पष्ट शब्दों में यह बताया गया है कि मृतका की मृत्यु फांसी लगाने के परिणामस्वरूप श्वासावरोध के कारण हुई थी । मृतका की गर्दन पर सामने, दाईं और बाईं तरफ तथा पीछे बंधने के चिह्न भी देखे गए थे ।

19. हमारे आंकलन के अनुसार, तात्विक साक्षियों के परिसाक्ष्य से, जिनका सार ऊपर दिया गया है, युक्तियुक्त संदेह के परे यह साबित होता है कि मृतका को विवाह के कुछ माह पश्चात् से निरंतर इतना तंग किया गया, उस पर हमला किया गया और उसे अभित्रस्त किया गया कि उसने असहनीय क्रूरता सहन करने में असमर्थ होने पर ऐसी शारीरिक और मानसिक यातना से छुटकारा पाने के लिए अपने जीवन का अंत करने का आखिरी कदम उठाया । विशिष्ट रूप से अभि. सा. 2, 3 और 10 दोनों पक्षों के नातेदार हैं और इसलिए अभिलेख पर इसके प्रतिकूल किसी प्रचुर सामग्री के अभाव में, उनके बयानों पर अविश्वास करने का किसी प्रकार का कोई ऐसा कारण नहीं है जो मृतका के विवाह के पूर्व से लेकर दुर्भाग्यपूर्ण अंत तक की घटनाओं के बढ़ते क्रम को कम करता हो । उल्लेखनीय रूप से, दहेज की मांग की शुरूआत विवाह के पूर्व से ही हुई और 40,000/- रुपए के "दावे" के विरुद्ध मृतका का परिवार नकदी के रूप में 25,000/- रुपए की व्यवस्था कर सका । जितना संभव हो सका उतने आभूषण भी दिए गए । दहेज की इस मांग का बीज विवाह के पूर्व से ही पड़ गया था, क्योंकि अभि. सा. 2, 3 और 10 द्वारा वर्णित उसके बाद की घटनाएं, जो कि मृतका द्वारा उनके सामने प्रकट की गई थीं और वे इन घटनाओं की कुछ प्रस्तुतियों के भी साक्षी हैं, वह घृणास्पद भाग मानी जा सकती हैं जिनके परिणामस्वरूप मृतका की दयनीय मृत्यु हुई । अभि. सा. 2, 3 और 10 के परिसाक्ष्य का मुख्य सार उनकी प्रतिपरीक्षा में भी अडिग रहा है जो उन आवश्यक तथ्यों से संबंधित है जिनसे अपीलार्थी को आरोपित किए गए अपराधों के संघटकों का गठन होता है । हमारी राय में, उनके बयान में आई छुट-पुट और निरर्थक विसंगतियों से उनके वृत्तांत का वह सार नष्ट नहीं हो जाता है जिनसे अन्यथा धारा 304ख, 498क और अधिनियम की धारा 3 और 4 के अधीन अपराधों की पूर्व-अपेक्षाओं का गठन करने के लिए भरपूर सामग्री प्रस्तुत होती है । हमारी राय में, विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए संपूर्ण साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् एक संभव दृष्टिकोण नहीं है । दूसरी ओर, हमारा यह मत है कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष विद्यमान तथ्यों और परिस्थितियों में निकलने वाला एकमात्र

संभव निष्कर्ष नहीं है ।

20. इस प्रक्रम पर भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और 498क तुरंत संदर्भ के लिए इसमें नीचे उद्धृत की जाती हैं :–

"**304ख. दहेज मृत्यु** – (1) जहां किसी स्त्री की मृत्यु दाह या शारीरिक क्षति द्वारा कारित की जाती है या उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हो जाती है और यह दर्शित किया जाता है कि उसकी मृत्यु के कुछ पूर्व उसके पति ने या पति के किसी नातेदार ने, दहेज की किसी मांग के लिए, या उसके संबंध में, उसके साथ क्रूरता की थी या उसे तंग किया था वहां ऐसी मृत्यु को 'दहेज मृत्यु' कहा जाएगा और ऐसा पति या नातेदार उसकी मृत्यु कारित करने वाला समझा जाएगा ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए 'दहेज' का वही अर्थ है जो दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 (1961 का 28) की धारा 2 में है ।

(2) जो कोई दहेज मृत्यु कारित करेगा वह कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष से कम की नहीं होगी किंतु जो आजीवन कारावास तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा ।

498क. किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा उसके प्रति क्रूरता करना – जो कोई, किसी स्त्री का पति या पति का नातेदार होते हुए, ऐसी स्त्री के प्रति क्रूरता करेगा, वह कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए 'क्रूरता' से निम्नलिखित अभिप्रेत है –

(क) जानबूझकर किया गया कोई आचरण जो ऐसी प्रकृति का है जिससे उस स्त्री को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित करने की या उस स्त्री के जीवन, अंग या स्वास्थ्य को (जो चाहे मानसिक हो या शारीरिक) गंभीर क्षति या खतरा कारित करने के लिए उसे करने की सम्भावना है ; या

(ख) किसी स्त्री को तंग करना, जहां उसे या उससे संबंधित किसी व्यक्ति को किसी सम्पत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति

के लिए किसी विधिविरुद्ध मांग को पूरी करने के लिए प्रपीड़ित करने की दृष्टि से या उसके अथवा उससे संबंधित किसी व्यक्ति के ऐसी मांग पूरी करने में असफल रहने के कारण इस प्रकार तंग किया जा रहा है ।"

21. धारा 304ख के अधीन "दहेज मृत्यु" को परिभाषित करते हुए, दाह या शारीरिक क्षति के परिणामस्वरूप स्त्री की मृत्यु कारित होने या उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हो जाने और यह सबूत होने पर कि उसकी मृत्यु के कुछ पूर्व उसके पति ने या पति के किसी नातेदार ने, दहेज की किसी मांग के लिए, या उसके संबंध में, उसके साथ क्रूरता की थी या उसे तंग किया था तो पति के विरुद्ध एक कानूनी उपधारणा की जाएगी, जबकि धारा 498क में यदि स्त्री के साथ क्रूरता की जाती है तो पति या उसके नातेदार के लिए दंड का उपबंध किया गया है । भारतीय दंड संहिता की धारा 498क से संलग्न स्पष्टीकरण में "क्रूरता" को परिभाषित किया गया है जिससे जानबूझकर किया गया कोई ऐसा आचरण अभिप्रेत है जो ऐसी प्रकृति का है जिससे उस स्त्री को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित करने की या उस स्त्री के जीवन, अंग या स्वास्थ्य को (जो चाहे मानसिक हो या शारीरिक) गंभीर क्षति या खतरा कारित करने के लिए उसे करने की सम्भावना है या किसी स्त्री को ऐसी मांग पूरी करने में असफल रहने के कारण उसे या उससे संबंधित किसी व्यक्ति को प्रपीड़ित करने की दृष्टि से तंग करना है ।

22. भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख में यथा प्रयुक्त "दहेज" शब्द को वही अर्थ दिया गया है जैसा कि दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 2 में है । "दहेज" को परिभाषित करते हुए अधिनियम की धारा 2 को इसमें नीचे उद्धृत किया जाता है :–

"**दहेज की परिभाषा** – इस अधिनियम में, 'दहेज' से कोई ऐसी सम्पत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति अभिप्रेत है जो विवाह के समय या उसके पूर्व या पश्चात् किसी समय –

(क) विवाह के एक पक्षकार द्वारा विवाह के दूसरे पक्षकार को ; या

(ख) विवाह के किसी भी पक्षकार के माता-पिता द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा विवाह के किसी भी पक्षकार को या किसी अन्य व्यक्ति को,

उक्त पक्षकारों के विवाह के संबंध में या तो प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः दी गई है या दी जाने के लिए करार की गई है, किंतु उन व्यक्तियों के संबंध में जिन्हें मुस्लिम स्वीय विधि (शरीयत) लागू होती है, मेहर इसके अंतर्गत नहीं है ।

4. [***]

स्पष्टीकरण 2 – 'मूल्यवान प्रतिभूति' पद का वही अर्थ है जो भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 30 में है ।"

23. जैसा कि उपबंधित परिभाषा में अति स्पष्ट रूप में, सभी अनावश्यक ब्यौरों को छोड़कर, "दहेज" से ऐसी कोई संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति संज्ञापित है जिसका विवाह से घनिष्ठ संबंध है ।

24. अधिनियम की धारा 3 में ऐसे व्यक्ति के लिए शास्ति विहित की गई है जो इस अधिनियम के प्रवृत्त होने के पश्चात् दहेज देता है या लेता है या दहेज देने या लेने के लिए दुष्प्रेरित करता है । इस धारा में इसके उपयोजन को ऐसे उपहारों के संबंध में अपवर्जित किया गया है जो वधू/वर को विवाह के समय इस विषय में किसी मांग के बिना दिए जाते हैं और यदि ऐसे उपहार अधिनियम के अधीन विरचित नियमों के अनुसार बनाई गई सूची में प्रविष्ट किए जाते हैं । किसी वर/वधू के माता-पिता या अन्य नातेदार या संरक्षक से किसी दहेज की, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, की गई मांग के लिए शास्ति अधिनियम की धारा 4 में उपबंधित की गई है ।

25. उपरोक्त उपबंधों के संयुक्त वाचन से दहेज की प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से की जाने वाली किसी मांग को न केवल हतोत्साहित करने अपितु ऐसे कृत्य को दंडित करने का श्रेयस्कर विधायी आशय प्रमाणित होता है । इस बढ़ती जा रही सामाजिक बुराई पर विधान-मंडल की स्पष्ट चिंता दहेज की मांग पर आधारित है और परिणामतः भारतीय दंड संहिता में 1983 के अधिनियम सं. 46 और 1986 के अधिनियम सं. 43 द्वारा उत्तरवर्ती संशोधनों द्वारा क्रमशः धारा 498क और 304ख सम्मिलित की गई । न केवल धारा 304ख इसमें यथा वर्णित घटनाओं के सबूत के आधार पर पति की दोषिता की कानूनी उपधारणा आदिष्ट करती है, अपितु भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख साक्ष्यिक परिप्रेक्ष्य में इस उपधारणा को पुष्ट करती है । भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113ख अनिश्चितता की स्थिति में दोषिता की कानूनी उपधारणा की विधायी आज्ञा को प्रभावी करने के

लिए एक-दूसरे की सम्पूरक हैं ।

26. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 113क न्यायालय को यह उपधारणा करने के लिए अनुज्ञात करती है कि स्त्री के पति या उसके किसी नातेदार ने उसे आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया है यदि यह दर्शित किया जाता है कि उसने आत्महत्या का ऐसा कृत्य अपने विवाह की तारीख से सात वर्ष की अवधि के भीतर करना पड़ा और उसके पति या उसके किसी नातेदार ने उसके साथ क्रूरता की थी ।

27. इस न्यायालय ने अन्य मामलों के साथ-साथ **राजिन्द्र सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में इसमें ऊपर यथा उल्लिखित "दहेज" अभिव्यक्ति के तात्पर्य पर न्यायिक उद्घोषणाओं का व्यापक सर्वेक्षण करने के पश्चात् यह अधिकथित किया है कि अधिनियम की धारा 2 में वर्णित व्यक्तियों में से किसी व्यक्ति द्वारा किसी धन या संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति की विवाह के समय या विवाह से पूर्व या विवाह के पश्चात् किसी समय की गई ऐसी मांग, जो विवाहित स्त्री की मृत्यु से युक्तियुक्त रूप से संबद्ध है, तब तक आवश्यक रूप से विवाह के संबंध में या विवाह से संसक्त समझी जाएगी जब तक कि प्रस्तुत मामले के तथ्यों से स्पष्ट और साफ तौर पर अन्यथा इंगित न होता हो और इस प्रकार इसके उपयोजन के लिए दहेज शब्द की अंतर्वस्तु को परिभाषित किया गया ।

28. अधिनियम के प्रकट उद्देश्य के साथ-साथ भारतीय दंड संहिता में धारा 498क और 304ख और साथ-ही-साथ भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113क और 113ख सम्मिलित करने के प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए हम इस प्रकार व्यक्त किए गए मत से सादर सहमत हैं ।

29. भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113ख और भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख में प्रकट होने वाले शब्द "कुछ पूर्व" के संबंध में अब यह अनिर्णीत नहीं रह गया है कि यह शब्द सामीप्य (प्राक्सिमिटि) के परीक्षण की धारणा से युक्त है, किंतु यह शब्द "ठीक पूर्व" शब्द का पर्यायवाची नहीं है । **सुरिन्द्र सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[1] वाले मामले में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह भी मत व्यक्त किया गया कि यद्यपि इस अभिव्यक्ति की प्रयोज्यता प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगी, किंतु इसका यह अर्थ लगाना चाहिए कि समय का अंतराल किसी अवधि तक नहीं खींचा जा सकता है । **कांस राज** बनाम **पंजाब**

[1] (2014) 4 एस. सी. सी. 129.

राज्य[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने "मृत्यु से कुछ पूर्व" शब्दों के महत्व पर जोर देते हुए यह मत व्यक्त किया कि दहेज की मांग पर आधारित क्रूरता के प्रभाव और पारिणामिक मृत्यु के बीच समीपस्थ और सक्रिय संबंध होना चाहिए । तथापि, इन शब्दों का उस गंभीर सामाजिक बुराई को ध्यान में रखते हुए जिसने धारा 304ख को अधिनियमित करने के लिए प्रेरित किया, उचित और वास्तविक अर्थान्वयन किया जाना चाहिए, जैसा कि इस न्यायालय ने **शेर सिंह** बनाम **हरियाणा राज्य**[2] वाले मामले में बल दिया गया है । **दिनेश** बनाम **हरियाणा राज्य**[3] वाले मामले में यह रेखांकित किया गया कि "कुछ पूर्व" अभिव्यक्ति को किसी ऐसे कठोर सिद्धांत में बांधकर नहीं रखा जा सकता है जिससे कि इसे इसकी सुसंगतता और प्रयोज्यता के लिए किसी भी समय इसका प्रयोग किया जा सके ।

30. इस प्रकार, सुसंगत तथ्यात्मक और विधिक पहलुओं, जैसा कि इसमें ऊपर उल्लेख किया गया है, पर संचयी रूप से विचार करने के पश्चात् हमारी यह निःसंकोच राय है कि अभियोजन पक्ष आरोपों के संबंध में अपीलार्थी की दोषिता को किसी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में सफल रहा है ।

31. पुनरावृत्ति करते हुए, अभागी मृतका के विवाह के पूर्व से लेकर उसकी अस्वाभाविक मृत्यु तक की घटनाओं की निरंतरता न केवल परस्पर अटूट कड़ी प्रस्तुत करती है अपितु उसे दी गई असहनीय मानसिक और शारीरिक यातना को भी प्रदर्शित करती है जिसने उसे ऐसा कठोर कदम उठाने के लिए उत्प्रेरित किया । इस संबंध में अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य स्पष्ट रूप से आनुषंगिक, संगत और सुसम्बद्ध हैं । यद्यपि अभिलेख पर की सामग्री से यह उपदर्शित होता है कि मृतका ने अपने माता को यौवनकाल में ही खो दिया था और उसे उसके पिता से भी प्यार और स्नेह नहीं मिला जिसने दूसरा विवाह कर लिया था और मृतका थोड़ी संवेदनशील और आत्म-केंद्रित थी, तो भी यह सुझाव देने के लिए ऐसी कोई आकस्मिक घटना नहीं है कि वह किसी मानसिक असंतुलन या सनक से ग्रसित थी जिससे कि किसी बाध्यकारी कारण के बिना आत्महत्या करने की बात अधिसंभाव्य हो सके । दूसरी ओर, अभिलेख पर के साक्ष्य से स्पष्ट शब्दों में

---

[1] (2000) 5 एस. सी. सी. 207.

[2] 2015 (1) स्केल 250.

[3] 2014 (5) स्केल 641.

यह प्रदर्शित होता है कि वह अपीलार्थी की 50,000/- रुपए की अतिरिक्त रकम के रूप में दहेज की सतत और पीड़ादायक मांग और अपनी दयनीय स्थिति के बारे में शिकायत करती रही थी तथा उसे निरन्तर और क्रूर उत्पीड़न तथा दुर्व्यवहार करने के परिणामस्वरूप गंभीर शारीरिक और मानसिक यातना झेलनी पड़ी थी ।

32. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए, हम तद्द्वारा उच्च न्यायालय द्वारा यथा अभिलिखित दोषसिद्धि और दंडोदश की इसके पूर्ण रूप में अभिपुष्टि करते हैं । परिणामतः, यह अपील असफल होती है और खारिज की जाती है । अपीलार्थी के जमानत बंधपत्र उन्मोचित किए जाते हैं और उसे तद्द्वारा आदेश दिया जाता है कि अधिनिर्णीत दंडादेश भुगतने के लिए विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करे । सभी अनुवर्ती कार्यवाहियां तुरंत पूरी की जाएं ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2015] 2 उम. नि. प. 193

टी. वसंतकुमार

बनाम

विजयकुमारी

28 अप्रैल, 2015

न्यायमूर्ति जे. चेलामेश्वर और न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (1881 का 26) – धारा 138 और 139 – चैक का अनादरण – उपधारणा – अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा चैक जारी किए जाने और उस पर उसके हस्ताक्षर होने को विवादग्रस्त न किए जाने पर विधिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण की उपधारणा शिकायतकर्ता के पक्ष में प्रवर्तित होती है और इसे नासाबित करने का भार अभियुक्त-प्रत्यर्थी पर था, अतः चैक वर्ष 1999 में लिए गए एक ऋण की प्रतिभूति के रूप में जारी किए जाने और ऋण का संदाय करने के उपरांत चैक वापस नहीं लौटाए जाने का उसका अभिवाक् अविश्वसनीय और साक्ष्य रहित है ।

परिवादी-अपीलार्थी और प्रतिवादी-प्रत्यर्थी के बीच फिल्म वितरण संबंधी कारबार संबंध थे । प्रतिवादी ने मई, 2006 में एक तमिल फिल्म के निर्माण में सहायता करने के लिए परिवादी से पांच लाख रुपए उधार मांगे । परिवादी द्वारा उक्त उधार तारीख 20 मई, 2006 को दिया गया । प्रतिवादी ने उक्त फिल्म के विमोचन होने पर उधार का प्रतिदाय करने का वचन दिया । तथापि, प्रतिवादी उक्त उधार का प्रतिदाय करने में असफल रहा । परिवादी द्वारा बार-बार अनुरोध करने पर प्रतिवादी ने तारीख 16 जनवरी, 2007 को पांच लाख रुपए का एक चैक दिया । परिवादी द्वारा इस चैक को अपने बैंक में प्रस्तुत किया गया । किंतु बैंक द्वारा तारीख 18 जनवरी, 2007 को चैक "संदाय रोक दिया है" टिप्पणी के साथ लौटा दिया गया । उसके पश्चात् परिवादी ने तारीख 27 जनवरी, 2007 को प्रतिवादी को सूचना तामील की । सूचना तामील होने के पश्चात् भी प्रतिवादी ने न तो संदाय किया और न ही सूचना का उत्तर दिया । परिवादी द्वारा परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 के अधीन एक परिवाद फाइल किया गया । प्रतिवादी का पक्षकथन यह था कि परिवादी को अभिकथित चैक वर्ष 1999 में उस समय लिए गए पांच लाख रुपए के उधार की एवज में प्रतिभूति के रूप में दिया गया था । प्रतिवादी द्वारा उधार का संदाय करने के पश्चात् भी परिवादी ने उक्त चैक वापस नहीं किया और कहा कि वह गुम हो गया है । परिवादी ने एक फिल्म के विमोचन को लेकर वैर-भाव के कारण प्रतिशोध लेने के लिए इस पुराने चैक को प्रतिवादी की फर्म के विरुद्ध प्रयुक्त किया । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने विचारण के पश्चात् प्रतिवादी को दोषी पाया और उसे 5,55,000/- रुपए का संदाय करने और उक्त रकम के संदाय में व्यतिक्रम करने पर पांच माह की अवधि का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया । विद्वान् मजिस्ट्रेट के इस आदेश को त्वरित निपटान न्यायालय, बंगलोर के समक्ष अपील में चुनौती दी गई, किंतु त्वरित निपटान न्यायालय द्वारा यह अपील खारिज कर दी गई । प्रतिवादी ने त्वरित निपटान न्यायालय के आदेश के पुनरीक्षण के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक पुनरीक्षण याचिका फाइल की । उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण याचिका मंजूर की गई और विद्वान् मजिस्ट्रेट और विद्वान् सेशन न्यायाधीश के एक जैसे निष्कर्ष को उलट दिया । परिवादी ने उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस न्यायालय के समक्ष कतिपय संविवाद परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 139 की बाबत है जो यह है कि क्या परक्राम्य लिखत

अधिनियम की धारा 139 के अधीन उपधारणा को लागू करने से पूर्व परिवादी को विधिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण की विद्यमानता को साबित करना चाहिए और क्या यह भार अभियुक्त पर स्थानांतरित होता है । अतः, प्रस्तुत मामले में चूंकि अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा चैक जारी करने और उस पर उसके हस्ताक्षर होने की बात स्वीकार की गई है, इसलिए धारा 139 के अधीन उपधारणा लागू होती है । इस प्रकार, चैक या किसी विधिक रूप से वसूलनीय ऋण या दायित्व की विद्यमानता को नासाबित करने का भार अभियुक्त पर था । इस बारे में, अभियुक्त का यह वृत्तांत रहा है कि परिवादी को चैक बहुत पहले वर्ष 1999 में एक ऋण की प्रतिभूति के रूप में दिया गया था और उस ऋण का प्रतिदाय कर दिया गया था किंतु परिवादी ने वह प्रतिभूति चैक वापस नहीं किया । अभियुक्त के अनुसार, परिवादी द्वारा इसी चैक को अभियुक्त को फंसाने के लिए प्रयुक्त किया गया । तथापि, यह उल्लेखनीय है कि चैक अनादृत हो गया था क्योंकि संदाय रोक दिया गया था, न कि किसी अन्य कारण से । इससे यह विवक्षित है कि अभियुक्त को बैंक में चैक के प्रस्तुत होने की जानकारी थी, अन्यथा अभियुक्त ने अपने बैंक को संदाय रोकने का निदेश कैसे दिया होता । इस प्रकार, अभियुक्त द्वारा बताए गए वृत्तांत का किसी साक्ष्य द्वारा समर्थन न होने के अतिरिक्त यह अविश्वासप्रद है । इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने चैक पर मुद्रित तारीख का जोरदार रूप से अवलंब लिया है । तथापि, न्यायालय का यह मत है कि किसी अन्य साक्ष्य के अभाव में स्वतः यह बात इस तथ्य का निश्चायक नहीं हो सकती है कि चैक वर्ष 1999 में जारी किया गया था । चैक की तारीख 20.5.2006 थी । अभियुक्त अपने साक्ष्य में न तो 1999 के ऋण को साबित करने और न ही 2006 में लिए गए उधार को नासाबित करने के लिए कुछ नहीं लायी है । उपरोक्त तर्काधार को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि विद्वान् उच्च न्यायालय ने परिवादी पर साबित करने का भार डालकर अनुचित किया है । धारा 139 के अनुसार, साबित करने का भार अभियुक्त पर चला गया था, जिसका निर्वहन करने में अभियुक्त असफल रहा । (पैरा 8, 10, 11 और 12)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[2010]	(2010) 11 एस. सी. सी. 441 : **रंगप्पा** बनाम **श्री मोहन** ।	9

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2015 की दांडिक अपील सं. 728.

2011 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 263 में कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलोर के तारीख 22 जुलाई, 2011 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री राजेश माहले और क्रुटिन आर. जोशी

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वसुश्री किरण सूरी, ज्येष्ठ अधिवक्ता और उनके साथ अपूर्वा उपमन्यु और डा. (श्रीमती) विपिन गुप्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष ने दिया ।

न्या. घोष – इजाजत दी गई ।

2. यह अपील, विशेष इजाजत द्वारा, 2011 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 263 में कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 22 जुलाई, 2011 को पारित किए गए उस निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने दो निचले न्यायालयों के निर्णयों को अपास्त कर दिया और इस अपील में प्रत्यर्थी को दोषमुक्त कर दिया ।

3. प्रस्तुत मामले में की मुकदमेबाजी का मूलाधार यह है कि परिवादी द्वारा परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 के अधीन 12वें मजिस्ट्रेट, बंगलोर के समक्ष एक परिवाद फाइल किया गया । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने विचारण के पश्चात् प्रतिवादी को दोषी पाया और उसे 5,55,000/- रुपए का संदाय करने और उक्त रकम के संदाय में व्यतिक्रम करने पर पांच माह की अवधि का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया । विद्वान् मजिस्ट्रेट के इस आदेश को त्वरित निपटान न्यायालय, बंगलोर के समक्ष अपील में चुनौती दी गई, किंतु त्वरित निपटान न्यायालय द्वारा यह अपील खारिज कर दी गई । प्रतिवादी ने त्वरित निपटान न्यायालय के आदेश के पुनरीक्षण के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष 2011 की दांडिक पुनरीक्षण याचिका सं. 263 फाइल की ।

4. परिवादी का पक्षकथन यह है कि वह यशवंतपुर, बंगलोर स्थित उल्लास थियेटर का स्वामी है, जबकि प्रतिवादी फिल्म वितरक है । दोनों पक्षकारों के बीच कारबार संबंध थे जिनके अधीन प्रतिवादी परिवादी को उसके थियेटर में दिखाने के लिए फिल्म उपलब्ध कराती थी । मई, 2006

में प्रतिवादी ने एक तमिल फिल्म "पोकरी" के निर्माण में सहायता करने के लिए परिवादी से पांच लाख रुपए उधार मांगे । परिवादी द्वारा उक्त उधार तारीख 20 मई, 2006 को दिया गया । प्रतिवादी ने उक्त फिल्म के विमोचन होने पर उधार का प्रतिदाय करने का वचन दिया था । तथापि, प्रतिवादी उक्त उधार का प्रतिदाय करने में असफल रहा । परिवादी द्वारा बार-बार अनुरोध करने पर प्रतिवादी ने तारीख 16 जनवरी, 2007 को पांच लाख रुपए का एक चैक, सं. 822408, दिया जो स्टेट बैंक ऑफ मैसूर, व्यालीकावल शाखा, बंगलोर के नाम लिखा था । परिवादी द्वारा उसी दिन इस चैक को अपने बैंक विजय बैंक, यशवंतपुर शाखा, बंगलोर में प्रस्तुत किया गया । किंतु बैंक द्वारा तारीख 18 जनवरी, 2007 को चैक "संदाय रोक दिया है" टिप्पणी के साथ लौटा दिया गया । उसके पश्चात् परिवादी ने तारीख 27 जनवरी, 2007 को प्रतिवादी को उसके कार्यालय तथा निवास के पते पर एक विधिक सूचना जारी की । निवास के पते पर आरपेड के माध्यम से भेजी गई सूचना सम्यक् रूप से प्राप्त हुई थी, जबकि प्रतिवादी के कार्यालय के पते पर भेजी गई सूचना इस रिपोर्ट के साथ लौटा दी गई : "गैर-हाजिर – जानकारी परिदत्त कर दी गई" । सूचना तामील होने के पश्चात् भी प्रतिवादी ने न तो संदाय किया और न ही सूचना का उत्तर दिया ।

5. प्रतिवादी का पक्षकथन यह है कि वह विजयकुमारी फिल्मस् के नाम में चलाए जा रहे फिल्म वितरण के कारबार की केवल नाम धारक है, जिसका वास्तव में नियंत्रण और प्रबंध उसके पति कुप्पुस्वामी द्वारा किया जाता है । उसने परिवादी से, जैसा कि उसने दावा किया है, किसी प्रकार का उधार लेने की बात को विवादग्रस्त किया है । उसके अनुसार, वह कभी भी परिवादी के स्थान पर नहीं गई और कभी कोई धन उधार नहीं लिया । प्रतिवादी का यह दावा है कि विजयकुमारी फिल्मस् के वर्ष 2006 में परिवादी से पोकरी फिल्म के विमोचन को लेकर मतभेद हो गए थे । प्रतिवादी के पति ने परिवादी के थियेटर में इस आधार पर फिल्म का विमोचन करने से इनकार कर दिया था कि उक्त फिल्म के विमोचन के समय ही एक अन्य कन्नड़ फिल्म वहां दिखाई जा रही थी और यह एक संवेदनशील मामला हो सकता था । प्रतिवादी का पक्षकथन यह है कि परिवादी को अभिकथित चैक वर्ष 1999 में उस समय लिए गए पांच लाख रुपए के उधार की एवज में प्रतिभूति के रूप में दिया गया था । प्रतिवादी द्वारा उधार का संदाय करने के पश्चात् भी परिवादी ने उक्त चैक वापस नहीं किया और कहा कि वह गुम हो गया है । प्रतिवादी का यह अभिकथन

है कि परिवादी ने फिल्म "पोकरी" के विमोचन को लेकर वैर-भाव के कारण प्रतिशोध लेने के लिए इस पुराने चैक को प्रतिवादी की फर्म के विरुद्ध प्रयुक्त किया ।

6. विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन दोषी पाया और उसे 5,55,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और संदाय में व्यतिक्रम करने पर पांच माह का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया । प्रथम अपील न्यायालय ने यह पाया कि यद्यपि प्रतिवादी ने संव्यवहार को विवादग्रस्त किया है, तो भी उन्होंने चैक या उस पर उसके हस्ताक्षर होने की बात को विवादग्रस्त नहीं किया । विद्वान् सेशन न्यायाधीश (त्वरित निपटान न्यायालय) ने यह पाया कि यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि चैक वर्ष 1999 में जारी किया गया था । विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने यह पाया कि वर्ष 1999 में उधार लेने या परिवादी को वर्ष 1999 में प्रतिभूति के रूप में चैक देने की बाबत प्रतिवादी द्वारा ऐसा कोई सुझाव नहीं दिया गया है । इसके अतिरिक्त, न्यायालय ने धारा 139 के अधीन परिवादी के पक्ष में उपधारणा का अवलंब लिया और यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी इस उपधारणा का खंडन करने में असफल रहा है । न्यायालय ने प्रतिवादी के इस दावे को भी नामंजूर कर दिया कि वह और उसका पति अभिकथित तारीख अर्थात् 20 मई, 2006 को जब उधार दिया गया था बंगलोर में नहीं थे । प्रतिवादी ने उस तारीख के चेन्नई के होटल के बिल प्रस्तुत किए, किंतु न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि बिलों से प्रतिवादी की अपने पति के साथ चेन्नई में मौजूदगी की बात साबित नहीं होती है । इन आधारों पर न्यायालय ने प्रतिवादी के पक्षकथन में बल नहीं पाया ।

7. उच्च न्यायालय ने अपील में विद्वान् मजिस्ट्रेट और विद्वान् सेशन न्यायाधीश के एक जैसे निष्कर्ष को उलट दिया । उच्च न्यायालय ने यह पाया कि चैक वास्तव में उस चैक-पुस्तिका से था जो वर्ष 2000 से पूर्व जारी की गई थी क्योंकि चैक पन्ने पर ही मुद्रित स्याही में "__ /_ /199_" के रूप में तारीख उल्लिखित थी । उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि यह विश्वास करना कठिन है कि कारबार संबंधी संव्यवहार करने वाला कोई पक्षकार वर्ष 2007 में कर रहे संव्यवहार के संबंध में ऐसा कोई चैक दे जो 1990 के दशक का हो । उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी के इस तर्क को स्वीकार किया कि परिवादी ने प्रतिवादी की फर्म द्वारा अपने थियेटर में फिल्म "पोकरी" के विमोचन से इनकार करने के कारण वैर-भाव की वजह

से पुराना चैक प्रयुक्त किया । इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने यह पाया कि परिवादी ने अपने कथन में यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसने पांच लाख रुपए की रकम इसे प्रतिवादी को देने से दो दिन पूर्व प्रत्याहृत की थी, किंतु वह बैंक से धन के इस प्रत्याहरण की कोई रसीद या अन्य सबूत अभिलेख पर लाने में असफल रहा । उच्च न्यायालय ने परिवादी के मामले को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध साबित करने योग्य नहीं पाया ।

8. हमने अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल के साथ-साथ प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर वाले विद्वान् काउंसेल को भी सुना । परिवादी ने यह अभिकथन किया है कि प्रतिवादी को तारीख 20 मई, 2006 को धन (उधार) दिया गया था, जिसके संबंध में प्रतिवादी द्वारा उसे तारीख 16 जनवरी, 2007 को चैक जारी किया गया था । चैक पांच लाख रुपए मात्र का था जिसका संख्यांक 822408 था । यह बात बहुत महत्वपूर्ण है कि न तो चैक को और न ही इस पर प्रतिवादी के हस्ताक्षर को विवादग्रस्त किया गया है । हमारे समक्ष कतिपय संविवाद परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 139 की बाबत है जो यह है कि क्या परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 139 के अधीन उपधारणा को लागू करने से पूर्व परिवादी को विधिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण की विद्यमानता को साबित करना चाहिए और क्या यह भार अभियुक्त पर स्थानांतरित होता है । धारा 139 निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "139. धारक के पक्ष में उपधारणा – जब तक कि तत्प्रतिकूल साबित न हो, यह उपधारणा की जाएगी कि चैक के धारक ने धारा 138 में निर्दिष्ट प्रकृति का चैक किसी ऋण या अन्य दायित्व के पूर्णतः या भागतः उन्मोचन के लिए प्राप्त किया है ।"

9. **रंगप्पा** बनाम **श्री मोहन**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने अपनी तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया है :–

> "धारा 139 के अधीन आज्ञापित उपधारणा के अंतर्गत यह उपधारणा भी आती है कि कोई विधिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण या दायित्व विद्यमान हो । निस्संदेह यह उपधारणा खंडन करने योग्य प्रकृति की है और अभियुक्त वहां प्रतिरक्षा लेने के लिए स्वतंत्र है जहां

---

[1] (2010) 11 एस. सी. सी. 441.

किसी विधिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण या दायित्व के बारे में प्रतिवाद किया जा सकता हो । तथापि, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि जो प्रारंभिक उपधारणा है वह प्रत्यर्थी-परिवादी का समर्थन करती है ।"

10. अतः, प्रस्तुत मामले में चूंकि अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा चैक जारी करने और उस पर उसके हस्ताक्षर होने की बात स्वीकार की गई है, इसलिए धारा 139 के अधीन उपधारणा लागू होती है । इस प्रकार, चैक या किसी विधिक रूप से वसूलनीय ऋण या दायित्व की विद्यमानता को नासाबित करने का भार अभियुक्त पर था । इस बारे में, अभियुक्त का यह वृत्तांत रहा है कि परिवादी को चैक बहुत पहले वर्ष 1999 में एक ऋण की प्रतिभूति के रूप में दिया गया था और उस ऋण का प्रतिदाय कर दिया गया था किंतु परिवादी ने वह प्रतिभूति चैक वापस नहीं किया । अभियुक्त के अनुसार, परिवादी द्वारा इसी चैक को अभियुक्त को फंसाने के लिए प्रयुक्त किया गया । तथापि, यह उल्लेखनीय है कि चैक अनादृत हो गया था क्योंकि संदाय रोक दिया गया था, न कि किसी अन्य कारण से । इससे यह विवक्षित है कि अभियुक्त को बैंक में चैक के प्रस्तुत होने की जानकारी थी, अन्यथा अभियुक्त ने अपने बैंक को संदाय रोकने का निदेश कैसे दिया होता । इस प्रकार, अभियुक्त द्वारा बताए गए वृत्तांत का किसी साक्ष्य द्वारा समर्थन न होने के अतिरिक्त यह अविश्वासप्रद है ।

11. इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने चैक पर मुद्रित तारीख का जोरदार रूप से अवलंब लिया है । तथापि, हमारा यह मत है कि किसी अन्य साक्ष्य के अभाव में स्वतः यह बात इस तथ्य का निश्चायक नहीं हो सकती है कि चैक वर्ष 1999 में जारी किया गया था । चैक की तारीख 20/5/2006 थी । अभियुक्त अपने साक्ष्य में न तो 1999 के ऋण को साबित करने और न ही 2006 में लिए गए उधार को नासाबित करने के लिए कुछ नहीं लाई है ।

12. उपरोक्त तर्काधार को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह निष्कर्ष है कि विद्वान् उच्च न्यायालय ने परिवादी पर साबित करने का भार डालकर अनुचित किया है । धारा 139 के अनुसार, साबित करने का भार अभियुक्त पर चला गया था, जिसका निर्वहन करने में अभियुक्त असफल रहा । इस प्रकार, हम इस अपील में गुणागुण पाते हैं ।

13. यह अपील मंजूर की जाती है । तद्नुसार, उच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया निर्णय और आदेश अपास्त किया जाता है और 12वें अपर मुख्य मैट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट, बंगलोर द्वारा प्रत्यर्थी को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए और उसे 5,55,000/- रुपए के जुर्माने के संदाय और संदाय में व्यतिक्रम करने पर पांच माह का साधारण कारावास भोगने का दंडादेश देते हुए पारित किए गए आदेश की पीठासीन अधिकारी, त्वरित निपटान न्यायालय-1, बंगलोर द्वारा पुष्टि करते हुए तारीख 22 जनवरी, 2011 को सुनाए गए निर्णय को तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2015] 2 उम. नि. प. 201

हरियाणा राज्य

बनाम

आशा देवी और एक अन्य

12 मई, 2015

न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष और न्यायमूर्ति उदय उमेश ललित

स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का 61) – धारा 20(i) – विनिषिद्ध पदार्थ कब्जे में पाया जाना – पुलिस दल द्वारा गुप्त सूचना के आधार पर अभियुक्त-प्रत्यर्थियों के मकान पर छापा मारा जाना – एक अभियुक्त का बचकर भाग जाना – मकान की तलाशी लेने पर "गांजा" प्राप्त होना – स्वतंत्र साक्षी का तलाशी में सम्मिलित न होना – विचारण न्यायालय द्वारा अभियोजन के वृत्तांत को अविश्वसनीय और संदेहास्पद मानकर अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना – उच्च न्यायालय द्वारा राज्य द्वारा फाइल की गई अपील खारिज किया जाना – निचले न्यायालयों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष कल्पना और अटकलबाजी पर आधारित होने के कारण उन्हें कायम नहीं रखा जा सकता है और अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करना उचित होगा ।

पुलिस गश्ती दल, फरीदाबाद के उप निरीक्षक रामफल को तारीख 3 फरवरी, 2006 को एक गुप्त सूचना मिली कि ओम प्रकाश पुत्र मोती लाल और उसकी पत्नी आशा देवी, निवासी गली सं. 1, जुग्गी, कल्याणपुरी मध्य प्रदेश से गांजा (मादक ओषधि) लाए हैं और फरीदाबाद में प्रदाय करेंगे और यदि उनके मकान पर छापा मारा जाता है, तो बड़ी मात्रा में गांजा की बरामदगी होगी । यह सूचना प्राप्त होने पर, पूर्वोक्त पुलिस दल ने ओम प्रकाश के मकान पर छापा मारा । पुलिस को देखकर ओम प्रकाश मकान की दीवार फांदकर बचकर भाग गया । आशा देवी ने भी बचकर भागने की कोशिश की किंतु महिला कांस्टेबलों की सहायता से उसे गिरफ्तार कर लिया गया । उसे लिखित में स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की धारा 50 के अधीन एक सूचना उसे उसके इस अधिकार के बारे में सूचित करते हुए तामील की गई कि वह उसके मकान की तलाशी लेने के लिए या तो उप निरीक्षक को अनुज्ञात करे या किसी राजपत्रित अधिकारी अथवा मजिस्ट्रेट की मौजूदगी में तलाशी देने के विकल्प का चयन करे । आशा देवी ने किसी राजपत्रित अधिकारी की मौजूदगी में उसके मकान की तलाशी लेने के लिए सहमति दी । तद्नुसार, श्री महाराज सिंह, तत्कालीन पुलिस उप अधीक्षक, एन. आई. टी. फरीदाबाद घटनास्थल पर आए और उसकी मौजूदगी में आशा देवी के मकान की तलाशी ली गई । आशा देवी ने एक संदूक खोला और गांजा रखा हुआ एक थैला निकाला तथा इसे उप निरीक्षक के समक्ष प्रस्तुत किया । थैले का वजन किया गया और इसमें 11 कि. ग्रा. गांजा पाया गया जिसमें से 200-200 ग्राम के दो नमूने लिए गए और "आरपी" तथा "एमएस" अक्षरों की मुद्रा से मुद्रांकित किए गए । पुलिस द्वारा दोनों नमूनों के साथ-साथ शेष गांजा और नमूना मुद्रा की छाप बरामदगी ज्ञापन, जिसे अन्वेषक अधिकारी रामफल द्वारा तैयार किया गया और सहायक उप निरीक्षक तेजराम और सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज द्वारा साक्ष्यित किया गया और पुलिस उप अधीक्षक महाराज सिंह द्वारा प्रमाणित किया गया, के अधीन कब्जे में लिए गए और आशा देवी के अंगूठे की छाप ली गई । मामला संपत्ति के साथ-साथ नमूनों और साक्षियों को थाना अधिकारी के समक्ष पेश किया गया और उसने तथ्यों का सत्यापन करने के पश्चात् उन पर अपनी मुद्रा लगाई और मुहर्रिर पुलिस मालखाने में जमा किया गया । आशा देवी के विरुद्ध स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20(i) के अधीन मामला दर्ज किया गया और उसे गिरफ्तार किया गया । उसके पश्चात् तारीख 4 फरवरी, 2006 को मामला संपत्ति और

दोनों नमूने विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, फरीदाबाद के समक्ष प्रस्तुत किए गए । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने मामला संपत्ति तथा एक नमूने पर लगी मुद्राएं तोड़ी । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने सामग्री का सत्यापन किया, फोटोग्राफ लिए गए और विनिषिद्ध पदार्थ को तोला गया और उसके पश्चात् नमूना आरपी की मुद्रा के साथ पुनःमुद्रांकित किया गया । न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अन्वेषक अधिकारी को सामग्री न्यायिक मालखाने में जमा करने का निदेश दिया । अन्वेषण के पश्चात् आशा देवी को स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20 के अधीन और अभियुक्त ओम प्रकाश को स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 28 और 29 के अधीन आरोपित किया गया । विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य का परिशीलन करने और पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् अभियोजन के वृत्तांत का समर्थन नहीं किया क्योंकि उसके अनुसार, उप निरीक्षक ने गुप्त सूचना प्राप्त होने पर मामले के अन्वेषण के दौरान किसी स्वतंत्र साक्षी को घटनास्थल पर उपलब्ध होने के बावजूद सम्मिलित नहीं किया । विचारण न्यायालय ने यह भी पाया कि तारीख 3 फरवरी, 2006 को मामला संपत्ति और नमूने मुद्राबंद करने के पश्चात् "आरपी" मुद्रा को सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज को सौप दिया गया था, इसलिए अगले दिन जब मामला संपति विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत की गई, तो वह मुद्रा अन्वेषक अधिकारी रामफल के कब्जे में नहीं होनी चाहिए थी । इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय ने यह पाया कि सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज को अभियोजन साक्षी के रूप में पेश न किए जाने से और अधिक संदेह उत्पन्न होता है । यह भी पाया कि सहायक उप निरीक्षक तेज राज ने ओम प्रकाश का उस समय पीछा किया जब वह भागने की कोशिश कर रहा था किंतु वह उसे पकड़ नहीं सका था । अभियोजन के वृत्तांत के इस भाग पर भी विचारण न्यायालय द्वारा इस कारण से विश्वास नहीं किया गया कि ओम प्रकाश के मकान के बाहर पांच कांस्टेबल खड़े थे और ओम प्रकाश के लिए मकान की दीवार फांदना संभव नहीं था । विचारण न्यायालय ने अभियोजन के साक्ष्य को पूर्णतः असंगत और अविश्वसनीय पाया और यह अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष अभियुक्तों के विरुद्ध अपने आरोपों को सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है और तद्नुसार अभियुक्तों को उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त कर दिया । राज्य ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के समक्ष विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध अपील के लिए इजाजत की ईप्सा

करते हुए एक आवेदन फाइल किया । उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय और आदेश द्वारा राज्य को प्रत्यर्थियों की दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील के लिए इजाजत देने से इनकार कर दिया और राज्य द्वारा फाइल किए गए आवेदन को खारिज कर दिया । हरियाणा राज्य ने उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस न्यायालय ने यह पाया है कि उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय दोनों ने राज्य के विरुद्ध मामले का विनिश्चय करने के लिए तीन मुख्य बिदुंओं का अवलंब लिया – (i) किसी स्वतंत्र साक्षी का न होना ; (ii) पांच पुलिस अधिकारियों की मौजूदगी में ओम प्रकाश बचकर नहीं भाग सकता था ; और (iii) "आरपी" मुद्रा सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज के कब्जे से अन्वेषक अधिकारी को अंतरित करने वाला कड़ी साक्ष्य साबित नहीं होता है । इस न्यायालय के मत में, दोनों न्यायालयों द्वारा इन तीनों बिंदुओं के विषय में साक्ष्य का जो अवधारण किया गया और मामले पर जिस प्रकार विचार किया गया, वह गलत है और इसे एक संभाव्य मत के रूप में नहीं माना जा सकता है । न्यायालय यह पाता है कि पुलिस उप अधीक्षक महाराज सिंह तथा अन्वेषक अधिकारी रामफल ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि जब विनिषिद्ध पदार्थ अभिगृहीत किया गया था तब आम व्यक्ति उपलब्ध थे, तथापि, किसी भी आम व्यक्ति ने स्वतंत्र साक्षी के रूप में अन्वेषण में सम्मिलित होने का उनका अनुरोध स्वीकार नहीं किया । निचले न्यायालयों ने इस बात को अविश्वसनीय पाया किंतु इसके बारे में कोई कारण नहीं दिया गया । इस न्यायालय की राय में, पुलिस उप अधीक्षक तथा अन्वेषक अधिकारी दोनों के संगत कथन निस्संदेह उनके द्वारा प्रस्तुत की गई परिस्थितियों की सत्यता को बढ़ाते हैं । निचले न्यायालयों के इस निष्कर्ष के संबंध में कि ओम प्रकाश दीवार फांदकर नहीं भाग सकता था और पुलिस कांस्टेबल उसे पकड़ने में असफल नहीं हो सकते थे, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि निचले न्यायालयों ने ऐसा निष्कर्ष कल्पना और अटकलबाजी के आधार पर निकाला है । साक्ष्य में ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह दर्शित हो सके कि ओम प्रकाश भाग नहीं सकता था । कई अभियोजन साक्षियों ने यह सकारात्मक कथन किया है कि वह पुलिस दल को देखकर भाग गया था और इन कथनों का सामना प्रतिपरीक्षा की जांच में भी हुआ था । इसके अतिरिक्त, अभियुक्त ओम प्रकाश के भाग जाने के तथ्य को नासाबित करने के लिए कोई अन्य साक्ष्य

प्रस्तुत नहीं किया गया । इसलिए इस न्यायालय का यह मत है कि उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय ने उक्त निष्कर्ष निकालकर सही नहीं किया है । मुद्रा के कब्जे की बाबत संविवाद रहा है । संविवाद यह है कि अन्वेषक अधिकारी रामफल ने विनिषिद्ध पदार्थ और उसके नमूनों को मुद्राबंद करने के पश्चात् "आरपी" मुद्रा तारीख 3 फरवरी, 2006 को सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज को दी थी । तथापि, अगले दिन जब मामला संपत्ति विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत की गई, तब सत्यापन के पश्चात् इसे "आरपी" मुद्रा से पुनःमुद्राबंद किया गया था । निचले न्यायालयों ने अभियोजन के इस पक्षकथन को संदिग्ध पाया क्योंकि जब "आरपी" मुद्रा सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज के कब्जे में थी, तो अगले दिन यह कैसे अन्वेषक अधिकारी के पास हो सकती थी । हमारा यह निष्कर्ष है कि सबसे महत्वपूर्ण साक्ष्य उस नमूने की बाबत था जो "आरपी" मुद्रा से मुद्राबंद किया गया था । इस बात का स्पष्ट साक्ष्य है कि प्रारंभ में नमूने लिए गए और तारीख 3 फरवरी, 2006 को अभिग्रहण के स्थान पर "आरपी" और "एमएस" मुद्रा से मुद्राबंद किए गए थे और उसके पश्चात् उसी दिन थाना अधिकारी विक्रम सिंह ने भी उक्त नमूने "एसएस" मुद्रा से मुद्राबंद किए । इस तथ्य का साक्ष्य निर्विवाद है कि नमूने विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किए गए थे, जहां एक नमूने की मुद्रा को तोड़ा गया था और "आरपी" मुद्रा से पुनःमुद्राबंद किया गया । उसके पश्चात्, नमूना न्यायिक मालखाने में जमा किया गया, जहां से इसे न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजा गया । न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट में यह उल्लिखित है कि मुद्रा अविकल थी और नमूने के साथ छेड़छाड़ नहीं हुई थी । उन सभी व्यक्तियों को, जिनके कब्जे में विनिषिद्ध पदार्थ का नमूना था, यह समर्थन करने के लिए अभिलेख पर लाया गया है कि नमूनों के साथ कोई छेड़छाड़ नहीं की गई थी । प्रतिरक्षा पक्ष साक्षियों की प्रतिपरीक्षा में नमूनों के साथ छेड़छाड़ करने की बाबत कोई बात निकालने में असफल रहा । इस प्रकार, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि नमूनों पर सारे समय उचित रूप से कार्यवाही की गई थी और नमूना गांजे का होना पाया गया था । इसके अतिरिक्त, प्रतिरक्षा पक्ष उस मुद्रा की बाबत, जो सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज को सौंपी गई थी, अन्वेषक अधिकारी रामफल की यह प्रतिपरीक्षा करने में असफल रहा कि उसने सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज से कैसे मुद्रा वापस अपने कब्जे में ली थी । इन परिस्थितियों में, हम यह नहीं मानते कि अभियोजन पक्ष प्रस्तुत परिस्थितियों में मुद्रा के एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के पास संचलन का स्पष्टीकरण देने

के लिए कर्तव्यबद्ध था । चूंकि, नमूने के संचलन को साबित किया गया है और इसे नियमित पाया गया है, इसलिए अभियोजन पक्ष ने वर्तमान मामले में अभियुक्तों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए अपने पक्षकथन को पर्याप्त रूप से साबित किया है । इस प्रकार, यह न्यायालय अभियुक्तों को 11 कि. ग्रा. गांजा कब्जे में रखने के लिए स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20 के अधीन दोषी पाता है । विभिन्न विनिषिद्ध पदार्थों की अल्प और वाणिज्यिक मात्रा का उपबंध करते हुए केन्द्रीय सरकार की अधिसूचना के अनुसार गांजा की वाणिज्यिक मात्रा 20 कि. ग्रा. या इससे अधिक है, और अभियुक्त अल्प मात्रा कब्जे में रखने के दोषी हैं । इस बात को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय अभियुक्तों (आशा देवी और उसके पति ओम प्रकाश) को स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20 के अधीन दोषसिद्ध करता है और उन्हें पांच वर्ष का साधारण कारावास दिया जाता है । (पैरा 7, 8, 9, 10 और 12)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[1990] [1990] 1 उम. नि. प. 497 =
(1989) 3 एस. सी. सी. 5 :
अलाउद्दीन मियां और अन्य बनाम **बिहार राज्य** । 11, 13

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2009 की दांडिक अपील सं. 1953.

2007 के दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 560 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के तारीख 10 दिसम्बर, 2007 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — सर्वश्री राकेश के. मुद्गल, अपर महाधिवक्ता और उनके साथ संजय कुमार विसेन

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री रवि कुमार तोमर और दिनेश एस. बदियार

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पिनाकी चन्द्र घोष ने दिया ।

न्या. घोष – यह अपील हरियाणा राज्य द्वारा 2007 के दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 560 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के तारीख 10 दिसम्बर, 2007 के उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल

की गई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थियों की दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील करने के लिए राज्य को इजाजत देने से इनकार कर दिया ।

2. अभियोजन वृत्तांत के अनुसार, इस मामले के तथ्य ये हैं कि तारीख 3 फरवरी, 2006 को जब उप निरीक्षक रामफल, सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज, कांस्टेबल सुरेन्द्र सिंह, महिला कांस्टेबल बबीता रानी और प्रोमिला एक पुलिस यान में, जिसे कांस्टेबल दर्शन सिंह चला रहा था, गश्त ड्यूटी पर थे तब चिमनी बाई धर्मशाला, एन. आई. टी. सं. 3 के निकट उप निरीक्षक रामफल को एक गुप्त सूचना मिली कि ओम प्रकाश पुत्र मोती लाल और उसकी पत्नी आशा देवी, निवासी गली सं. 1, झुग्गी कल्याणपुरी, मध्य प्रदेश से गांजा (मादक ओषधि) लाए हैं और फरीदाबाद में प्रदाय करेंगे और यदि उनके मकान पर छापा मारा जाता है, तो बड़ी मात्रा में गांजा की बरामदगी होगी । यह सूचना प्राप्त होने पर, पूर्वोक्त पुलिस दल ने ओम प्रकाश के मकान पर छापा मारा । पुलिस को देखकर ओमप्रकाश मकान की दीवार फांदकर बचकर भाग गया । आशा देवी ने भी बचकर भागने की कोशिश की किंतु महिला कांस्टेबलों की सहायता से उसे गिरफ्तार कर लिया गया । पूछताछ करने पर उसने अपना नाम आशा पत्नी ओम प्रकाश बताया और यह भी बताया कि जो व्यक्ति मकान से बचकर निकल गया है, वह ओम प्रकाश था । उसे लिखित में स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (जिसे आगे संक्षेप में "स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम" कहा गया है) की धारा 50 के अधीन एक सूचना उसे उसके इस अधिकार के बारे में सूचित करते हुए तामील की गई कि वह उसके मकान की तलाशी लेने के लिए या तो उप निरीक्षक को अनुज्ञात करे या किसी राजपत्रित अधिकारी अथवा मजिस्ट्रेट की मौजूदगी में तलाशी देने के विकल्प का चयन करे । आशा देवी ने किसी राजपत्रित अधिकारी की मौजूदगी में उसके मकान की तलाशी लेने के लिए सहमति दी । तद्नुसार, श्री महाराज सिंह, तत्कालीन पुलिस उप अधीक्षक, एन. आई. टी. फरीदाबाद घटनास्थल पर आए और उसकी मौजूदगी में आशा देवी के मकान की तलाशी ली गई । आशा देवी ने एक संदूक खोला और गांजा रखा हुआ एक थैला निकाला तथा इसे उप निरीक्षक के समक्ष प्रस्तुत किया । थैले का वजन किया गया और इसमें 11 कि. ग्रा. गांजा पाया गया जिसमें से 200-200 ग्राम के दो नमूने लिए गए और "आरपी" तथा "एमएस" अक्षरों की मुद्रा से मुद्रांकित किए गए । पुलिस द्वारा दोनों नमूनों के साथ-साथ शेष गांजा और नमूना मुद्रा की छाप बरामदगी ज्ञापन, जिसे अन्वेषक अधिकारी रामफल द्वारा तैयार किया गया

और सहायक उप निरीक्षक तेजराम और सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज द्वारा साक्ष्यित किया गया और पुलिस उप अधीक्षक महाराज सिंह द्वारा प्रमाणित किया गया, के अधीन कब्जे में लिए गए और आशा देवी के अंगूठे की छाप ली गई । मामला संपत्ति के साथ-साथ नमूनों और साक्षियों को थाना अधिकारी के समक्ष पेश किया गया और उसने तथ्यों का सत्यापन करने के पश्चात् उन पर अपनी मुद्रा लगाई और मुहर्रिर पुलिस मालखाने में जमा किया गया । आशा देवी के विरुद्ध स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20(i) के अधीन मामला दर्ज किया गया और उसे गिरफ्तार किया गया । उसके पश्चात् तारीख 4 फरवरी, 2006 को मामला संपत्ति और दोनों नमूने विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, फरीदाबाद के समक्ष प्रस्तुत किए गए । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने मामला संपत्ति तथा एक नमूने पर लगी मुद्राएं तोड़ी । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने सामग्री का सत्यापन किया, फोटोग्राफ लिए गए और विनिषिद्ध पदार्थ को तोला गया और उसके पश्चात् नमूना आरपी की मुद्रा के साथ पुनःमुद्रांकित किया गया । न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अन्वेषक अधिकारी को सामग्री न्यायिक मालखाने में जमा करने का निदेश दिया । अन्वेषण के पश्चात् आशा देवी को स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20 के अधीन और अभियुक्त ओम प्रकाश को स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 28 और 29 के अधीन आरोपित किया गया । अभियुक्तों ने दोषी होने से इनकार किया और इसलिए मामला विचारण के लिए सुपुर्द किया गया ।

3. विचारण न्यायालय ने दस अभियोजन साक्षियों और दो प्रतिरक्षा साक्षियों की परीक्षा की । विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य का परिशीलन करने और पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् अभियोजन के वृत्तांत का समर्थन नहीं किया क्योंकि उसके अनुसार, उप निरीक्षक ने गुप्त सूचना प्राप्त होने पर मामले के अन्वेषण के दौरान किसी स्वतंत्र साक्षी को घटनास्थल पर उपलब्ध होने के बावजूद सम्मिलित नहीं किया । विचारण न्यायालय ने यह भी पाया कि तारीख 3 फरवरी, 2006 को मामला संपत्ति और नमूने मुद्राबंद करने के पश्चात् "आरपी" मुद्रा को सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज को सौप दिया गया था, इसलिए अगले दिन जब मामला संपत्ति विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत की गई, तो वह मुद्रा अन्वेषक अधिकारी रामफल के कब्जे में नहीं होनी चाहिए थी । तथापि, न्यायिक मजिस्ट्रेट ने इस तथ्य को प्रमाणित किया है कि नमूना सत्यापन के पश्चात् "आरपी" मुद्रा से पुनःमुद्रांकित किया गया था और

फोटोग्राफ लिए गए थे तथा वजन किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह असंगत पाया कि जब सहायक उप निरीक्षक यहां नहीं है तो "आरपी" मुद्रा विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के पास उपलब्ध होनी चाहिए थी । इसके अतिरिक्त, विचारण न्यायालय ने यह पाया कि सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज को अभियोजन साक्षी के रूप में पेश न किए जाने से और अधिक संदेह उत्पन्न होता है । यह भी कि सहायक उप निरीक्षक तेज राज (अभि. सा. 2) ने ओम प्रकाश का उस समय पीछा किया जब वह भागने की कोशिश कर रहा था किंतु वह उसे पकड़ नहीं सका था । अभियोजन के वृत्तांत के इस भाग पर भी विचारण न्यायालय द्वारा इस कारण से विश्वास नहीं किया गया कि ओम प्रकाश के मकान के बाहर पांच कांस्टेबल खड़े थे और ओम प्रकाश के लिए मकान की दीवार फांदना संभव नहीं था । विचारण न्यायालय ने अभियोजन के साक्ष्य को पूर्णतः असंगत और अविश्वसनीय पाया और यह अभिनिर्धारित किया कि अभियोजन पक्ष अभियुक्तों के विरुद्ध अपने आरोपों को सभी युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने में असफल रहा है और तद्नुसार अभियुक्तों को उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त कर दिया ।

4. राज्य ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ के समक्ष विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध अपील के लिए इजाजत की ईप्सा करते हुए एक आवेदन फाइल किया । उच्च न्यायालय ने तारीख 10 दिसम्बर, 2007 के अपने निर्णय और आदेश द्वारा राज्य को प्रत्यर्थियों की दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील के लिए इजाजत देने से इनकार कर दिया और राज्य द्वारा फाइल किए गए आवेदन को खारिज कर दिया । अतः, हरियाणा राज्य ने उच्च न्यायालय के निर्णय को हमारे समक्ष आक्षेपित किया है ।

5. हमने हरियाणा राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल के साथ-साथ अभियुक्त-प्रत्यर्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल को भी सुना ।

6. उच्च न्यायालय का यह मत था कि विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य का परिशीलन करने और पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् अभियुक्तों को ठीक ही दोषमुक्त किया क्योंकि विचारण न्यायालय ने अभियोजन के वृत्तांत का समर्थन नहीं किया और जहां तक राजपत्रित अधिकारी की मौजूदगी में तलाशी लेने का संबंध है, यह और कुछ नहीं अपितु विनिषिद्ध पदार्थ (गांजा) की बरामदगी करते

समय राजपत्रित अधिकारी द्वारा अपनाया गया एक नैमित्तिक दृष्टिकोण था और अन्वेषक अधिकारी ने कोई युक्तिसंगत स्पष्टीकरण नहीं दिया । सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज उस मुद्रा के साथ मौजूद था जो बरामदगी करने के समय प्रयुक्त की गई थी, किंतु अभियोजन पक्ष द्वारा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया कि मुद्रा अभिग्रहण की तारीख से लेकर कैसे सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज के कब्जे में रही । विचारण न्यायालय द्वारा की गई एकमात्र उपधारणा यह है कि नमूने के साथ छेड़छाड़ न किए जाने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है । उच्च न्यायालय का यह मत था कि यह ऐसा उपयुक्त मामला नहीं है जिसमें हरियाणा राज्य के पक्ष में अपील के लिए इजाजत बनती हो और इसलिए इससे इनकार कर दिया ।

7. हम यह पाते हैं कि उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय दोनों ने राज्य के विरुद्ध मामले का विनिश्चय करने के लिए तीन मुख्य बिदुंओं का अवलंब लिया – (i) किसी स्वतंत्र साक्षी का न होना ; (ii) पांच पुलिस अधिकारियों की मौजूदगी में ओम प्रकाश बचकर नहीं भाग सकता था ; और (iii) "आरपी" मुद्रा सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज के कब्जे से अन्वेषक अधिकारी को अंतरित करने वाला कड़ी साक्ष्य साबित नहीं होता है । हमारे मत में, दोनों न्यायालयों द्वारा इन तीनों बिंदुओं के विषय में साक्ष्य का जो अवधारण किया गया और मामले पर जिस प्रकार विचार किया गया, वह गलत है और इसे एक संभाव्य मत के रूप में नहीं माना जा सकता है ।

8. हम यह पाते हैं कि पुलिस उप अधीक्षक महाराज सिंह तथा अन्वेषक अधिकारी रामफल ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि जब विनिषिद्ध पदार्थ अभिगृहीत किया गया था तब आम व्यक्ति उपलब्ध थे, तथापि, किसी भी आम व्यक्ति ने स्वतंत्र साक्षी के रूप में अन्वेषण में सम्मिलित होने का उनका अनुरोध स्वीकार नहीं किया । निचले न्यायालयों ने इस बात को अविश्वसनीय पाया किंतु इसके बारे में कोई कारण नहीं दिया गया । हमारी राय में, पुलिस उप अधीक्षक तथा अन्वेषक अधिकारी दोनों के संगत कथन निस्संदेह उनके द्वारा प्रस्तुत की गई परिस्थितियों की सत्यता को बढ़ाते हैं । निचले न्यायालयों के इस निष्कर्ष के संबंध में कि ओम प्रकाश दीवार फांदकर नहीं भाग सकता था और पुलिस कांस्टेबल उसे पकड़ने में असफल नहीं हो सकते थे, हमारा यह निष्कर्ष है कि निचले न्यायालयों ने ऐसा निष्कर्ष कल्पना और अटकलबाजी के आधार पर निकाला है । साक्ष्य में ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह दर्शित हो सके कि

ओम प्रकाश भाग नहीं सकता था । कई अभियोजन साक्षियों ने यह सकारात्मक कथन किया है कि वह पुलिस दल को देखकर भाग गया था और इन कथनों का सामना प्रतिपरीक्षा की जांच में भी हुआ था । इसके अतिरिक्त, अभियुक्त ओम प्रकाश के भाग जाने के तथ्य को नासाबित करने के लिए कोई अन्य साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया । इसलिए हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय ने उक्त निष्कर्ष निकालकर सही नहीं किया है ।

9. मुद्रा के कब्जे की बाबत संविवाद रहा है । संविवाद यह है कि अन्वेषक अधिकारी रामफल ने विनिषिद्ध पदार्थ और उसके नमूनों को मुद्राबंद करने के पश्चात् "आरपी" मुद्रा तारीख 3 फरवरी, 2006 को सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज को दी थी । तथापि, अगले दिन जब मामला संपत्ति विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत की गई, तब सत्यापन के पश्चात् इसे "आरपी" मुद्रा से पुनःमुद्राबंद किया गया था । निचले न्यायालयों ने अभियोजन के इस पक्षकथन को संदिग्ध पाया क्योंकि जब "आरपी" मुद्रा सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज के कब्जे में थी, तो अगले दिन यह कैसे अन्वेषक अधिकारी के पास हो सकती थी । हमारा यह निष्कर्ष है कि सबसे महत्वपूर्ण साक्ष्य उस नमूने की बाबत था जो "आरपी" मुद्रा से मुद्राबंद किया गया था । इस बात का स्पष्ट साक्ष्य है कि प्रारंभ में नमूने लिए गए और तारीख 3 फरवरी, 2006 को अभिग्रहण के स्थान पर "आरपी" और "एमएस" मुद्रा से मुद्राबंद किए गए थे और उसके पश्चात् उसी दिन थाना अधिकारी विक्रम सिंह ने भी उक्त नमूने "एसएस" मुद्रा से मुद्राबंद किए । इस तथ्य का साक्ष्य निर्विवाद है कि नमूने विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किए गए थे, जहां एक नमूने की मुद्रा को तोड़ा गया था और "आरपी" मुद्रा से पुनःमुद्राबंद किया गया । उसके पश्चात्, नमूना न्यायिक मालखाने में जमा किया गया, जहां से इसे न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजा गया । न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला की रिपोर्ट में यह उल्लिखित है कि मुद्रा अविकल थी और नमूने के साथ छेड़छाड़ नहीं हुई थी ।

10. उन सभी व्यक्तियों को, जिनके कब्जे में विनिषिद्ध पदार्थ का नमूना था, यह समर्थन करने के लिए अभिलेख पर लाया गया है कि नमूनों के साथ कोई छेड़छाड़ नहीं की गई थी । प्रतिरक्षा पक्ष साक्षियों की प्रतिपरीक्षा में नमूनों के साथ छेड़छाड़ करने की बाबत कोई बात निकालने में असफल रहा । इस प्रकार, हमारा यह निष्कर्ष है कि नमूनों पर सारे

समय उचित रूप से कार्यवाही की गई थी और नमूना गांजे का होना पाया गया था । इसके अतिरिक्त, प्रतिरक्षा पक्ष उस मुद्रा की बाबत, जो सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज को सौंपी गई थी, अन्वेषक अधिकारी रामफल की यह प्रतिपरीक्षा करने में असफल रहा कि उसने सहायक उप निरीक्षक ऋषिराज से कैसे मुद्रा वापस अपने कब्जे में ली थी । इन परिस्थितियों में, हम यह नहीं मानते कि अभियोजन पक्ष प्रस्तुत परिस्थितियों में मुद्रा के एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के पास संचलन का स्पष्टीकरण देने के लिए कर्तव्यबद्ध था । चूंकि, नमूने के संचलन को साबित किया गया है और इसे नियमित पाया गया है, इसलिए अभियोजन पक्ष ने वर्तमान मामले में अभियुक्तों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए अपने पक्षकथन को पर्याप्त रूप से साबित किया है ।

11. हमने **अलाउद्दीन मियां और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय की अवेक्षा की है । उक्त विनिश्चय में इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "10. दंड संहिता के उपबंधों पर नैमित्तिक रूप से दृष्टिपात करने पर भी यह दर्शित होगा कि अपराधों की गुरुता के अनुसार दंडों का ध्यानपूर्वक श्रेणीकरण किया गया है । गंभीर दोषों के मामलों में विहित किए गए दंड कठोर हैं जबकि छोटे अपराधों के मामलों में उदारता दिखाई गई है । यहां भी चातुर्य के लिए काफी गुंजाइश छोड़ी गई है क्योंकि दंड की केवल उच्चतम सीमा का कथन करके दंड का चुनाव करने का काम न्यायाधीश के विवेक पर छोड़ दिया गया है । केवल कुछ ही मामलों में दंड की न्यूनतम सीमा विहित की गई है । इसके बाद प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि न्यायाधीश प्रत्येक मामले में अधिरोपित किए जाने वाले अपराध के लिए उपयुक्त दंड का अवधारण करने के लिए कौन-सी प्रक्रिया अपनाते हैं ? दंड का चुनाव संहिता की धारा 235 की उपधारा (2), जो निम्नलिखित है, में वर्णित प्रक्रिया का अनुसरण करने के बाद किया जाना है –
>
> > यदि अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जाता है तो न्यायाधीश उस दशा के सिवाय जिसमें वह धारा 360 के उपबंधों के अनुसार कार्यवाही करता है, दंड के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनेगा और तब विधि के अनुसार उसके बारे में दंडादेश देगा ।

---

[1] [1990] 1 उम. नि. प. 497 = (1989) 3 एस. सी. सी. 5.

अभियुक्त की सुनवाई की अपेक्षा इसलिए आशयित है कि नैसर्गिक न्याय के नियम का समाधान हो सके । निष्पक्षता की यह मूलभूत अपेक्षा है कि अभियुक्त जो दोष के प्रश्न की बाबत अब तक अभियोजन के साक्ष्य पर अपना ध्यान केंद्रित करता रहा था, उससे उसके दोषी पाए जाने पर यह पूछा जाए कि क्या उसे दंडादेश के प्रश्न पर कुछ कहना है या कोई साक्ष्य देना है । यह इसलिए भी आवश्यक है कि चूंकि आम तौर पर न्यायालयों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे दंडादेश देने के मामले में अपने व्यापक विवेकाधिकार का प्रयोग करके दंड का चुनाव करें । विधान-मंडल ने अधिरोपित किए जाने के लिए सही दंड का अवधारण करने में न्यायालय की सहायता करने के उद्देश्य से धारा 235 की उपधारा (2) प्रविष्ट की । अतः, उक्त उपबंध दोहरा प्रयोजन सिद्ध करता है ; एक ओर तो यह दंडादेश के प्रश्न पर अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देकर नैसर्गिक न्याय के नियम का समाधान करता है और दूसरी ओर यह दिए जाने वाले दंडादेश का चुनाव करने में न्यायालय की सहायता करता है । चूंकि उक्त उपबंध दंडादेश के प्रश्न से संबंधित सारी सुसंगत सामग्री को न्यायालय के समक्ष रखने का अवसर अभियुक्त को देने के लिए आशयित है, अतः, इस बाबत कोई विवाद नहीं हो सकता है कि उक्त उपबंध कल्याणप्रद है और उसका कठोरतापूर्वक अनुसरण किया जाना चाहिए । यह स्पष्ट रूप से आज्ञापक उपबंध है और इसे औपचारिक उपबंध मात्र नहीं माना जाना चाहिए । अतः श्री गर्ग का यह शिकायत करना न्यायोचित था कि विचारण न्यायालय ने इसे वास्तव में एक औपचारिक उपबंध माना जैसा कि इस तथ्य से प्रकट है कि विचारण न्यायालय ने दोष का निष्कर्ष 31 मार्च, 1987 को अभिलिखित किया, उसी दिन इससे पहले कि अभियुक्त व्यक्ति अपनी दोषसिद्धि के सदमे को बर्दाश्त कर पाते उनसे यह पूछा गया कि क्या वे दंडादेश के प्रश्न की बाबत कुछ कहना चाहते हैं और उसके एकदम बाद दोनों अभियुक्तों पर मृत्यु शास्ति अधिरोपित करने वाला विनिश्चय सुना दिया गया । जैसा कि पहले कहा जा चुका है, जहां जीवन या मृत्यु का प्रश्न हो वहां पीठासीन अधिकारी को अभियुक्त के कानूनी अधिकार के प्रति अत्यधिक रुचि दर्शित करनी चाहिए और उसे ऐसी औपचारिकता मात्र नहीं मानना चाहिए जो दंड का चुनाव करने से पूर्व पूरी की जानी है । यदि अभियुक्त को अपना पूर्ववृत्त, अपनी सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि तथा दंड को कम

कर सकने वाली परिस्थितियां न्यायालय के समक्ष रखने का कारगर और वास्तविक अवसर दिए बिना दंड का चुनाव कर लिया जाता है, जैसा कि इस मामले में हुआ है, तो दंडादेश की बाबत न्यायालय का विनिश्चय भेद्य होगा । हमें यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि बहुत से मामलों में दंडादेश देने वाले विनिश्चय के परिणाम विशुद्ध रूप से प्रशासनिक विनिश्चय के परिणामों की तुलना में अपराधी और उसके परिवार के सदस्यों के लिए कहीं अधिक गंभीर होते हैं, अतः निर्णयात्मक ढंग से यह कहा जा सकता है कि बाद वाले मामले की तुलना में पहले वाले मामले में निष्पक्षता का सिद्धांत अधिक बलपूर्वक लागू होना चाहिए । यदि सिविल परिणामों वाले किसी प्रशासनिक विनिश्चय के विरुद्ध सुनवाई का अवसर न भी दिया जाए तो उसे आम तौर पर नैसर्गिक न्याय के नियम का अतिक्रमणकारी बताकर अभिखंडित कर दिया जाता है । इसी प्रकार, संहिता की धारा 235 की उपधारा (2) की मूल भावना के अनुसार उसकी अपेक्षाओं का अनुसरण किए बिना पारित किए गए किसी दंडादेशात्मक विनिश्चय का भी यह हश्र होगा और उसके स्थान पर कोई समुचित आदेश पारित करना पड़ सकता है । दंडादेश पारित करने वाले न्यायालय को दंड के प्रश्न पर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए और यह सुनिश्चित करने का प्रयास करना चाहिए कि दंडादेश के प्रश्न से संबंधित सभी सुसंगत तथ्य और परिस्थितियां अभिलेख पर लाई जाएं । ऐसे न्यायालय को अपने समक्ष रखी गई दंड को कम करने वाली या उसमें वृद्धि करने वाली परिस्थितियों को सम्यक् महत्व प्रदान करने के बाद ही दंडादेश सुनाना चाहिए । हमारे विचार से एक व्यापक नियम के रूप में विचारण न्यायालय को चाहिए कि वह दोषसिद्धि अभिलिखित करने के पश्चात् मामले को किसी भावी तारीख तक स्थगित करके अभियोजन पक्ष और बचाव पक्ष, दोनों, से यह अपेक्षा करे कि वे उसके समक्ष दंडादेश के प्रश्न से संबंधित सुसंगत सामग्री पेश करें और तत्पश्चात् वह अपराधी पर अधिरोपित किए जाने वाला दंडादेश पारित करे । हमें खेद है कि प्रस्तुत मामले में, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, विद्वान् विचारण न्यायालय ने संहिता की धारा 235 की उपधारा (2) की आज्ञापक अपेक्षा को पर्याप्त महत्व प्रदान नहीं किया । जिस समय उच्च न्यायालय ने मृत्यु शास्ति की पुष्टि की, उस समय उसके समक्ष भी उतनी ही अपर्याप्त सामग्री थी जितनी कि विद्वान् सेशन न्यायाधीश के समक्ष रखी गई थी ।"

12. इस प्रकार, हम अभियुक्तों को 11 कि. ग्रा. गांजा कब्जे में रखने के लिए स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20 के अधीन दोषी पाते हैं । विभिन्न विनिषिद्ध पदार्थों की अल्प और वाणिज्यिक मात्रा का उपबंध करते हुए केन्द्रीय सरकार की अधिसूचना के अनुसार गांजा की वाणिज्यिक मात्रा 20 कि. ग्रा. या इससे अधिक है, और अभियुक्त अल्प मात्रा कब्जे में रखने के दोषी हैं । इस बात को ध्यान में रखते हुए, हम अभियुक्तों (आशा देवी और उसके पति ओम प्रकाश) को स्वापक ओषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20 के अधीन दोषसिद्ध करते हैं और उन्हें पांच वर्ष का साधारण कारावास दिया जाता है ।

13. दंडादेश देने से पूर्व, **अलाउद्दीन मियां** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित सिद्धांत का अनुसरण करते हुए प्रत्यर्थियों/अभियुक्तों को हमारे समक्ष तथ्य रखने का अवसर देते हुए इस मामले को स्थगित किया गया और अपीलार्थी को भी यह निदेश दिया गया कि इस घटना के पश्चात् के प्रत्यर्थियों के आचरण के बारे में पता लगाए और इस न्यायालय को सूचित करे । स्थगन की तारीख को अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल और प्रत्यर्थियों/अभियुक्तों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह व्यक्त किया कि प्रत्यर्थी इस घटना के पश्चात् किसी अन्य घटना में आलिप्त नहीं पाए गए हैं । पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् और हमारे समक्ष प्रस्तुत न्यूनकारी और गुरुतरकारी परिस्थितियों को सम्यक् महत्व देने के पश्चात् हमारा यह विचार है कि हमारे लिए अभियुक्तों को हमारे द्वारा पारित दंडादेश के साथ दोषसिद्ध करना उचित रहेगा जिससे प्रयोजन की पूर्ति हो जाएगी ।

14. तद्नुसार, हम उच्च न्यायालय के साथ-साथ विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय और आदेश को अपास्त करते हैं और यह निदेश देते हैं कि अभियुक्त/प्रत्यर्थियों को दंडादेश भुगतने के लिए तुरंत अभिरक्षा में लिया जाए । तद्नुसार यह अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

मुन्ना लाल जैन और एक अन्य

बनाम

विपीन कुमार शर्मा और अन्य

15 मई, 2015

न्यायमूर्ति अनिल आर. दवे, न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर और न्यायमूर्ति कुरियन जोसेफ

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – प्रतिकर की संगणना – मोटर दुर्घटना में हुई 30 वर्ष के युवक की मृत्यु के मामले में उसके माता-पिता द्वारा व्यक्तिगत और जीवन खर्च, आश्रिता की हानि और भावी संभावना के आधार पर प्रतिकर की मांग की दशा में प्रतिकर की संगणना व्यक्तिगत और जीवन खर्च के प्रति 50% की कटौती तथा 26 से 30 वर्ष के बीच मृतक की आयु होने पर गुणक की संख्या 17 होनी चाहिए ।

अपीलार्थी एम. ए. सी. टी. सं. 736/2008 में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, कड़कड़डूमा, दिल्ली के समक्ष दावाकर्ता है । वे मृतक सत्येंद्र कुमार जैन, आयु 30 वर्ष के माता-पिता हैं जिसकी 12 जूलाई, 2008 को मोटर दुर्घटना में मृत्यु हो गई थी । वह पंडित के रूप में स्वनियोजित था । वह अविवाहित था । अतः माता-पिता द्वारा दावा किया गया है । अपीलार्थियों ने 95,50,000/- रुपए की रकम का दावा किया । दावा अधिकरण ने आवेदन के संस्थित किए जाने की तारीख से 7.5% ब्याज के साथ 6,24,000/- रुपए की आश्रिता की हानि सहित 6,59,000/- रुपए का कुल प्रतिकर अधिनिर्णीत किया । असंतुष्ट होकर अपीलार्थियों ने मोटर दुर्घटना दावा आवेदन सं. 687/2011 में दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष आवेदन किया जिससे यह आक्षेपित निर्णय उद्भूत हुआ । उच्च न्यायालय ने दावा अधिकरण द्वारा यथा आदेशित ब्याज के साथ प्रतिकर में वृद्धि की और 12,61,800/- रुपए नियत की । 50% व्यक्तिगत व्यय के लिए कटौती की और 13 के गुणक को लागू किया । अब भी संतुष्ट न होते हुए दावाकर्ताओं ने इस न्यायालय के समक्ष आवेदन किया । मोटर यान अधिनियम, 1988 के अधीन प्रतिकर की संगणना पर कभी समाप्त न होने वाला विवाद इस अपील की विषयवस्तु है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – तारीख 8 फरवरी, 2013 को इस न्यायालय ने सही गुणक

को लागू करने और रकम की कटौती के मुद्दों तक ही सीमित करते हुए नोटिस जारी किया । दूसरे शब्दों में न्यायालय गुणक के लागू करने के प्रश्न और व्यक्तिगत तथा जीविका व्ययों के मद्दे कटौती के प्रश्न तक ही अपील को सीमित रखते हुए विचार करना चाहता था । अविवाहितों के संबंध में प्रसामान्यतः, व्यक्तिगत और आजीविका व्ययों के रूप में 50% की कटौती की जाती है क्योंकि यह माना जाता है कि अविवाहित अपने पर अधिक खर्च करते हैं । अन्यथा भी थोड़े समय में उनके विवाहित होने की भी संभावना रहती है जिस दशा में माता-पिता और सहोदरों के प्रति अभिदाय में काफी कटौती होने की संभावना है । इसके अतिरिक्त प्रतिकूल साक्ष्य के अधीन रहते हुए पिता के पास अपनी निजी आय होने की संभावना है और उसे आश्रित नहीं माना जाएगा तथा अकेले माता को आश्रित माना जाएगा । प्रतिकूल साक्ष्य के अभाव में भाइयों और बहनों को आश्रित नहीं माना जाएगा क्योंकि या तो वे निराश्रित होंगे और धन कमा रहे होंगे या विवाहित होंगे या पिता पर आश्रित होंगे । हमारे समक्ष मामले में साक्ष्य के आधार पर विचलन का कोई ऐसी आपवादिक परिस्थिति या अकाट्य कारण नहीं है अतः व्यक्तिगत और आजीविका व्ययों के प्रति 50% की कटौती को अस्तव्यस्त नहीं किया जाता है । शेष प्रश्न केवल गुणक पर है । उच्च न्यायालय ने गुणक के रूप में 13 लिया है । क्या गुणक आश्रितों की या मृतक की आयु पर निर्भर होना चाहिए, कुछ समय से अनिश्चित बना हुआ है । यह अभिनिर्धारित किया गया कि गुणक का उपयोग मृतक की आयु के प्रतिनिर्देश से किया जाना चाहिए । इसका एक कारण यह भी प्रतीत होता है कि मृतक की आयु के बारे में निश्चितता है किंतु जहां तक आश्रितों का संबंध है हमेशा विवाद की गुंजाइश रहेगी कि क्या ज्येष्ठतम या कनिष्ठतम या औसत, आदि आयु क्या निकाली जाए । सरला वर्मा वाले मामले में, इस न्यायालय ने धारा 166 के अधीन किए गए दावे में आश्रिता की हानि और प्रतिकर के अवधारण के निर्धारण के अन्यथा जटिल प्रयोग को सरल बनाने का प्रयास किया । सरला वर्मा वाले मामले में यह ठीक ही कहा गया है कि दावाकर्ताओं को प्रतिकर के प्रयोजनों के लिए मृत्यु दावा के मामले में (क) मृतक की आयु ; (ख) मृतक की आय ; और (ग) आश्रितों की संख्या स्थापित करनी चाहिए । निर्भरता की हानि का निष्कर्ष निकालने के लिए, अधिकरण को (i) आय निकालने के लिए की गई वृद्धियों/कटौतियों ; (ii) मृतक के व्यक्तिगत निर्वाह खर्चों के प्रति की गई कटौतियों ; और (iii) मृतक की आयु के प्रतिनिर्देश से लागू किए जाने वाले गुणक पर विचार करना चाहिए । हम इस मुद्दे पर विधिक पर

पुनर्विचार करना आवश्यक नहीं समझते हैं क्योंकि हम सरला वर्मा वाले मामले में व्यक्त किए गए मत से पूर्णतः सहमत हैं । सरला वर्मा वाले मामले में पैरा 19 में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने उपाय 2 में इस पहलू पर विचार किया । 26 से 30 वर्ष के आयु के बीच मृतक की आयु की दशा में गुणक 17 है । उच्च न्यायालय द्वारा 12,000/- रुपए माहवार आय के नियतन पर कोई विवाद या शिकायत नहीं है । (पैरा 7, 10, 12, 13 और 14)

अनुसृत निर्णय

पैरा

[2009] (2009) 6 एस. सी. सी. 121 :
सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य बनाम
दिल्ली परिवहन निगम और एक अन्य । 8

निर्दिष्ट निर्णय

[2013] (2013) 9 एस. सी. सी. 54 :
राजेश और अन्य बनाम **राजवीर सिंह और अन्य** ; 11

[2013] (2013) 9 एस. सी. सी. 65 :
रेशमा कुमारी और अन्य बनाम **मदन मोहन और एक अन्य** ; 9

[2012] (2012) 6 एस. सी. सी. 421 :
संतोष देवी बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लि.** । 6

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2015 की सिविल अपील सं. 4497.

2011 के मोटर यान अधिनियम आवेदन सं. 687 में दिल्ली उच्च न्यायालय के तारीख 31 अगस्त, 2012 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्रीमती अंजू जैन, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री अविनाश कुमार लखनपाल, अभिषेक कुमार और विरेश बी. सहारया

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति कुरियन जोसेफ ने दिया ।

न्या. जोसेफ – इजाजत दी गई ।

2. मोटर यान अधिनियम, 1988 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" कहा गया है) के अधीन प्रतिकर की संगणना पर कभी समाप्त न होने वाला विवाद इस अपील की विषयवस्तु है ।

3. किसी कानूनी और नियमनिष्ठ फार्मूला के अभाव में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित किए गए मार्गदर्शक सिद्धांतों के द्वारा अनेक प्रयास किए जाने के बावजूद भी कुछ क्षेत्र धुंधले रह गए । प्रतिकर मूलतः मामले में उपलब्ध साक्ष्य पर आधारित होता है और न्यायालयों द्वारा दर्शाए गए फार्मूले प्रतिकर की संगणना के लिए केवल मार्गदर्शक सिद्धांत हैं । यही कारण है कि न्यायालय फार्मूला सुझाते समय "मामूली तौर पर", "प्रसामान्यतः", "आपवादिक परिस्थितियां" आदि का उल्लेख करते हुए केवियट लगाते हैं ।

4. हमारे समक्ष मामले में, अपीलार्थी एम. ए. सी. टी. सं. 736/2008 में मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, कड़कड़डूमा, दिल्ली के समक्ष दावाकर्ता है । वे मृतक सत्येंद्र कुमार जैन, आयु 30 वर्ष के माता-पिता हैं जिसकी 12 जूलाई, 2008 को मोटर दुर्घटना में मृत्यु हो गई थी । वह पंडित के रूप में स्वनियोजित था । वह अविवाहित था । अतः माता-पिता द्वारा दावा किया गया है ।

5. अपीलार्थियों ने 95,50,000/- रुपए की रकम का दावा किया । दावा अधिकरण ने आवेदन के संस्थित किए जाने की तारीख से 7.5% ब्याज के साथ 6,24,000/- रुपए की आश्रिता की हानि सहित 6,59,000/- रुपए का कुल प्रतिकर अधिनिर्णीत किया । असंतुष्ट होकर अपीलार्थियों ने मोटर दुर्घटना दावा आवेदन सं. 687/2011 में दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष आवेदन किया जिससे यह आक्षेपित निर्णय उद्भूत हुआ । उच्च न्यायालय ने दावा अधिकरण द्वारा यथा आदेशित ब्याज के साथ प्रतिकर में वृद्धि की और 12,61,800/- रुपए नियत की ।

6. उच्च न्यायालय ने मासवार आय 12,000/- रुपए नियत की और **संतोष देवी** बनाम **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लि.**[1] वाले मामले का अवलंब लेते हुए भावी संभावनाओं के लिए 30% जोड़ा । 50% व्यक्तिगत व्यय के लिए कटौती की और 13 के गुणक को लागू किया । अब भी संतुष्ट न होते हुए दावाकर्ताओं ने इस न्यायालय के समक्ष आवेदन किया ।

7. तारीख 8 फरवरी, 2013 को इस न्यायालय ने..... सही गुणक

---

[1] (2012) 6 एस. सी. सी. 421.

को लागू करने और रकम की कटौती के मुद्दों तक ही सीमित करते हुए नोटिस जारी किया । दूसरे शब्दों में न्यायालय गुणक के लागू करने के प्रश्न और व्यक्तिगत तथा जीविका व्ययों के मद्दे कटौती के प्रश्न तक ही अपील को सीमित रखते हुए विचार करना चाहता था ।

8. व्यक्तिगत और जीविका व्ययों के प्रति कटौती के मुद्दे पर **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम और एक अन्य**[1] वाले मामले में पैरा 31 में यह अभिनिर्धारित किया गया :–

> "31. ..... अविवाहितों के संबंध में प्रसामान्यतः, व्यक्तिगत और आजीविका व्ययों के रूप में 50% की कटौती की जाती है क्योंकि यह माना जाता है कि अविवाहित अपने पर अधिक खर्च करते हैं । अन्यथा भी थोड़े समय में उनके विवाहित होने की भी संभावना रहती है जिस दशा में माता-पिता और सहोदरों के प्रति अभिदाय में काफी कटौती होने की संभावना है । इसके अतिरिक्त प्रतिकूल साक्ष्य के अधीन रहते हुए पिता के पास अपनी निजी आय होने की संभावना है और उसे आश्रित नहीं माना जाएगा तथा अकेले माता को आश्रित माना जाएगा । प्रतिकूल साक्ष्य के अभाव में भाइयों और बहनों को आश्रित नहीं माना जाएगा क्योंकि या तो वे निराश्रित होंगे और धन कमा रहे होंगे या विवाहित होंगे या पिता पर आश्रित होंगे ।'

9. सामान्यतः अविवाहित की दशा में 50% की कटौती का अनुमोदन हाल ही में यह अभिनिर्धारित करते हुए **रेशमा कुमारी और अन्य** बनाम **मदन मोहन और एक अन्य**[2] वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चय द्वारा अनुमोदित किया गया कि व्यक्तिगत और जीविका व्ययों के कटौती के पहलू पर **सरला वर्मा** (पूर्वोक्त) वाले मामले में नियत मानदंड को ..... "मामूली तौर पर तब तक अनुसरित किया जाना चाहिए जब तक पूर्व पैरा में उल्लिखित परिस्थितियों में विचलन का कोई मामला नहीं बनता ।" पूर्व पैरा 41 इस प्रकार है :–

> "41. उपरोक्त व्यक्तिगत और आजीविका व्ययों के लिए समुचित कटौती का मार्गदर्शक सिद्धांत उपलब्ध कराता है । हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि व्यक्ति की कुल उपार्जन का अनुपात जो वह बचाता है या अन्य लोगों के भरणपोषण के लिए अनन्यतः खर्च करता

---

[1] (2009) 6 एस. सी. सी. 121.

[2] (2013) 9 एस. सी. सी. 65.

है, उसकी आजीविका व्ययों का भाग गठित नहीं करता किंतु जो वह स्वयं पर अनन्यतः खर्च करता है, गठित करता है । व्यक्तिगत और आजीविका व्ययों के मद्दे कटौती की पृथक्तः कुटुम्ब में आश्रित सदस्यों की संख्या के प्रतिनिदेश से भिन्न-भिन्न हो सकता है और मृतक के व्यक्तिगत आजीविका व्यय ठीक-ठीक आश्रितों की संख्या के तत्समान होना आवश्यक नहीं है ।'

10. हमारे समक्ष मामले में साक्ष्य के आधार पर विचलन करने के लिए कोई ऐसी आपवादिक परिस्थिति या अकाट्य कारण नहीं है अतः व्यक्तिगत और आजीविका व्ययों के प्रति 50% की कटौती को अस्तव्यस्त नहीं किया जाता है ।

11. जहां तक भावी संभावना का संबंध है, **राजेश और अन्य** बनाम **राजवीर सिंह और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि स्वनियोजित व्यक्तियों के मामलों में भी यदि मृतक पीड़ित की आयु 60 वर्ष से कम है तो भावी संभावनाओं की संगणना करते समय मृतक की वास्तविक आय का 50% जोड़ा जाना चाहिए । यह उद्धृत किया :–

"8. क्योंकि न्यायालय ने **संतोष देवी** (पूर्वोक्त) वाले मामले में वस्तुतः **सरला वर्मा** (पूर्वोक्त) वाले मामले में यथाधिकथित वेतनभोगी व्यक्तियों के मामलों के सिद्धांत को लागू करना चाहता था और स्वनियोजित व्यक्तियों और नियत मजदूरी वाले व्यक्तियों को भी लागू करना चाहता था इसलिए यह स्पष्ट किया जाता है कि उन समूहों के मामले में वृद्धि हमेशा 30% नहीं है – यह आय के प्रतिनिर्देश के अनुसार होगा । दूसरे शब्दों में स्वनियोजित या नियत मजदूरी वाले व्यक्तियों के मामले में यदि मृतक पीड़ित की आयु 40 वर्ष से कम है तो भावी संभावनाओं की संगणना करते समय मृतक की वास्तविक आय का 50% जोड़ा जाना चाहिए । यह कहना आवश्यक नहीं है कि वास्तविक आय कर, यदि कोई है का संदाय करने के पश्चात् आय होनी चाहिए । वृद्धि 30% होनी चाहिए यदि मृतक की आयु 40 से 50 वर्ष के बीच है ।'

मृतक की आयु 30 वर्ष होने के कारण 50% परिवर्धित किए जाने की अपेक्षा है ।

---

[1] (2013) 9 एस. सी. सी. 54.

12. शेष प्रश्न केवल गुणक पर है । उच्च न्यायालय ने **संतोष देवी** (पूर्वोक्त) वाले मामले का अनुसरण करते हुए गुणक के रूप में 13 लिया है । क्या गुणक आश्रितों की या मृतक की आयु पर निर्भर होना चाहिए, कुछ समय से अनिश्चित बना हुआ है ; किंतु **रेशमा कुमारी** (पूर्वोक्त) वाले मामले में अन्य तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चय द्वारा इससे छुटकारा मिल गया है । यह अभिनिर्धारित किया गया कि गुणक का उपयोग मृतक की आयु के प्रतिनिर्देश से किया जाना चाहिए । इसका एक कारण यह भी प्रतीत होता है कि मृतक की आयु के बारे में निश्चितता है किंतु जहां तक आश्रितों का संबंध है हमेशा विवाद की गुंजाइश रहेगी कि क्या ज्येष्ठतम या कनिष्ठतम या औसत, आदि आयु क्या निकाली जाए । यह उद्धृत किया कि :–

> "36. **सरला वर्मा** (पूर्वोक्त) वाले मामले में, इस न्यायालय ने धारा 166 के अधीन किए गए दावे में आश्रिता की हानि और प्रतिकर के अवधारण के निर्धारण के अन्यथा जटिल प्रयोग को सरल बनाने का प्रयास किया । **सरला वर्मा** (पूर्वोक्त) वाले मामले में यह ठीक ही कहा गया है कि दावाकर्ताओं को प्रतिकर के प्रयोजनों के लिए मृत्यु दावा के मामले में (क) मृतक की आयु ; (ख) मृतक की आय ; और (ग) आश्रितों की संख्या स्थापित करनी चाहिए । निर्भरता की हानि का निष्कर्ष निकालने के लिए, अधिकरण को (i) आय निकालने के लिए की गई वृद्धियों/कटौतियों ; (ii) मृतक के व्यक्तिगत निर्वाह खर्चों के प्रति की गई कटौतियों ; और (iii) मृतक की आयु के प्रतिनिर्देश से लागू किए जाने वाले गुणक पर विचार करना चाहिए । हम इस मुद्दे पर विधिक पर पुनर्विचार करना आवश्यक नहीं समझते हैं क्योंकि हम **सरला वर्मा** (पूर्वोक्त) वाले मामले में व्यक्त किए गए मत से पूर्णतः सहमत हैं ।"

13. **सरला वर्मा** (पूर्वाक्त) वाले मामले में पैरा 19 में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने उपाय 2 में इस पहलू पर विचार किया । जिसे नीचे उद्धृत किया जा रहा है :–

> "19. * * * * *
>
> उपाय 2 (गुणक का सुनिश्चित किया जाना)
>
> मृतक की आयु और सक्रिय जीवन की अवधि को ध्यान में रखते हुए समुचित गुणक का चयन किया जाना चाहिए । इसका अभिप्राय

उन वर्षों की संख्या जितना वह जीवित रहता या कार्य करता सुनिश्चित करना नहीं है बल्कि दुर्घटना की दृष्टि से है । जीवन और आर्थिक घटकों के अनेक संभाव्यताओं को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय द्वारा आयु के प्रतिनिर्देश से गुणकों की सारणी बनाई गई । मृतक की आयु की प्रतिनिर्देश से उक्त सामग्री से गुणक का चयन किया जाना चाहिए ।"

14. 26 से 30 वर्ष के आयु के बीच मृतक की आयु की दशा में गुणक 17 है । उच्च न्यायालय द्वारा 12,000/- रुपए माहवार आय के नियतन पर कोई विवाद या शिकायत नहीं है ।

15. इस प्रकार अपीलार्थी निर्भरता की हानि के प्रति 18,36,000/- रुपए प्रतिकर के हकदार हैं जिसकी संगणना इस प्रकार की गई है :–

संगणना	कुल (रुपए में)
12,000/- रुपए (माहवार आय) जोड़ [12,000 का 50% (भावी संभावना)] =	18,000/-
[18,000 - (कटौतियों) का 50%] =	9,000/-
[9,000] - 12 (वार्षिक आय) द्वारा गुणा करें =	1,08,000/-
[1,08,000] - 17 (गुणक) द्वारा गुणा करें =	18,36,000/-

अन्य शीर्षों या ब्याज की दर पर उच्च न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत रकमों पर कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

16. अपील यथा उपरोक्त अनुसार मंजूर की जाती है । खर्चे के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया गया ।

अपील मंजूर की गई ।

पा.

रंजीत कुमार राम उर्फ **रंजीत कुमार दास**

बनाम

बिहार राज्य

तथा

पंडित उर्फ **संजय महतो आदि**

बनाम

बिहार राज्य

तथा

चिंटू सिंह

बनाम

बिहार राज्य

15 मई, 2015

न्यायमूर्ति टी. एस. ठाकुर और न्यायमूर्ति (श्रीमती) आर. बानुमति

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 464क, 302/34, 120ख और 201 – फिरौती के लिए व्यपहरण और हत्या – अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध करने पर कि मृतक लड़के को अंतिम बार अभियुक्त सं. 3 और अभियुक्त सं. 5 के साथ देखा गया था और अभियुक्तों द्वारा यह स्पष्टीकरण नहीं देने पर कि कैसे और कब वे मृतक बालक के सहचर्य से अलग हुए थे, उनके विरुद्ध यह एक ठोस प्रतिकूल परिस्थिति है और निचले न्यायालयों ने इन अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करके ठीक किया है ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 27 – संस्वीकृति कथन – संस्वीकृति कथन के आधार पर किसी तथ्य का प्रकटन न होना और केवल मृतक लड़के का शव पड़ा होने के स्थल का प्रकटन होना – ग्राह्यता – निस्संदेह, इस कथन से किसी ऐसे तथ्य का प्रकटन नहीं हुआ था, जो धारा 27 के अधीन ग्राह्य हो किंतु यदि अभियुक्तों से कोई कथन अभिलिखित नहीं किया जाता, तो मृतक लड़के का शव पड़ा होने का

स्थल अज्ञात रहा होता, हालांकि, अन्वेषक अधिकारी को अभियुक्तों से अभिलिखित किए गए कथन के आधार पर उन्हें अभिकथित घटनास्थल पर न ले जाना चाहिए था और यह अन्वेषण में की एकमात्र खामी है, तो भी इस आधार पर अभियोजन के वृत्तांत पर, जो कि अन्यथा तर्कपूर्ण और विश्वसनीय है, संदेह नहीं किया जा सकता है ।

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 464क और 302/34 – फिरौती के लिए व्यपहरण और हत्या – सामान्य आशय – सामान्य आशय का प्रत्यक्ष साक्ष्य यदाकदा ही उपलब्ध होता है और अभियुक्तों के ऐसे सामान्य आशय का निष्कर्ष केवल साक्ष्य और मामले के साबित तथ्यों से प्रतीत होने वाली परिस्थितियों से निकाला जा सकता है और क्योंकि अभियुक्त सं. 1 फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए इत्तिलाकर्ता को व्यपहरणकर्ताओं से ऐसी कोई मांग करने से पूर्व ही उत्प्रेरित कर रहा था, इसलिए उसका मृतक लड़के का व्यपहरण करने और हत्या कारित करने का सामान्य आशय था और इसलिए उसे ठीक ही दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है ।

शिकायतकर्ता (अभि. सा. 8) ने तारीख 27 फरवरी, 2006 को यह कथन करते हुए एक शिकायत दर्ज कराई कि उसका पांच वर्ष आयु का पुत्र विक्की उसकी सब्जी की दुकान के निकट खेल रहा था और विक्की की सात वर्ष आयु की बहिन भी उसके साथ खेल रही थी । उस समय दो अनजान व्यक्तियों ने विक्की और अन्य बच्चों को चाकलेट दी और विक्की को यह कहते हुए ले गए कि वे वापस आएंगे और इस लड़के को छोड़ जाएंगे, किंतु लड़का विक्की वापस नहीं आया । तलाश करने के बावजूद गुम लड़के को ढूंढा नहीं जा सका । पांच-छह दिन पश्चात् रंजीत कुमार राम (अभियुक्त 1) और संजय (अभियुक्त 4), जो उसी बाजार अर्थात् पासवान चौक में सब्जी विक्रेता थे, ने अभि. सा. 8 को कहा कि यदि वह धन दे देगा तो उसका पुत्र वापस आ जाएगा । घटना के लगभग तीन माह पश्चात् तारीख 23 जून, 2006 को अभि. सा. 8 को एक फोन आया और व्यपहरणकर्ताओं ने उसके पुत्र को लौटाने के लिए चार लाख रुपए की फिरौती मांगी, किंतु अभि. सा. 8 ने इस मांग को पूरा करने में अपनी असमर्थता जताई और अंततः फिरौती की रकम 1,05,000/- रुपए तय की गई । अभि. सा. 8 को तारीख 3 जुलाई, 2006 को व्यपहरणकर्ताओं से एक अन्य फोन आया और अभि. सा. 8 ने उनको सूचित किया कि उसने फिरौती की रकम की व्यवस्था कर ली है और अभि. सा. 8 को सोनपुर में बच्छा बाबू के होटल के आगे नए गंडक पुल पर धन लेकर आने के लिए

कहा गया । जब अभि. सा. 8 ने अकेले धन लेकर आने में डर लगने की बात जाहिर की तो व्यपहरणकर्ताओं द्वारा उसे अपने पड़ोसी रंजीत कुमार राम (अभियुक्त 1) और संजय (अभियुक्त 4) के साथ आने के लिए कहा गया । अभि. सा. 8 ने तारीख 4 जुलाई, 2006 को फिरौती की रकम एक प्लास्टिक की थैली में लपेटी और इसे एक जूट के थैले में अपनी साइकिल के कैरियर के नीचे रखा और वह रंजीत कुमार (अभि. 1), संजय (अभि. 4) और संजीत (अभि. 2) के साथ व्यपहरणकर्ताओं द्वारा यथा निदेशित स्थान के लिए रवाना हुआ । जब वे नए गंडक पुल पर पहुंचे तो संजीत (अभि. 2) अभि. सा. 8 के साइकिल से उतरा और सड़क की बाईं तरफ एक झोपड़ी में गया और अभि. सा. 8 उसके पीछे-पीछे गया । उस समय दो व्यक्ति बाहर आए और अभि. सा. 8 की साइकिल के कैरियर से धन निकाल लिया । संजीत (अभि. 2) ने अभि. सा. 8 को सूचित किया कि उसका जीजा बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) इस झोपड़ी में रहता है और अभि. सा. 8 को सूचित किया गया कि उसके पुत्र को सायंकाल तक लौटा दिया जाएगा । धन का संदाय करने के पश्चात् भी लड़का नहीं लौटाया गया । अभि. सा. 8 ने तारीख 16 अगस्त, 2006 को अन्वेषक अधिकारी रीटा कुमारी (अभि. सा. 12) को अभियुक्तों के नाम के साथ-साथ व्यपहरणकर्ताओं द्वारा की गई मांग और धन का संदाय करने के बारे में सूचित किया । अन्वेषक अधिकारी ने सोनपुर में छापा मारा और रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजीत (अभि. 2) को गिरफ्तार किया और उनके कथन अभिलिखित किए । अन्वेषक अधिकारी ने रंजीत कुमार राम (अभि. 1) के कथन के आधार पर उसके मकान से एक पांच सौ रुपए का करेंसी नोट बरामद किया, जिस पर सुनील कुमार अभि. सा. 8 के हस्तलेख में हरी स्याही से उसका नाम लिखा हुआ था । उसके पश्चात्, अभियुक्त संजय (अभि. 4), बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) और चिंटू सिंह (अभि. 5) को भी गिरफ्तार किया गया और उनके कथन अभिलिखित किए गए । अन्वेषक अधिकारी इन कथनों के आधार पर फाकुली पुलिस चौकी गई और भगवानपुर गांव की पुलिया के निकट से 4-5 वर्ष के एक लड़के के शव की बरामदगी के बारे में पता चला, जहां तारीख 22 अप्रैल, 2006 को भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 201 और 34 के अधीन पुलिस मामला दर्ज किया गया । अन्वेषक अधिकारी ने फाकुली की पुलिस से मृतक लड़के के बनियान और निक्कर की बरामदगी से संबंधित अभिग्रहण सूची और लड़के का फोटो अभिप्राप्त किए । अभि. सा. 8 को फोटो दिखाए जाने पर उसने बच्चे का शव तथा कपड़े विक्की के होने की शनाख्त की । अभि. सा. 12 ने अन्वेषण पूर्ण

होने के पश्चात् पांचों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 364क, 302/34, 120ख और 201 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया । प्रथम अपर सेशन न्यायाधीश, वैशाली, हाज़ीपुर ने अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । अभियुक्त चिंटू सिंह को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन उसकी दोषसिद्धि के लिए मृत्यु दंडादेश दिया गया । अभियुक्तों ने दोषसिद्धि के अधिमत से व्यथित होकर पटना उच्च न्यायालय में दांडिक अपील फाइल की । चिंटू सिंह (अभि. 5) को दिए गए मृत्यु दंडादेश की पुष्टि के लिए राज्य ने 2008 का मृत्यु निर्देश मामला फाइल किया । उच्च न्यायालय ने तारीख 11 अक्तूबर, 2010 के आक्षेपित सामान्य निर्णय द्वारा अभियुक्तों द्वारा फाइल की गई अपीलें खारिज कर दीं और तद्द्वारा अभि. 1, अभि. 3 से अभि. 5 की दोषसिद्धि और अधिरोपित दंडादेश की पुष्टि की । उच्च न्यायालय ने चिंटू सिंह (अभि. 5) को दिए गए मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में परिवर्तित कर दिया । उच्च न्यायालय ने 2008 की दांडिक अपील (खंड न्यायपीठ) सं. 249 में द्वितीय अभियुक्त संजीत के अन्यत्र होने के प्रतिरक्षा अभिवाक् को स्वीकार करते हुए दोषमुक्त कर दिया । सिद्धदोष अभियुक्तों ने उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल कीं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें खारिज और मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – रूबी कुमारी (अभि. सा. 2) के साक्ष्य के साथ-साथ सुनील कुमार (अभि. सा. 8) के साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह सिद्ध होता है कि अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 3) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 5) ने अभि. सा. 8 के पुत्र विक्की का व्यपहरण किया और इत्तिलाकर्ता अभि. सा. 8 ने फिरौती की रकम के रूप में उनको 1,05,000/-रुपए संदत्त किए । अभि. सा. 2 के साक्ष्य के आधार पर निचले न्यायालयों ने ठीक ही यह समवर्ती निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं कि अभियोजन पक्ष ने यह सिद्ध किया है कि मृतक लड़का विक्की अंतिम बार अभियुक्त चिंटू सिंह और बिरेन्द्र भगत के साथ देखा गया था । अभियुक्तों को यह स्पष्टीकरण देना चाहिए था कि कैसे और कब वे मृतक बालक विक्की के सहचर्य से अलग हुए थे । अभियुक्तों की ओर से कतई कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है, जो कि अभियुक्त चिंटू सिंह और बिरेन्द्र भगत के विरुद्ध एक ठोस प्रतिकूल परिस्थिति है जिससे यह उपदर्शित होता है कि वे अपराध के लिए उत्तरदायी हैं । इस बात की पुष्टि अभि. सा. 8 के साक्ष्य से भी होती है जिसने यह कथन किया कि जब वह बिरेन्द्र भगत की झोपड़ी के निकट था तब अभियुक्त सं. 3 और 5 ने उसके साइकिल के कैरियर के नीचे रखे

धन को खींचकर निकाला था । चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) के कथन के आधार पर अन्वेषक अधिकारी रीटा कुमारी (अभि. सा. 12) फाकुली पुलिस चौकी गई और यह पता चला कि तारीख 22 अप्रैल, 2006 को भगवानपुर-बहादुरपुर सड़क के बीचों-बीच पुलिया के नीचे से एक मृत लड़के का शव बरामद हुआ था, जिसकी फाकुली पुलिस चौकी में तारीख 22 अप्रैल, 2006 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और 201 के अधीन पुलिस थाना मामला सं. 128/2006 में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । अभि. सा. 12 ने मृतक लड़के के कपड़े और फोटोग्राफ प्राप्त किए और अभि. सा. 8 ने उन कपड़ों की शनाख्त अपने पुत्र के कपड़ों के रूप में तथा फोटोग्राफ की मृतक लड़के विक्की के फोटोग्राफ होने के रूप में की । पुलिया के नीचे से बरामद मृत लड़के के शव के कपड़ों और फोटोग्राफों की शनाख्त तथा शव पड़ा होने के स्थान के बारे में अभियुक्तों की जानकारी अभियुक्त चिंटू सिंह और बिरेन्द्र भगत के विरुद्ध एक सुदृढ़ प्रतिकूल परिस्थिति है । यह दलील दी गई कि अभियुक्तों को मृतक लड़के विक्की की हत्या से संयोजित करने के लिए कड़ी लुप्त है और पुलिस द्वारा अभिलिखित अभियुक्त चिंटू सिंह और बिरेन्द्र भगत के संस्वीकृति कथन साक्ष्य में ग्राह्य नहीं है और यह बात निचले न्यायालयों द्वारा ध्यान में नहीं रखी गई है । जहां तक भगवानपुर और बहादुरपुर सड़क के बीच बनी पुलिया के नीचे से शव की बरामदगी का संबंध है, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, तारीख 22 अप्रैल, 2006 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और 201 के अधीन पुलिस थाना (फाकुली पुलिस चौकी) मामला सं. 128/2006 में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । यद्यपि अभियुक्त चिंटू सिंह और बिरेन्द्र भगत से अभिलिखित किए गए कथन से ऐसी कोई बरामदगी नहीं हुई थी जो साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन ग्राह्य हो, तो भी उनके कथन से शव के ब्यौरों का प्रकटन हुआ था और पुलिस थाना (फाकुली पुलिस चौकी) मामला सं. 128/2006 में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । यदि अभियुक्तों से कोई कथन अभिलिखित नहीं किया जाता, तो मृतक लड़के का शव पड़ा होने का स्थल अज्ञात रहा होता । जहां तक अभियुक्त चिंटू सिंह और बिरेन्द्र भगत से अभिलिखित किए गए कथन की अग्राह्यता का संबंध है, निस्संदेह, इस कथन से किसी ऐसे तथ्य का प्रकटन नहीं हुआ था, जो साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन ग्राह्य हो । आदर्शतः, अन्वेषक अधिकारी को अभियुक्तों से अभिलिखित किए गए कथन के आधार पर उन्हें अभिकथित घटनास्थल पर ले जाना

चाहिए था जिससे घटनास्थल का प्रकटन होता और ऐसा करने में किया गया लोप अन्वेषण में की एकमात्र खामी है । यदि यह स्वीकार भी कर लिया जाए कि अन्वेषण में कमी है, तो भी इस आधार पर अभियोजन के वृत्तांत पर, जो कि अन्यथा तर्कपूर्ण और विश्वसनीय है, संदेह नहीं किया जा सकता है । (पैरा 16, 17, 18, 19 और 20)

यह सुस्थिर है कि दांडिक विचारणों में अन्वेषण भले ही त्रुटिपूर्ण हो, शेष साक्ष्य की संवीक्षा अन्वेषण में की त्रुटियों के प्रभाव से मुक्त रहकर की जानी चाहिए अन्यथा दांडिक विचारण गिरकर अन्वेषण के स्तर पर आ जाएगा । दांडिक विचारणों को अन्वेषक अधिकारी द्वारा कारित की गई किन्हीं चूकों का शिकार नहीं बनाया जाना चाहिए । अभि. सा. 2 और अभि. सा. 8 के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के उपरांत, निचले न्यायालयों ने ये तर्कपूर्ण और समवर्ती निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं कि चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) ने फिरौती के लिए लड़के विक्की का व्यपहरण किया और उसकी हत्या कर दी और इसलिए चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) की दोषसिद्धि और उन पर अधिरोपित कारावास के दंडादेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है । (पैरा 21 और 23)

सामान्य आशय का प्रत्यक्ष साक्ष्य यदाकदा ही उपलब्ध होता है । अभियुक्तों के ऐसे सामान्य आशय का निष्कर्ष केवल साक्ष्य और मामले के साबित तथ्यों से प्रतीत होने वाली परिस्थितियों से निकाला जा सकता है । रंजीत कुमार राम (अभि. 1) सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए अभि. सा. 8 को, व्यपहरणकर्ताओं अर्थात् चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) से ऐसी कोई मांग करने से पूर्व ही, उत्प्रेरित कर रहा था । रंजीत कुमार राम के कृत्य और साबित परिस्थितियों पर विचार करते हुए, निचले न्यायालयों ने ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि रंजीत कुमार राम का लड़के विक्की का व्यपहरण करने और हत्या कारित करने का सामान्य आशय था और निचले न्यायालयों ने रंजीत कुमार राम (अभि. 1) को भारतीय दंड संहिता की धारा 364क और 302/34 के अधीन ठीक ही दोषसिद्ध किया है । (पैरा 28)

जहां तक संजय महतो (अभि. 4) का संबंध है, वह भी पासवान चौक बाजार में सब्जी विक्रेता है । ये परिस्थितियां होते हुए भी कि उसने भी व्यपहरणकर्ताओं को फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए अभि. सा. 8 को उत्प्रेरित किया था और व्यपहरणकर्ताओं को फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए अभि. सा. 8 के साथ सोनपुर गया था, यह हो

सकता है कि संजय एक सद्भावी सहायक के तौर पर अभि. सा. 8 के साथ गया हो । संजय से न तो कोई बरामदगी की गई थी और न ही उसके विरुद्ध कोई अपराध में आलिप्त करने वाला साक्ष्य है । जहां तक संजय महतो (अभि. 4) का संबंध है, यद्यपि अपराध कारित करने में उसकी अंतर्ग्रस्तता के बारे में मजबूत संदेह हो सकता है, तथापि, संदेह चाहे कितना ही मजबूत क्यों न हो, सबूत का स्थान नहीं ले सकता है । संजय (अभि. 4) के विरुद्ध मामला युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं होता है और उसकी दोषसिद्धि अपास्त किए जाने योग्य है । (पैरा 29)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2011] (2011) 3 एस. सी. सी. 654 :
शंकर सिंह बनाम **झारखंड राज्य और एक अन्य** ; 21

[2010] (2010) 9 एस. सी. सी. 567 :
मुनियाप्पन और अन्य बनाम **तमिलनाडु राज्य** ; 21

[2003] (2003) 10 एस. सी. सी. 414 :
मध्य प्रदेश बनाम **मानसिंह और अन्य** । 21

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : **2011 की दांडिक अपील सं. 1831. (इसके साथ 2013 की दांडिक अपील सं. 1820-1821 और 2013 की दांडिक अपील सं. 1817)**

2008 की दांडिक अपील सं. 268 में पटना उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के तारीख 11 अक्तूबर, 2010 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री अनुपम लाल दास, अनिरुद्ध सिंह, शंकर दिवात और (सुश्री) सुषमा मनचंदा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री अनुज, (सुश्री) शुभ्रा राय, गोपाल सिंह, अभिनव मुखर्जी और (सुश्री) पूर्णिमा कृष्णा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति (श्रीमती) आर. बानुमति ने दिया ।

न्या. (श्रीमती) बानुमति – ये अपीलें 2008 की दांडिक अपील (खंड न्यायपीठ) सं. 268, 357, 451 और 156 में पटना उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 11 अक्तूबर, 2010 को पारित किए गए उस निर्णय और 2008 के मृत्यु निर्देश सं. 6 के विरुद्ध फाइल की गई हैं, जिसमें और जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने पांच वर्ष के लड़के विक्की की हत्या करने के आरोप पर की गई दोषसिद्धि के अधिमत की पुष्टि करते हुए अभियुक्तों द्वारा फाइल की गई अपीलों को खारिज कर दिया तथा चिंटू सिंह (अभियुक्त 5) के मृत्यु दंडोदश को आजीवन कारावास में परिवर्तित करते हुए मृत्यु निर्देश को खारिज कर दिया ।

2. सुनील कुमार सिंह अभि. सा. 8, पासवान चौक में सब्जी विक्रेता ने तारीख 27 फरवरी, 2006 को यह कथन करते हुए एक शिकायत दर्ज कराई कि उसका पांच वर्ष आयु का पुत्र विक्की उसकी (अभि. सा. 8) सब्जी की दुकान के निकट खेल रहा था और विपदग्रस्त लड़के विक्की की सात वर्ष आयु की उसकी बहिन भी उसके साथ खेल रही थी । उस समय दो अनजान व्यक्तियों (जिनकी बाद में चिंटू सिंह, अभियुक्त 5 और बिरेन्द्र भगत, अभियुक्त 3 के रूप में शनाख्त की गई) ने विक्की और अन्य बच्चों को चाकलेट दी और विक्की को यह कहते हुए ले गए कि वे वापस आएंगे और इस लड़के को छोड़ जाएंगे, किंतु लड़का विक्की वापस नहीं आया । तारीख 28 फरवरी, 2006 को की गई उपरोक्त शिकायत के आधार पर हाज़ीपुर टाउन (औद्योगिक क्षेत्र) पुलिस थाना, वैशाली में 2006 का पुलिस थाना मामला सं. 105 दर्ज किया गया । तलाश करने के बावजूद गुम लड़के को ढूंढा नहीं जा सका । पांच-छह दिन पश्चात् रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4), जो उसी बाजार अर्थात् पासवान चौक में सब्जी विक्रेता थे, ने अभि. सा. 8 को कहा कि यदि वह धन दे देगा तो उसका पुत्र वापस आ जाएगा । घटना के लगभग तीन माह पश्चात् तारीख 23 जून, 2006 को अभि. सा. 8 को एक फोन आया और व्यपहरणकर्ताओं ने उसके पुत्र को लौटाने के लिए चार लाख रुपए की फिरौती मांगी, किंतु अभि. सा. 8 ने इस मांग को पूरा करने में अपनी असमर्थता जताई और मांग कम करके दो लाख रुपए कर दी गई । अभि. सा. 8 को तारीख 1 जुलाई, 2006 को एक अन्य फोन आया और फिरौती की अंतिम रकम 1,05,000/- रुपए तय की गई । अभि. सा. 8 को तारीख 3 जुलाई, 2006 को व्यपहरणकर्ताओं से एक अन्य फोन आया और अभि. सा. 8 ने

उनको सूचित किया कि उसने फिरौती की रकम की व्यवस्था कर ली है और अभि. सा. 8 को सोनपुर में बच्छा बाबू के होटल के आगे नए गंडक पुल पर धन लेकर आने के लिए कहा गया । जब अभि. सा. 8 ने अकेले धन लेकर आने में डर लगने की बात जाहिर की तो व्यपहरणकर्ताओं द्वारा उसे अपने पड़ोसी रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) के साथ आने के लिए कहा गया ।

3. अभि. सा. 8 ने फिरौती के लिए धन का संदाय करने के लिए राजेन्द्र चौक, हाजीपुर स्थित बैंक आफ इंडिया के पास अपने बचत बैंक खाते से 80,000/- रुपए निकाले और अभि. सा. 8 ने शेष धन की व्यवस्था अपनी बचत पूंजी और अपने ससुर से उधार लेकर की । अभि. सा. 8 ने तारीख 4 जुलाई, 2006 को फिरौती की रकम एक प्लास्टिक की थैली में लपेटी और इसे एक जूट के थैले में अपनी साइकिल के कैरियर के नीचे रखा और वह रंजीत कुमार (अभि. 1), संजय (अभि. 4) और संजीत (अभि. 2) के साथ व्यपहरणकर्ताओं द्वारा यथा निदेशित स्थान के लिए रवाना हुआ । जब वे नए गंडक पुल पर पहुंचे तो संजीत (अभि. 2) अभि. सा. 8 के साइकिल से उतरा और सड़क की बाईं तरफ एक झोपड़ी में गया और अभि. सा. 8 उसके पीछे-पीछे गया । उस समय दो व्यक्ति बाहर आए और अभि. सा. 8 की साइकिल के कैरियर से धन निकाल लिया । संजीत (अभि. 2) ने अभि. सा. 8 को सूचित किया कि उसका जीजा बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) इस झोपड़ी में रहता है और अभि. सा. 8 को सूचित किया गया कि उसके पुत्र को सायंकाल तक लौटा दिया जाएगा । धन का संदाय करने के पश्चात् भी लड़का नहीं लौटाया गया । लड़के के बारे में पूछताछ करने के लिए अभि. सा. 8 झोपड़ी में गया और स्थानीय लोगों से पता चला कि बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) एक अपराधी है और दूसरे व्यक्ति की शनाख्त चिंटू सिंह (अभि. 5) के रूप में हुई । अभि. सा. 8 ने तारीख 16 अगस्त, 2006 को अन्वेषक अधिकारी रीटा कुमारी (अभि. सा. 12) को अभियुक्तों के नाम के साथ-साथ व्यपहरणकर्ताओं द्वारा की गई मांग और धन का संदाय करने के बारे में सूचित किया ।

4. अन्वेषक अधिकारी (अभि. सा. 12) ने सोनपुर में छापा मारा और रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजीत (अभि. 2) को गिरफ्तार किया और उनके कथन अभिलिखित किए । अन्वेषक अधिकारी ने रंजीत कुमार राम (अभि. 1) के कथन के आधार पर उसके मकान से एक पांच सौ रुपए का करेंसी नोट बरामद किया, जिस पर सुनील कुमार अभि. सा. 8 के

हस्तलेख में हरी स्याही से उसका नाम लिखा हुआ था और यह नोट अभिगृहीत वस्तुओं की सूची (प्रदर्श 18) में अभिलिखित है । उसके पश्चात्, अभियुक्त संजय (अभि. 4), बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) और चिंटू सिंह (अभि. 5) को भी गिरफ्तार किया गया और उनके कथन अभिलिखित किए गए । अन्वेषक अधिकारी अभि. सा. 12 इन कथनों के आधार पर फाकुली पुलिस चौकी गई और भगवानपुर गांव की पुलिया के निकट से 4-5 वर्ष के एक लड़के के शव की बरामदगी के बारे में पता चला, जहां तारीख 22 अप्रैल, 2006 को भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 201 और 34 के अधीन पुलिस थाना (फाकुली चौकी) मामला सं. 128/2006 दर्ज किया गया । अभि. सा. 12 ने फाकुली की पुलिस से मृतक लड़के के बनियान और निक्कर की बरामदगी से संबंधित अभिग्रहण सूची और लड़के का फोटो अभिप्राप्त किए । अभि. सा. 8 को फोटो दिखाए जाने पर उसने बच्चे का शव तथा कपड़े विक्की के होने की शनाख्त की । अभि. सा. 12 ने अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् पांचों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 364क, 302/34, 120ख और 201 के अधीन आरोप पत्र फाइल किया ।

5. अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए चौदह साक्षियों की परीक्षा कराई और दस्तावेज तथा तात्विक वस्तुएं प्रदर्शित कीं । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन प्रश्न करने पर अभियुक्तों ने अपराध में आलिप्त करने वाले साक्ष्य और उनके विरुद्ध प्रस्तुत की गई परिस्थितियों से इनकार किया । प्रतिरक्षा पक्ष ने सात प्रतिरक्षा साक्षियों की परीक्षा कराई ।

6. प्रथम अपर सेशन न्यायाधीश, वैशाली, हाज़ीपुर ने तारीख 24/28 जनवरी, 2008 के निर्णय द्वारा अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) को भारतीय दंड संहिता की धारा 364क के अधीन दोषसिद्ध किया और 10,000/- रुपए के जुर्माने सहित कठोर आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । चिंटू सिंह (अभि. 5) को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन उसकी दोषसिद्धि के लिए मृत्यु दंडादेश दिया गया । संजीत (अभि. 2), रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) को भारतीय दंड संहिता की धारा 364क/120ख के अधीन दोषसिद्ध किया गया और कठोर आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया और प्रत्येक पर 10,000/- रुपए का जुर्माना, व्यतिक्रम खंड सहित, अधिरोपित किया गया । इसके अतिरिक्त, रंजीत कुमार राम

(अभि. 1), संजय (अभि. 4) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया और प्रत्येक को कठोर आजीवन कारावास भुगतने के साथ-साथ 10,000/- रुपए के जुर्माने से, व्यतिक्रम खंड सहित, दंडादिष्ट किया गया । बिरेन्द्र भगत (अभि. 3), रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) पर अधिरोपित दंडादेशों को साथ-साथ चलने का आदेश किया गया ।

7. अभियुक्तों ने दोषसिद्धि के अधिमत से व्यथित होकर पटना उच्च न्यायालय में दांडिक अपील सं. 268/2008, 357/2008, 451/2008 और 15/2008 फाइल कीं । चिंटू सिंह (अभि. 5) को दिए गए मृत्यु दंडादेश की पुष्टि के लिए राज्य ने 2008 का मृत्यु निर्देश मामला सं. 6/2008 फाइल किया । उच्च न्यायालय ने तारीख 11 अक्तूबर, 2010 के आक्षेपित सामान्य निर्णय द्वारा अभियुक्तों द्वारा फाइल की गई अपीलें खारिज कर दीं और तद्द्वारा अभि. 1, अभि. 3 से अभि. 5 की दोषसिद्धि और अधिरोपित दंडादेश की पुष्टि की । उच्च न्यायालय ने चिंटू सिंह (अभि. 5) को दिए गए मृत्यु दंडादेश को आजीवन कारावास में परिवर्तित कर दिया । उच्च न्यायालय ने 2008 की दांडिक अपील (खंड न्यायपीठ) सं. 249 में द्वितीय अभियुक्त-संजीत के अन्यत्र होने के प्रतिरक्षा अभिवाक् को स्वीकार करते हुए दोषमुक्त कर दिया । अपीलार्थियों ने इन अपीलों में उन पर अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश के अधिमत की सत्यता को चुनौती दी है ।

8. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि मुख्य साक्षी अभि. सा. 8 की पुत्री रूबी कुमारी (अभि. सा. 2), आयु सात वर्ष, ने रंजीत कुमार राम (अभि. 1) को आलिप्त नहीं किया है और उसने अपने कथन में केवल बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) की शनाख्त की है और अभि. सा. 2 के एक बाल साक्षी होने के कारण उसके एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि नहीं की जा सकती है । यह दलील दी गई कि सुनील कुमार सिंह (अभि. सा. 8) ने रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) से अभिकथित फिरौती का संदाय करने के लिए उसके साथ चलने का स्वयं अनुरोध किया था और केवल इस कारण कि अभि. 1, अभि. 2 और अभि. 4 अभि. सा. 8 के साथ गए थे, उन्हें मिथ्या रूप से आलिप्त किया जा रहा है । चिंटू सिंह (अभि. 5) की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि शनाख्त परीक्षण परेड में अभि. सा. 2 ने चिंटू सिंह (अभि. 5) की शनाख्त नहीं की थी और खुले न्यायालय में उसके द्वारा की गई अभि. 5 की शनाख्त अविश्वसनीय है और निचले

न्यायालयों ने अभियोजन के पक्षकथन की खामियों का उचित मूल्यांकन किए बिना अभियुक्तों को दोषसिद्ध करके गलती की है ।

9. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी-रूबी कुमारी (अभि. सा. 2) ने शनाख्त परीक्षण परेड में अभियुक्त बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) की समाधानप्रद रूप से शनाख्त की थी और जब इस साक्षी की न्यायालय में परीक्षा की गई तो उसने चिंटू सिंह (अभि. 5) की शनाख्त की थी । यह दलील दी गई कि अभि. सा. 8 ने स्पष्ट रूप से यह अभिसाक्ष्य दिया कि रंजीत कुमार राम (अभि. 1), संजय (अभि. 4) ने बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) और चिंटू सिंह (अभि. 5) के साथ षड्यंत्र करके उसे फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए उत्प्रेरित किया, यहां तक कि उस समय ऐसी कोई मांग नहीं की गई थी, जिससे अपराध कारित करने में उनकी अंतर्ग्रस्तता स्पष्ट रूप से दर्शित होती है । यह दलील दी गई कि व्यपहरणकर्ताओं ने अभि. सा. 8 को रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) को साथ लेकर आने के लिए कहा था, जिससे अपराध कारित करने में अभियुक्त रंजीत कुमार राम और संजय की सह-अपराधिता साबित होती है और निचले न्यायालयों ने साक्ष्य का उचित मूल्यांकन करके अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34, 364क, 120ख और 201 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करके ठीक किया है और निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित किए गए समवर्ती निष्कर्षों में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

10. हमने विरोधी दलीलों पर विचार किया और आक्षेपित निर्णय, साक्ष्य और अभिलेख पर की सामग्री का परिशीलन किया ।

11. सुनील कुमार सिंह (अभि. सा. 8) और उसकी पत्नी नीलम देवी (अभि. सा. 6) पासवान चौक बाजार, हाज़ीपुर में सब्जी विक्रेता हैं । रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजीत (अभि. 2) (जिसे दोषमुक्त किया गया है) भाई-भाई हैं और वे भी उसी बाजार में सब्जी विक्रेता हैं जिनकी अभि. सा. 8 की दुकान के निकट ही दुकान है और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) उनका जीजा है । अभि. सा. 6 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि अभियुक्त सं. 1 और उसका भाई संजीत उनसे ईर्ष्या रखते थे क्योंकि अभि. सा. 8 का कारबार अच्छा था । यद्यपि ईर्ष्या रखने की बात को हेतु के रूप में बताया गया है, किंतु यह प्रतीत होता है कि विपदग्रस्त लड़के विक्की की हत्या मुख्य रूप से फिरौती के लिए व्यपहरण के कारण की गई थी ।

12. मुख्य साक्षी रूबी कुमारी की आयु सात वर्ष है और मृतक लड़के विक्की की बहिन है । अभि. सा. 2 ने अभिसाक्ष्य दिया कि घटना की तारीख अर्थात् 27 फरवरी, 2006 को अभि. सा. 2 उस स्थान के आसपास खेल रही थी जहां अभि. सा. 8 सब्जी बेच रहा था । अभि. सा. 2 ने यह कथन किया कि दो व्यक्ति एक मोटरसाइकिल पर आए और बच्चों को, अभि. सा. 8 के पुत्र विक्की सहित, चाकलेट दी और उसे अपने साथ ले गए । अभि. सा. 2 ने यह कथन किया कि जिस व्यक्ति ने उसके भाई को उठाया, उसने यह कहा कि वह वापस आएगा और उसके भाई को छोड़ जाएगा । रूबी कुमारी (अभि. सा. 2) ने शनाख्त परीक्षण परेड के दौरान बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) की शनाख्त की और उसने न्यायालय में चिंटू सिंह (अभि. 5) की उस व्यक्ति के रूप में शनाख्त की जिसने उसे और उसके भाई को चाकलेट दी थी और उसके भाई को ले गया था । गहन प्रतिपरीक्षा के बावजूद अभि. सा. 2 अपनी संपूर्ण प्रतिपरीक्षा के दौरान अडिग रही ।

13. चिंटू सिंह (अभि. 5) की ओर से यह दलील दी गई कि अभि. सा. 2 का परिसाक्ष्य विश्वसनीय नहीं है क्योंकि उसने शनाख्त परीक्षण परेड के दौरान चिंटू सिंह की शनाख्त नहीं की थी और अभि. सा. 2 द्वारा न्यायालय में की गई चिंटू सिंह की शनाख्त विश्वसनीय नहीं है । अभियुक्तों की गिरफ्तारी के कुछ पश्चात् इस साक्षी द्वारा की गई उनकी शनाख्त वास्तव में महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे साक्षियों के साक्ष्य की संपुष्टि होने के अतिरिक्त अभियोजन के पक्षकथन में विश्वास उत्पन्न होता है । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, रूबी कुमारी (अभि. सा. 2) ने विचारण के दौरान खुले न्यायालय में चिंटू सिंह (अभि. 5) की शनाख्त की थी और उसने कारागार में आयोजित शनाख्त परीक्षण परेड में उसकी शनाख्त नहीं की थी । सामान्यतः, न्यायालय पहली बार न्यायालय में की गई शनाख्त पर ज्यादा विश्वास नहीं करते हैं, किंतु अभियुक्त की पहली बार न्यायालय में की गई शनाख्त अनुज्ञेय है । किंतु उक्त सिद्धांत प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखकर अपनाया जाना चाहिए । जब अभि. सा. 2 की न्यायालय में परीक्षा की गई, तब विचारण न्यायालय ने, जिसके पास अभि. सा. 2 के हावभाव को देखने और अवलोकन करने का अवसर था, चिंटू सिंह (अभि. 5) की शनाख्त करते हुए दिए गए उसके बयान को विश्वसनीय पाया और हमें भिन्न दृष्टिकोण अपनाने का कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता है ।

14. घटना के समय तथा न्यायालय में अभिसाक्ष्य देने के समय रूबी कुमारी (अभि. सा. 2) की आयु केवल सात वर्ष थी । बाल साक्षी का साक्ष्य और उसकी विश्वसनीयता प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करती है । किसी बाल साक्षी के साक्ष्य का अवधारण करते समय न्यायालय को जो एकमात्र सावधानी ध्यान में रखनी चाहिए वह यह है कि साक्षी का विश्वसनीय होना आवश्यक है । न्यायालय में अभि. सा. 2 की साक्षी के रूप में परीक्षा करने से पूर्व न्यायिक मजिस्ट्रेट (अभि. सा. 13) द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन उसका कथन अभिलिखित किया गया था । अभि. सा. 13 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि उसने साक्षी रूबी कुमारी (अभि. सा. 2) की समझ की जांच की थी और उसकी समझ के बारे में समाधान होने के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन उसका कथन अभिलिखित किया गया था । विचारण के दौरान न्यायालय में जब अभि. सा. 2 की साक्षी के रूप में परीक्षा की गई, तब विचारण न्यायाधीश ने भी बाल साक्षी रूबी कुमारी (अभि. सा. 2) से आरंभिक प्रश्न पूछे थे और यह समाधान हो गया था कि वह उससे पूछे गए प्रश्नों को समझने में समर्थ है । जब विचारण न्यायालय ने अभि. सा. 2 के विवेक के बारे में अभिनिश्चय कर लिया था और यह राय बनाई थी कि अभि. सा. 2-रूबी कुमारी साक्ष्य देने के लिए सक्षम है और उसके पश्चात् उसका साक्ष्य अभिलिखित किया था, तब हमें अभि. सा. 2 के परिसाक्ष्य को अविश्वसनीय मानने का कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता है । अभि. सा. 2 हालांकि एकमात्र साक्षी है, फिर भी निचले न्यायालयों ने समवर्ती निष्कर्षों द्वारा उसके साक्ष्य को अचुनौतीपूर्ण पाया है और हम कोई भिन्न दृष्टिकोण अपनाने का कोई आधार नहीं पाते हैं ।

15. अभि. सा. 8 ने तारीख 4 जुलाई, 2006 को फिरौती की रकम एक प्लास्टिक की थैली में लपेटी और इसे एक टाट के थैले में अपनी साइकिल के कैरियर के नीचे रखा और रंजीत कुमार राम (अभि. 1), संजीत (अभि. 2) और संजय (अभि. 4) को साथ लेकर वह व्यपहरणकर्ताओं को फिरौती की रकम देने के लिए गया । जब वे नए गंडक पुल पर पहुंचे तो अभियुक्त-संजीत (अभि. 2) साइकिल से उतरा और सड़क की दाईं तरफ झोपड़ी में गया और अभि. सा. 8 उसके पीछे-पीछे गया । उस समय दो व्यक्ति झोपड़ी से बाहर आए और अभि. सा. 8 की साइकिल के कैरियर से धन ले लिया । अभि. सा. 8 ने शनाख्त परीक्षण परेड में चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र सिंह (अभि. 3) की उन

व्यक्तियों के रूप में शनाख्त की जिन्होंने उसके साइकिल के कैरियर से फिरौती की रकम ली थी । अभि. सा. 8 के साक्ष्य से चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) की अपराध में सह-अपराधिता के बारे में अभि. सा. 2 के साक्ष्य की संपुष्टि होती है ।

16. रूबी कुमारी (अभि. सा. 2) के साक्ष्य के साथ-साथ सुनील कुमार (अभि. सा. 8) के साक्ष्य से स्पष्ट रूप से यह सिद्ध होता है कि अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) ने अभि. सा. 8 के पुत्र विक्की का व्यपहरण किया और इत्तिलाकर्ता अभि. सा. 8 ने फिरौती की रकम के रूप में उनको 1,05,000/- रुपए संदत्त किए । अभि. सा. 2 के साक्ष्य के आधार पर निचले न्यायालयों ने ठीक ही यह समवर्ती निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं कि अभियोजन पक्ष ने यह सिद्ध किया है कि मृतक लड़का विक्की अंतिम बार अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) के साथ देखा गया था । अभियुक्तों को यह स्पष्टीकरण देना चाहिए था कि कैसे और कब वे मृतक बालक विक्की के सहचर्य से अलग हुए थे । अभियुक्तों की ओर से कतई कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है, जो कि अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) के विरुद्ध एक ठोस प्रतिकूल परिस्थिति है जिससे यह उपदर्शित होता है कि वे अपराध के लिए उत्तरदायी हैं । इस बात की पुष्टि अभि. सा. 8 के साक्ष्य से भी होती है जिसने यह कथन किया कि जब वह बिरेन्द्र भगत की झोपड़ी के निकट था तब अभियुक्त सं. 3 और 5 ने उसके साइकिल के कैरियर के नीचे रखे धन को खींचकर निकाला था ।

17. चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) के कथन के आधार पर अन्वेषक अधिकारी रीटा कुमारी (अभि. सा. 12) फाकुली पुलिस चौकी गई और यह पता चला कि तारीख 22 अप्रैल, 2006 को भगवानपुर-बहादुरपुर सड़क के बीचोंबीच पुलिया के नीचे से एक मृत लड़के का शव बरामद हुआ था, जिसकी फाकुली पुलिस चौकी में तारीख 22 अप्रैल, 2006 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और 201 के अधीन पुलिस थाना मामला सं. 128/2006 में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । अभि. सा. 12 को मृतक लड़के के कपड़े (सामग्री प्रदर्श 11) और फोटोग्राफ प्राप्त किए और अभि. सा. 8 ने उन कपड़ों (सामग्री प्रदर्श 11) की शनाख्त अपने पुत्र के कपड़ों के रूप में तथा फोटोग्राफ (प्रदर्श 3 और 3/1) की मृतक लड़के विक्की के फोटोग्राफ होने के रूप में की । पुलिया के नीचे से बरामद मृत लड़के के शव के कपड़ों की शनाख्त और फोटोग्राफ

की शनाख्त तथा शव पड़ा होने के स्थान के बारे में अभियुक्त की जानकारी अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) के विरुद्ध एक सुदृढ़ प्रतिकूल परिस्थिति है ।

18. अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और अभियुक्त बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अभियुक्तों के अभिकथित प्रकटन कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 के विरुद्ध हैं जिसमें प्रकटन कथन को अग्राह्य बनाया गया है और अभियुक्तों से अभिलिखित किए गए कथन से किसी ऐसे तथ्य का प्रकटन नहीं हुआ है जिससे कि यह साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन ग्राह्य हो सके और पुलिस थाना (फाकुली पुलिस चौकी) मामला सं. 128/2006 के संबंध में पुलिया के नीचे से बरामद लड़के के शव से अभियुक्तों को संयोजित करने वाली कोई बात नहीं है । यह दलील दी गई कि अभियुक्तों को मृतक लड़के विक्की की हत्या से संयोजित करने के लिए कड़ी लुप्त है और पुलिस द्वारा अभिलिखित अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) के संस्वीकृति कथन साक्ष्य में ग्राह्य नहीं हैं और यह बात निचले न्यायालयों द्वारा ध्यान में नहीं रखी गई है ।

19. जहां तक भगवानपुर और बहादुरपुर सड़क के बीच बनी पुलिया के नीचे से शव की बरामदगी का संबंध है, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, तारीख 22 अप्रैल, 2006 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और 201 के अधीन पुलिस थाना (फाकुली पुलिस चौकी) मामला सं. 128/2006 में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । यद्यपि अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) से अभिलिखित किए गए कथन से ऐसी कोई बरामदगी नहीं हुई थी जो साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन ग्राह्य हो, तो भी उनके कथन से शव के ब्यौरों का प्रकटन हुआ था और पुलिस थाना (फाकुली पुलिस चौकी) मामला सं. 128/2006 में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी । यदि अभियुक्तों से कोई कथन अभिलिखित नहीं किया जाता, तो मृतक लड़के का शव पड़ा होने का स्थल अज्ञात रहा होता ।

20. जहां तक अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) से अभिलिखित किए गए कथन की अग्राह्यता का संबंध है, निस्संदेह, इस कथन से किसी ऐसे तथ्य का प्रकटन नहीं हुआ था, जो साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन ग्राह्य हो । आदर्शतः, अन्वेषक अधिकारी को अभियुक्तों से अभिलिखित किए गए कथन के आधार पर

उन्हें अभिकथित घटनास्थल पर ले जाना चाहिए था जिससे घटनास्थल का प्रकटन होता और ऐसा करने में किया गया लोप अन्वेषण में की एकमात्र खामी है । यदि यह स्वीकार भी कर लिया जाए कि अन्वेषण में कमी है, तो भी इस आधार पर अभियोजन के वृत्तांत पर, जो कि अन्यथा तर्कपूर्ण और विश्वसनीय है, संदेह नहीं किया जा सकता है ।

21. यह सुस्थिर है कि दांडिक विचारणों में अन्वेषण भले ही त्रुटिपूर्ण हो, शेष साक्ष्य की संवीक्षा अन्वेषण में की त्रुटियों के प्रभाव से मुक्त रहकर की जानी चाहिए अन्यथा दांडिक विचारण गिरकर अन्वेषण के स्तर पर आ जाएगा । दांडिक विचारणों को अन्वेषक अधिकारी द्वारा कारित की गई किन्हीं चूकों का शिकार नहीं बनाया जाना चाहिए । **मध्य प्रदेश** बनाम **मानसिंह और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि भले ही अन्वेषण में कमियां हों, यह अभियोजन के वृत्तांत को अविश्वसनीय मानने का आधार नहीं हो सकता है । **शंकर सिंह** बनाम **झारखंड राज्य और एक अन्य**[2] और **मुनियाप्पन और अन्य** बनाम **तमिलनाडु राज्य**[3] वाले मामलों में इसी मत को दोहराया गया था ।

22. हम अभियुक्त चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) की ओर से दी गई इन दलीलों से प्रभावित नहीं हैं कि पुल के नीचे पाए गए शव से अभियुक्तों को संयोजित करने के लिए कुछ नहीं है । हो सकता है कि कुछ मामलों में अपराध-सार की खोज या बरामद किया जाना संभव न हो । यदि अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए शव की बरामदगी होना अत्यंत आवश्यक हो, तो बहुत से मामलों में अपराधी दंडित किए बिना ही छूट जाएंगे क्योंकि अभियुक्त ऐसी व्यवस्था करना चाहेगा कि शव नष्ट कर दिया जाए या बरामद ही न हो । शव की बरामदगी में की गई किसी चूक या शव से संबंधित किसी लुप्त कड़ी का फायदा अभियुक्त को नहीं मिलेगा ।

23. अभि. सा. 2 और अभि. सा. 8 के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के उपरांत, निचले न्यायालयों ने ये तर्कपूर्ण और समवर्ती निष्कर्ष अभिलिखित किए हैं कि चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) ने फिरौती के लिए लड़के विक्की का व्यपहरण किया और उसकी हत्या कर दी और

---

[1] (2003) 10 एस. सी. सी. 414.

[2] (2011) 3 एस. सी. सी. 654.

[3] (2010) 9 एस. सी. सी. 567.

इसलिए चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) की दोषसिद्धि और उन पर अधिरोपित कारावास के दंडादेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है ।

24. **रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) की दोषसिद्धि** – मृतक लड़के विक्की के क्रमशः माता और पिता, अभि. सा. 6 नीलम देवी और अभि. सा. 8 सुनील कुमार सिंह पासवान चौक बाजार में सब्जी विक्रेता हैं । रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) भी उसी बाजार में सब्जी बेचते थे । अभि. सा. 6 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) अभि. सा. 6 और अभि. सा. 8 से ईर्ष्या रखते थे क्योंकि उनकी सब्जी की दुकानों में उनका कारबार अच्छा था । अभि. सा. 8 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि उसे रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) ने फिरौती के धन का संदाय करने और अपने पुत्र को छुड़ाने के लिए उत्प्रेरित किया था यहां तक कि व्यपहरणकर्ताओं अर्थात् चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) द्वारा तब तक ऐसी कोई मांग भी नहीं की गई थी । अनेक फोन कॉल के पश्चात् फिरौती की मांग कम करके 1,05,000/- रुपए की गई थी और अभि. सा. 8 को रकम परिदत्त करने के लिए कहा गया था । अभि. सा. 8 ने स्पष्ट रूप से यह कथन किया कि जब उसने अकेला जाने में डर लगने की बात जाहिर की तो व्यपहरणकर्ताओं ने उसे फोन पर यह कहा कि अपने पड़ोसियों रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) को साथ ले आए । अभि. सा. 8 ने राजेन्द्र चौक में स्थित बैंक आफ इंडिया में अपने बचत खाते से 80,000/- रुपए निकाले और प्रदर्श 5 अभि. सा. 8 की बचत बैंक पासबुक है । अभि. सा. 8 ने अपने ससुर सकल महतो से 20,000/- रुपए उधार लिए और 5,000/- रुपए पहले ही उसके पास थे । अभि. सा. 8 ने अपने साक्ष्य में यह कथन किया कि जिस रकम की उसने व्यवस्था की थी उसमें पांच-पांच सौ के नोट थे और कुछ करंसी नोटों पर उसने अपने हस्ताक्षर किए थे । अभि. सा. 8 ने यह कथन किया कि उसने फिरौती की रकम एक प्लास्टिक की थैली में लपेटी और इसे अपने साइकिल के कैरियर के नीचे एक जूट के थैले में रखा और जब वे नए गंडक पुल पर पहुंचे तो संजीत (अभि. 2) उसके साइकिल से उतरा और सड़क के बाईं तरफ झोपड़ी में गया और जब अभि. सा. 8 उसके पीछे-पीछे गया तब चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) ने अभि. सा. 8 के साइकिल से जूट के थैले में रखे धन

को निकाल लिया । केवल रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और संजय (अभि. 4) को जानकारी थी कि साइकिल के कैरियर में जूट के थैले में धन रखा है । अभि. 5 और अभि. 3 के आचरण से यह प्रतीत होता है कि मानो उन्हें अभि. सा. 8 के साइकिल के कैरियर में जूट के थैले में धन रखे होने की पहले से ही जानकारी थी और यह बात केवल अभियुक्तों के मस्तिष्कों के पूर्व मिलन को उपदर्शित करती है ।

25. बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) रंजीत कुमार राम (अभि. 1) का जीजा है । यदि रंजीत कुमार राम (अभि. 1) की अपराध कारित करने में सह-अपराधिता नहीं होती, तो पहली बार यह पता चलने पर कि उसका जीजा बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) व्यपहरण करने में अंतर्वलित है, तो रंजीत कुमार राम (अभि. 1) को अवश्य गहरा सदमा पहुंचा होता और वह अपने जीजा बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) से अवश्य यह पूछताछ करता कि उसने अपने पड़ोसी के बेटे का व्यपहरण करने का ऐसा घिनौना कार्य क्यों किया ? किंतु रंजीत कुमार राम (अभि. 1) ने इस स्थिति में कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाई और चुप रहा । अभि. सा. 8 के पुत्र का व्यपहरण करने के अपने जीजा के कृत्य के प्रति कोई प्रतिक्रिया न दिखाने का उसका जो आचरण है, वह स्वाभाविक मानवीय आचरण के अनुरूप नहीं है । अभियुक्त 1 के इस आचरण के साथ-साथ इस साक्ष्य से कि वह अभि. सा. 8 को इस बात के लिए उत्प्रेरित कर रहा था कि वह व्यपहरणकर्ताओं को धन का संदाय करके अपने पुत्र को छुड़ा ले, यह प्रतिरोध्य निष्कर्ष निकलता है कि अभियुक्त रंजीत कुमार राम (अभि. 1) ने बच्चे का व्यपहरण करने और उसकी हत्या कारित करने में अभियुक्त सं. 3 और 5 के सामान्य आशय में भाग लिया था ।

26. रंजीत कुमार राम (अभि. 1) के मकान से पांच सौ रुपए के करंसी नोट (प्रदर्श 1) की बरामदगी अपराध कारित करने में उसकी सह-अपराधिता को मजबूत करने वाली एक अन्य कड़ी है । अभियुक्त रंजीत कुमार राम (अभि. 1) के कथन के अनुसरण में अभियुक्त सं. 1 के मकान से 500/- रुपए का करंसी नोट, प्रदर्श 1, जिस पर अभि. सा. 8 सुनील कुमार सिंह के हरी स्याही में हस्ताक्षर हैं, अभिग्रहण सूची (प्रदर्श 18) के अधीन अभिगृहीत किया गया था । पड़ोसिन, अभि. सा. 4 राज बंसी देवी ने अभियुक्त सं. 1 के मकान से 500/- रुपए के करंसी नोट (प्रदर्श 1) की बरामदगी के बारे में कथन किया है और अभि. सा. 8 ने करंसी नोट (प्रदर्श 1) पर अपने हस्ताक्षरों की शनाख्त की है । रंजीत कुमार राम (अभि. 1) के

मकान से फिरौती की रकम के एक भाग की बरामदगी उसके विरुद्ध, उसकी दोषिता को इंगित करते हुए, पारिस्थितिक साक्ष्य की शृंखला को पूर्ण करने वाली एक अवधारणीय कड़ी है ।

27. अभियुक्त रंजीत कुमार राम (अभि. 1) का प्रतिरक्षा साक्ष्य यह है कि घटना से कुछ समय पूर्व उसके और अभि. सा. 8 के बीच कहा-सुनी हुई थी और उस समय अभि. सा. 8 सुनील कुमार सिंह ने यह कथन किया था कि वह उसे मिथ्या रूप से किसी आपराधिक मामले में फंसाएगा । प्रतिरक्षा पक्ष के अभिवाक् को साबित करने के लिए प्रतिरक्षा साक्षी बैजू शर्मा और बुधन पासवान की प्रति. सा. 4 और 5 के रूप में परीक्षा कराई गई थी । प्रतिरक्षा पक्ष का यह अभिवाक् कि अभि. सा. 8 ने रंजीत कुमार राम (अभि. 1) और उसके परिवार के सदस्यों को अपने पुत्र के व्यपहरण और हत्या के अपराध में मिथ्या रूप से फंसाया है, तर्कहीन है और विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही नामंजूर किया गया है ।

28. सामान्य आशय का प्रत्यक्ष साक्ष्य यदाकदा ही उपलब्ध होता है । अभियुक्तों के ऐसे सामान्य आशय का निष्कर्ष केवल साक्ष्य और मामले के साबित तथ्यों से प्रतीत होने वाली परिस्थितियों से निकाला जा सकता है । रंजीत कुमार राम (अभि. 1) सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए अभि. सा. 8 को, व्यपहरणकर्ताओं अर्थात् चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) से ऐसी कोई मांग करने से पूर्व ही, उत्प्रेरित कर रहा था । रंजीत कुमार राम के कृत्य और साबित परिस्थितियों पर विचार करते हुए, निचले न्यायालयों ने ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि रंजीत कुमार राम का लड़के विक्की का व्यपहरण करने और हत्या कारित करने का सामान्य आशय था और निचले न्यायालयों ने रंजीत कुमार राम (अभि. 1) को भारतीय दंड संहिता की धारा 364क और 302/34 के अधीन ठीक ही दोषसिद्ध किया है ।

29. जहां तक संजय महतो (अभि. 4) का संबंध है, वह भी पासवान चौक बाजार में सब्जी विक्रेता है । ये परिस्थितियां होते हुए भी कि उसने भी व्यपहरणकर्ताओं को फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए अभि. सा. 8 को उत्प्रेरित किया था और व्यपहरणकर्ताओं को फिरौती की रकम का संदाय करने के लिए अभि. सा. 8 के साथ सोनपुर गया था, यह हो सकता है कि संजय एक सद्भावी सहायक के तौर पर अभि. सा. 8 के साथ गया हो । संजय से न तो कोई बरामदगी की गई थी और न ही उसके विरुद्ध कोई अपराध में आलिप्त करने वाला साक्ष्य है । जहां तक

संजय महतो (अभि. 4) का संबंध है, यद्यपि अपराध कारित करने में उसकी अंतर्ग्रस्तता के बारे में मजबूत संदेह हो सकता है, तथापि, संदेह चाहे कितना ही मजबूत क्यों न हो, सबूत का स्थान नहीं ले सकता है । संजय (अभि. 4) के विरुद्ध मामला युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं होता है और उसकी दोषसिद्धि अपास्त किए जाने योग्य है ।

30. **दांडिक अपील सं. 1831/2000, 1817/2013 और 1821/2013** – रंजीत कुमार राम (अभि. 1), चिंटू सिंह (अभि. 5) और बिरेन्द्र भगत (अभि. 3) द्वारा फाइल की गई ये अपीलें खारिज की जाती हैं ।

31. **दांडिक अपील सं. 1820/2013** – संजय (अभि. 4) की दोषसिद्धि अपास्त की जाती है और यह अपील मंजूर की जाती है । उसे आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है और यदि किसी अन्य मामले में आवश्यकता न हो, तो उसे तुरंत रिहा करने का आदेश किया जाता है ।

अपीलें खारिज और मंजूर की गईं ।

जस.

———————